CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

10.2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

योगवासिष्ठ रामायण

(प्रथम भाग)

{ वैराग्य प्रकरण, मुमुक्षु प्रकरण एवं उत्पत्ति प्रकरण }

*

रचनाकार
जगदीशचन्द्र मिश्र

*

प्रकाशक
साहित्यकार सहयोगी प्रकाशन
भदैनी, वाराणसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

* योगवासिष्ठ रामायण
(प्रथम भाग)

* रचनाकार
जगदीशचन्द्र मिश्र

* *प्रकाशक*
साहित्यकार सहयोगी प्रकाशन
भदैनी, वाराणसी

* प्रथम संस्करण
रामनौमी सन् २०००

* आवरण : वेदप्रकाश मिश्र

* मूल्य : सौ रूपये मात्र/

मुद्रक :
साहित्यकार प्रेस
भदैनी, वाराणसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस रामायण के प्रेरक डा० मुदगल के उद्गार—

माँ भारती के वरद पुत्र, कुसुमा, गंगा, जटायु आदि अमर कृतियों के रचयिता, सरस गीतकार एवं सार्थक गद्य लेखन के धनी तथा योगवासिष्ठ महारामायण के काव्य रूपान्तरकार महाकवि भाई जगदीशचन्द्र मिश्र जी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने मानस की शैली में 'योगवासिष्ठ रामायण' रसायन के संदर्भ में मुझे भी कुछ कहने का आदेश देकर अनुगृहीत किया है।

पिछले ३२ वर्षों से श्रद्धेय मिश्र जी से मेरा स्नेहिल संबन्ध है। मैं इन की रचनाओं का नियमित श्रोता हूँ और मैंने साहित्यिक एवं व्यावहारिक जीवन में इन से बहुत कुछ सीखा है।

आज से लगभग दो वर्षों पूर्व प्राचीन वाङ्मय के प्रसंग में मैंने आदरणीय मिश्र जी से महर्षि वाल्मीकि रचित 'योगवासिष्ठ' की चर्चा की और आग्रहपूर्वक निवेदन किया कि आदि कवि रचित योगवासिष्ठ (उत्तर रामायण) अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं अपने ढंग का अनूठा दार्शनिक कथा-काव्य है। अतः इसके कथ्य को आधार मानकर सर्वजन ग्राह्य लोकभाषा में आप के द्वारा काव्य की रचना होनी चाहिए। पहले तो भाई मिश्र जी के कुछ टाल-मटोल की लेकिन स्नेह बस उन्होंने मेरी बाल हठ मान ली और काव्य रचना आरंभ कर दी, साथ ही साथ मुझे यह आदेश दिया कि जो भी लिखा जायेगा उसे तुम्हें नियमित रूप से सुनना होगा। तब से यह क्रम अनवरत रूप से चलता आ रहा है और भगवत्कृपा से यह गुरुतर कार्य पूर्णता के सन्निकट पहुँच रहा है। इसका प्रथम भाग पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। शेष दो भाग भी जिज्ञासु पाठकों को शीघ्र ही उपलब्ध हो सकेंगे।

वस्तुतः योगवासिष्ठ समस्त सांसारिक क्लेशों से मुक्त कराकर आत्मपद में स्थित कराने वाला सर्वोत्कृष्ट कथा-काव्य है। जिस के वक्ता महर्षि वसिष्ठ और श्रोता परात्पर परब्रह्म रूप भगवान् राम स्वयं हों उस का क्या कहना! अतः सर्वथा अनिर्वचनीय है। ऐसी निगूढ़ विशुद्ध ज्ञानमयी कथाभूमि पर विलक्षण भावसंपन्न काव्य प्रतिभा के धनी भाई मिश्र जी के द्वारा जो 'योगवासिष्ठ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रामायण' महाकाव्य की रचना हुई है, यह उनकी लगभग पचास साल की निश्छ साहित्य साधना की परिणति है। इस विलक्षण दार्शनिक काव्य की भाषा उ साध्वी गृहणी के सदृश है जो अनवद्य चरित्र, श्रद्धा, विश्वास, सारल्य, स्ने ममता, वात्सल्यादि आभूषणों से सदा सज्जित रहती है। तत्वबोध की साधन रू इस अमर कृति में भाषा अपने सहज रूप में अवस्थित रहते हुए काव्य में प्रयु दोहा, चौपाई, सोरठा, सवैया, घनाक्षरी हरिगीतिकादि छन्दों का तथा तत्वज्ञान कर्णभूत असंख्य भावों के संवाहक अनेक कथा प्रतीकों का पूर्ण सक्षमता से पोष एवं संबर्द्धन करती है।

अशान्त जीवन मानव मात्र के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है। वर्तमान अनेक प्रकार के दुराग्रहों से उत्पन्न विभिन्न विसंगतियों से घिरे हुए प्रायः प्रत्येव वर्ग के लोग अत्यन्त अशान्त जान पड़ते हैं और 'अशान्तस्य कुतः सुखम् अर्थात् अशान्त व्यक्ति को सुख कहाँ! ऐसी स्थिति में लोककल्याण की दृष्टि से यह ग्रंथ बहुत ही प्रासंगिक है। हमें विश्वास है कि इस रामायण के अध्ययन से जिज्ञासु पाठक अवश्य लाभान्वित होंगे। 'नहिं ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते अर्थात् ज्ञान के समान पवित्र और कुछ भी नहीं है।

इस ग्रंथ में जो उत्कृष्ट विलक्षणता है, उसमें भाई मिश्र जी का अध्ययन ममन, साहित्य की दीर्घकालिक सर्वांगीण साधना तथा उत्कृष्ट काव्यप्रतिभा हेतु और यदि कोई न्यूनता परिलक्षित होती है तो उसमें मेरी अबोधता कारण है क्योंकि मैं इस कृति का नियमित श्रोता हूँ और निर्माण काल में इस रचना सम्बन्धित मेरे प्रत्येक अनुरोध को श्रद्धेय भाई जगदीश मिश्र जी ने यथाव स्वीकार किया है।

अतः सहृदय पाठक किसी भी न्यूनता के लिए क्षमा करेंगे। इस विश्वा के साथ-

रामनौमी
२०५७

डा० विद्यानन्द मुद्गल
प्राध्यापक साहित्य विभाग
सं० सं० विश्वविद्यालय, वाराण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्म निवेदन

महर्षि वाल्मीकि विरचित 'योगवासिष्ठ' काव्य संस्कृत में होने के नाते सामान्य पाठक की उस में रुचि नहीं बन पाती। अध्यात्म और वेदान्त दर्शन की निगूढ़ता, लौकिक सारस्य और अलौकिक चमत्कार के अभाव में इसे कहने–सुनने के लिए वक्ताओं और श्रोताओं का सर्वथा अभाव बना रहा है। इस सच्चाई का अनुभव करते हुए मेरे कवि मित्र एवं संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के साहित्याचार्य डा० विद्यानन्द मुद्गल ने एक दिन 'योगवासिष्ठ' की एक प्रति थम्हा कर मुझे सहज ग्राह्य भाषा में काव्यान्तरित करने को कहा ताकि जनसामान्य इस कृति से लाभान्वित हो सके। भाई मुद्गल जी के माध्यम से इसे ईश्वरीय आदेश मान श्री संकटमोचन का स्मरण कर मैंने कार्यारंभ कर दिया और लगभग दो वर्षों में पूरा भी हो चला है। मैं नहीं जानता कि उनकी भावना के अनुरूप मैं कितना सफल उतरा हूँ, मुझे तो यह भी नहीं लगता कि यह कार्य मैंने किया है। सच भी यही है, परमात्मा जिससे जो करवाना चाहता है, वही होता है। अतः स्वयं कर्त्ता का दंभ करना मूर्खता मात्र होगी।

'योगवासिष्ठ' एक अनुपम दर्शन काव्य है। विश्व साहित्य में ऐसी कृति दुर्लभ है। वैराग्य, मुमुक्षु, उत्पत्ति, स्थिति, उपशम एवं निर्वाण नामक छः प्रकरणों में विभक्त इस काव्य के प्रथम प्रकरण में श्रीराम ने संसार की निस्सारता के प्रति जितने सारे प्रश्न उठाये हैं, संपूर्ण काव्य में गुरु वसिष्ठ ने प्रकारान्तर से उन्हीं का समाधान किया है। अपनी अवतार लीला में श्रीराम संसार में आकर जिस प्रकार अपने ब्रह्म स्वरूप का संगोपन करते हैं उसी प्रकार जीव भी अपने आत्म स्वरूप को भूल जाता है। बादल जैसे सूर्य को निस्तेज कर देता है, विकारों के गर्द गुबार में पड़कर जीव की वही स्थिति हो जाती है। योगवासिष्ठ में गुरु वसिष्ठ उसी गर्द गुबार रूपी विकारों को दूर करने का उपाय बताते है। अपने कथ्य की पुष्टि में संपूर्ण काव्य में गुरुदेव कुल पचास कथायें सुनाते हैं जिन्हें वृत्तान्त की संज्ञा दी गयी है, वसिष्ठ जी यह उपदेश अयोध्या के भरे दरबार में कर रहे हैं जहाँ रानियों सहित महाराज दशरथ, अपने भाइयों सहित श्रीराम, विश्वामित्र सहित अनेक ऋषि–मुनि, ब्राह्मण वृन्द, अनेक नरेश, मंत्रिगण, विशिष्टजन, सेवक–भृत्य आदि उपस्थित हैं। देवगण, विद्याधर अदृश्य रूप में तथा पालित पशु–पक्षी भी श्रोताओं के रूप में प्रस्तुत हैं किन्तु श्रीराम के अतिरिक्त किसी अन्य को प्रश्न करने का अधिकार नहीं है। संपूर्ण काव्य में गुरुदेव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीराम को समझाते हैं कि शरीर में टिकी हुई अज्ञानी की आस्था उसे उबरने नहीं देती। वह पुत्र, पत्नी, कुल–परिवार में ममत्व बुद्धि रखता है और इस मिथ्या दृष्टि से दुःखी रहता है। यही ममता उसकी मुक्ति में बाधक बनती है।

वसिष्ठ जी ने इसके लिए तीन उपाय बताये–सत्संग, शास्त्रावलोकन और गुरु के निर्देशानुसार आत्मविचार कर दृढ़तापूर्वक अभ्यास। साहित्य मानकर पढ़ने वालों के लिए योगवासिष्ठ उबाऊ हो सकता है किन्तु महर्षि इसे शास्त्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं और निरन्तर चिन्तन तथा अभ्यास की अपेक्षा करते हैं। 'शास्त्र सुचिन्तिय पुनि पुनि देखिय' कहकर गोस्वामी जी ने उसी चिन्तन और अभ्यास के नैरन्तर्य की ओर संकेत किया है।

एक स्थल पर वसिष्ठ जी ने जब कहा, राम! इस संसार को सपना जानो, तब श्रीराम ने साश्चर्य पूछा, गुरुदेव सपना तो असत्य है, क्योंकि जागरण के बाद कुछ भी दिखाई नहीं देता किन्तु संसार को तो हम स्पष्ट देख रहे हैं, इसे सपना कैसे मान लें? वसिष्ठ जी बोले, राम, जब तुम नींद में स्वप्न देखते रहते हो, क्या उस समय वह झूठा लगता है, किन्तु जब जागते हो तब वास्तविकता का भान होता है। उसी प्रकार जब संसार से जगोगे तब इस तथ्य को समझोगे।

मुक्ति में बाधक तत्व क्या हैं और उनका निवारण कैसे हो सकता है, यही योगवासिष्ठ का प्रतिपाद्य विषय है। योगवासिष्ठ को पढ़ते अथवा सुनते समय जब तक हम अपने को गुरुदेव की उपदेश वार्ता में श्रीराम की भाँति समर्पित नहीं कर देते तब तक अध्यात्मबोधी दार्शनिक निगूढ़ता और प्रबल सांसारिक मोह का अन्तर्द्वन्द्व नहीं दूर हो सकता।

लोकभाषा में 'योगवासिष्ठ रामायण' के रूप में महर्षि के महान ग्रंथ को प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्राप्त कर मैं अपने को गौरवान्वित अनुभव करता हूँ। वेदान्त दर्शन तथा योग का मुझे किंचित ज्ञान नहीं है। संस्कृत भाषा से भी अपरिचित हूँ। स्वामी रामप्रसाद निरंजनी के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने 'योगवासिष्ठ' का हिन्दी में गद्यानुवाद कर मेरे लिए यह कार्य सहज कर दिया। किन्तु यह रामायण पद्यानुवाद मात्र नहीं है। ग्रंथ की तात्विक बातों को बोधगम्य, सरस एवं संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने का भरपूर प्रयास किया है।

सर्वश्री रामाधीन चतुर्वेदी, स्वामी भागवतानन्द, स्वामी शिवानन्द, अग्रजत्रय पं० नवलखाप्रसाद मिश्र, महाकवि चन्द्रशेखर मिश्र, यो० राजबली मिश्र, यो० बलिराज सिंह, इं महादेव सिंह, डा० कृष्णबहादुर, मानसरत्न डा० श्रीनाथ मिश्र,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानसमणि श्यामनारायण शास्त्री, डा० उदयशंकर दुबे, चक्रवती जगदीश चतुर्वेदी, शिवलोचन तिवारी, नरेन्द्रराम त्रिपाठी, डा० किशोरीलाल गुप्त, डा० सुरेन्द्र कुशवाहा, डा० ओमप्रकाश द्विवेदी, रामचार्य पाण्डेय, स्वामी सत्यप्रकाश, रमेश उपाध्याय, राजबली तिवारी आदि विभूतियों ने समय–समय पर इस कृति के कुछ अंश देख सुनकर मुझे उत्साहित किया है इनके प्रति मैं विनम्र आभार प्रकट करता हूँ। भाई मुद्गल जी के प्रति आभार प्रकट कर मैं अपनी आन्तरिक अभिन्नता को खण्डित नहीं होने दूँगा जो साक्षी रूप में एक एक पंक्ति के साथ रहे हैं।

आज प्रथम भाग के प्रकाशन पर प्रेस तथा परिवार के कर्मठ सदस्यों *डा० जयप्रकाश मिश्र, श्रीप्रकाश मिश्र, यो० विजयप्रकाश मिश्र, अनिलकुमार पाण्डेय, महेश भारद्वाज, धर्मप्रकाश मिश्र, सुधांशु भूषण दीक्षित, भाईलाल, अजयकृष्ण त्रिपाठी तथा प्राणनाथ मिश्र* के प्रति स्नेहाशीष प्रकट करते हुए मुझे तोष का अनुभव हो रहा है। प्रिय *वेदप्रकाश मिश्र* ने आवरण–चित्र के माध्यम से रामायण की मूल भावना प्रदर्शित की है।

अन्त में ज्ञान गौरव महर्षि वाल्मीकि को प्रणाम कर परमात्मा से यही प्रार्थना करता हूँ कि जिस प्रकार गुरु वशिष्ठ ने प्रतीकपुरुष श्रीराम को तत्वबोध कराकर अपने गुरुत्व की गरिमा रखी उसी प्रकार उनकी दिव्य वाणी हर प्राणी का कल्याण करे।

गुरु के बिमल विचार जे धारहिं दृढ़ भाव करि।
सहज होहिं ते पार भव सागर गो पद सरिस॥

*

रामनौमी : सं० २०५७
भदैनी, वाराणसी

जगदीशचन्द्र मिश्र

कबहुँ आदि कवि भयउ सोइ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हमारे सहयोगी :

सर्वश्री मानसरत्न डा० श्रीनाथ मिश्र, डा० के०के० पाण्डेय, डा० शुकदेव त्रिपाठी, गोपाल जी गोयल, श्यामनारायण शास्त्री रामायणी, यो० विजयप्रकाश मिश्र, डा० देवव्रत चौबे, लक्ष्मीचन्द्र सेठ, कालीशंकर त्रिपाठी, यो० बलिराज सिंह, इं० महादेव सिंह, नरेन्द्रराम त्रिपाठी, राधेश्याम शर्मा, डा० एस०एस० कुशवाहा, सुधाकर तिवारी, शिवपूजन सिंह एडवोकेट, डा० रमेशचन्द्र पण्डा, अनिलकुमार पाण्डेय, मदनमोहन राय, बालमुकुन्द लोहिया, आनन्दबहादुर सिंह, शिवशंकर पाण्डेय, मदनमोहन पाण्डेय, सोमनाथ ओझा, मालूराम सिंहानिया, चंचलकुमार जैन, रत्नेश श्रीवास्तव, विनोदकुमार त्रिपाठी, स्वामी सत्यप्रकाश, उदयशंकर दूबे, अनिलकुमार गुप्त, नागरप्रसाद दाधीच, आर०एस० सिंह, अच्छेलाल, डा० शेषनाथ मिश्र, अर्जुन पाण्डेय, हनुमान प्र० बरनवाल, सूमी बसक, इं० रंगनाथ मिश्र, सत्यप्रकाश मिश्र, धर्मप्रकाश मिश्र, डा० जगदीश चतुर्वेदी, धर्मनारायण झा, तेजधर मिश्र, स्व. अमरनाथ श्रीवास्तव, नर्मदेश्वर तिवारी, उमाशंकर द्विवेदी, नारायण मिश्र, दीपचन्द पाण्डेय, जितेन्द्र पाण्डेय 'जित्तू' डा० कौशलकिशोर मिश्र, अशोक पाण्डेय, एस०एन० शुक्ल, रविशंकर पाण्डेय, महन्त जयराम दास, चन्द्रमणि पाठक, शीतलाप्रसाद त्रिपाठी, डा० विश्वनाथ पाण्डेय, रामदुलार सिंह पंकज, सुदामा देवी, छेदीलाल पटेल, जवाहर लाल शोना, विवेकानन्द कुइती, केशवप्रसाद सिंह, डा० राजमणि शर्मा, अजयकृष्ण त्रिपाठी, विधुशेखर मिश्र, अश्विनीकुमार राय, ओ०पी० राय, विश्वम्भरनाथ मिश्र, डा० चित्र सिंह, रमाशंकर दुबे, डा० के०के० त्रिपाठी, डा० कृष्णबहादुर, रामाधार सिंह, डा० डी०एन० मिश्र, अखिलानन्द शास्त्री, सुरेश उपाध्याय, प्रो० योगेन्द्र सिंह, राजेन्द्र प्रसाद, हृदयानन्द उपाध्याय, योगेन्द्र पाण्डेय, रामाचार्य पाण्डेय, संपूर्णानन्द तिवारी, लालबहादुर मौर्य, दयाशंकर लाल, तुलसीदास मिश्र, राघवेन्द्र कुमार पाण्डेय, डा० श्रीधर पाठक, सुधांशुभूषण दीक्षित एवं तनसुख राम सिंहानिया।

*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीरामदूताय नमः

योगवासिष्ठ रामायण

स्तुति

दोहा

श्रीगणेश माँ शारदा सीय सहित प्रभु राम।
उमा शंभु हनुमान तोहिं बारंबार प्रनाम ॥१॥

ग्रन्थ योगवासिष्ठ कर काव्यान्तर अस होइ।
भाव सुगम लागहि सबहिं कृपा करहु अब सोइ ॥२॥

निज बल बुधि कर आस नहिं मैं जड़ जीव अयान।
सुमिरि आदि कवि तोहिं प्रभु करउँ जथामति गान ॥३॥

सबद सबद जहँ ब्रह्म है अर्थ भाव प्रभु आप।
अगुनहिं चिन्तन कहत हैं सगुनहिं काव्य कलाप ॥४॥

कोसलेश श्रीराम अरु गुरु बसिष्ठ संवाद।
मोक्ष मार्ग हित दीप यह नासत तमस विषाद ॥५॥

उत्तर रामायण सतत करत जीव उद्धार।
बालमीकि विरचित अमर ज्ञानयोग कर सार ॥६॥

कहाँ भाव ऋषिवर्य कर कहाँ अभाव हमार।
छमिहहिं दोष उदार जन जिन के विमल बिचार ॥७॥

★

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीरामदूताय नमः

वैराग्य प्रकरण

दोहा

गुरु अगस्त्य आश्रम गयेउ सिष्य सुतीक्षण सुजान ।
विधिवत कीन्ह प्रनाम तब मुनि दीन्हेउ सनमान ।।१।। क

कहेउ सुतीछन महामुनि तुम तत्वज्ञ महान ।
संसय उपजेउ मोर मन गुरुवर करहु निदान ।।१।। ख

कर्म मोक्ष कर हेतु है अथवा केवल ज्ञान ।
या पुनि दोऊ होत है बरनि हरहु अज्ञान ।।१।। ग

मुनि अगस्त्य बोलेउ मृदु बानी । ज्ञान खानि संसय अघ हानी
केवल कर्म हेतु नहिं होई । मात्र ज्ञान नहिं पावइ सो
विप्र मोक्ष पद के दोउ दायक । ज्ञान कर्म मिलि होहिं सहायक
अन्तर सुद्ध होत सुभ करमा । उपजइ ज्ञान जान मन धरम
येहि बिधि ज्ञान कर्म दोउ कारन । मोक्ष हेतु भवजाल निवार
जिमि दोउ पाँखन खग नभ चरई । तिमि दोउ साधि मोक्ष नर बर
तात कहउँ पुरान इतिहासा । जासों होइ तोर भ्रम नास
अग्निवेश सुत कारन नामा । वेद शास्त्र पढ़ि लवटेउ ग्राम
कर्म त्यागि बैठेउ गृह आई । दुःख पितु भयेउ देखि जड़ता

दो०–सिद्ध होइ नहिं कर्म बिनु जिमि रवि बिनु नहिं प्रात ।
कहेउ पिता कारन कवन तजेउ कर्म तुम तात ।।२।।

कारन कहेउ पितहिं समुझाई । तजेउँ कर्म संका मन आ
वेद बदत दूनउँ मत ताता । मानउँ साँच कवन मैं बात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ोहिं कृपा करि तात बतावहु । का करनीय आप समुझावहु ।।
ग्निवेश बोले सुत कारन । कथा कहउँ सुनि करु उर धारन ।।
म गिरि सिखर देव किन्नर गन । क्रीडत सुरसरि तीर मुदित मन ।।
रुचि अपछरा पूछी बाता । इन्द्र दूत देखी नभ जाता ।।
हउ करत तुम कहाँ पयाना । नभचारी हे देव सुजाना ।।
हेउ दूत सुनु सुमुखि कहानी । नृपति अरिष्ट नेमि गुन खानी ।।
न जब जगेउ विराग अपारा । सुतहिं समरपेउ राज पसारा ।।
ाउ गन्धमादन गिरि जाई । देवराज मोहिं कहेउ बुझाई ।।

०–रथ चढ़ाई अति मान करि लेइ आवहु तुम जाइ ।
नृप अधिकारी स्वर्ग के सुख भोगहिं अब आइ ।।३।।

सन जाइ कहेउँ मृदु बानी । देवराज कर विनय बखानी ।।
न्तु न तनिक लुभित भये राजा । बिव्रस होइ लवटेउं लेइ साजा ।।
ल्मीकि पहँ जाहु बहोरी । कहेउ इन्द्र इच्छा यह मोरी ।।
वबोध कर नृप अधिकारी । दुर्लभ अस महान व्रत धारी ।।
वइ मुक्ति जगत दुःख जाई । हे ऋषिवर तुम होहु सहाई ।।
इ कहेउँ मैं ऋषिहिं बुझाई । ऋषि उदार करुणा उर आई ।।
ह विधि तेहि आश्रम नृप गयऊ । माथ नाइ पूछत अस भयऊ ।।
ासिंधु मोहिं कहउ बुझाई । केहि विधि भव बन्धन यह जाई ।।

–ऋषि बोलेउ राजन सुनहु रामायन इतिहास ।
जाके उर धारन किये होत अविद्या - नास ।।४।।

नमुक्त होन जउ चहऊ । सुनि यह कथा हृदय निज धरऊ ।।
-बसिष्ठ केर संवादा । मुकुति देत सब मेटि विषादा ।।
नमुक्त राम सुनि भयऊ । हरष-विषाद भाव सब गयऊ ।।
ा राम नृप जानन चहेऊ । तब ऋषिवर अस बोलत भयऊ ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सनतकुमार तथा भृगु सापा। सर्मादेव विप्र गत आपा।
विष्णु भये दसरथ सुत जाई। आगिल कथा सुनहु चित लाई।
सत चित् आँनद बोध करावन। आत्मतत्व चिन्मय यह पावन।
मन अभिमान दुःख कर कारन। मेटन ताहि प्रयोजन धारन।
मोक्ष ब्रह्मविद्या बिनु पाये। दूरि होइ नहिं आन उपाये।
परमानन्द आतमा भाना। होइ सास्त्र यह जानि सुजाना।

दो०—अस बिचारि करि ध्यान दृढ़ जो सुनिहइं चित लाइ।
पइहइं परमानन्द सोइ साप ताप बिनसाइ ॥५॥

भरद्वाज मम सिष्य सुजाना। प्रथमहिं तेहि हित कीन्हेउँ गाना।
सोइ ब्रह्मा सन जाइ सुनावा। सुनि यह कथा हरषि मन आवा।
जानि प्रबन्ध विधान कहानी। ब्रह्मा पुनि बोलेउ मृदु बानी।
बाल्मीकि ऋषि प्रेरहु जाई। बोलेउ अस हमार मत भाई।
पूरन करउ राम गुन गाथा। जगत जीव सुनि होंहि सनाथा।
भवसागर हित रचउ जहाजा। करउ लोक हित अनुपम काजा।
भरद्वाज पुनि आइ बतावा। अभिमत ब्रह्माकर मोंहि भावा।
ऋषि बोले नृप सन मृदु बानी। अस सुनि विरचेउँ अकथ कहानी।
भरद्वाज सन कहेउँ वहोरी। सुनि सब ताकर मति भइ भोरी।
ऋषि वसिष्ठ कर पाइ विधाना। जीवन मुक्त राम सुख माना।

दो०—चारि बन्धु सिय कौसिला दसरथ नृपति सुजान।
सहित सुमित्रा आठ ये जीवनमुक्त महान ॥६॥ क
आठ अपर मंत्री वर किंचित पायेउ ग्यान।
मात्र अनामय पद लहेउ इन्द्रजीत हनुमान ॥६॥ ख

अपर कुन्तभासी सतबर्द्धन। गुरु बसिष्ठ सुखधाम विभीष
अष्टम वामदेव मंत्री वर। ये सब भये साधना तत्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०–ये चिन्मात्रहिं सुद्ध होइ द्वैत न पायेउ जान।
तदपि साधना निरत होइ पावन भयेउ महान ॥७॥ क

भरद्वाज ऋषि सन कहेउ गुरुवर कृपा निधान।
जीवन मुक्ती होत का मोहिं देहु यह ग्यान ॥७॥ ख

केहि बिधि जीवनमुक्त होइ बिचरत कीन्हेउ राम।
यह रहस्य जाने बिना मन न लहइ विश्राम ॥७॥ ग

बाल्मीकि बोले चित लाई। तात सुनहु सोइ कथा सुहाई ॥
जग भासत जो साँच न होई। दृढ़ विचारि यह जानइ कोई ॥
जिमि अकास नीलिमा लखाई। किन्तु न साँच कछुक यह भाई ॥
ऐसेइ असत जगत सत लागत। जब लगि मन सुविचार न जागत ॥
जब लगि सृष्टि अभाव न होई। तात परम पद पाव न कोई ॥
दृष्य मिटे निरमल चित अंबर। जानहु आत्म स्वरूप सिष्य वर ॥
कोउ कह महाप्रलय जब होई। तब अभाव यह भासइ सोई ॥
जानहु किन्तु त्रिकाल अभावा। यह रहस्य चाहउं समुझावा ॥
श्रद्धा सहित करइ सुनि धारन। भ्रम ताकर तब होइ निवारन ॥
अव्याकृत पद मिलइ न संका। जानु जगत यह भ्रम आतंका ॥
अस भ्रम तजे मुक्ति मिलिजाई। बन्हइ न जीव बासना भाई ॥
भटकत जीव बासना कारन। मेटे होइ परम पद धारन ॥

दो०–हिम बासना सरूप मन ग्यान किरन रवि पाइ।
जड़ता सीतलता जरइ सहजहिं मन विनसाइ ॥८॥

उभय प्रकार बासना होई। सुभ अरु असुभ कहावत जोई ॥
असुभहिं जगे स्वरूप भुलाई। अहंकार जुत भ्रम अधिकाई ॥
पंचभूत मय देह हमारा। जानु बासना केर प्रसारा ॥
अंग प्रत्यंग मनिक सम जानहु। ताग बासना कहँ प्रिय मानहु ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

टूटे ताग मनिक बिलगाहीं । पंचभूत होइ खण्ड नसाहीं ॥
सुद्ध बासना जगत अभावा । ग्यान वान दृढ़ करि गहि पावा ॥
बीज बये जस अंकुर होई । दग्ध भये जामइ नहिं सोई ॥
तैसेइ ग्यान करइ भ्रम अंता । नित अद्वैत धरहिं मन सन्ता ॥
ब्रह्म बोध हित एक उपाऊ । सकल असत बासना नसाऊ ॥

दो०—राम बसिष्ठ प्रसंग यह जीवहिं मोक्ष उपाइ ।
परम बोध कारक सुनहु भरद्वाज चित लाइ ॥९॥

एक दिवस दसरथ पहँ जाई । राम तीर्थ हित विनय सुनाई ॥
अनुमति पाइ बन्धु मंत्री गन । लीन्हे संग सेन इच्छित धन ॥
दान नहान दरस पूजन करि । लौटेउ अवध बिताइ बरिस भरि ॥
पाइ अवध बासी मन हरषे । मंगल साजि सुमन बहु बरसे ॥
जै जै कार भई चहुँ ओरा । रानी राउ हरष नहिं थोरा ॥
सप्त दिवस उत्सव पुर छावा । चहुँदिसि आँनद बजेउ बधावा ॥
दान-पुन्य कइ मिति कछु नाहीं । नित नियमित श्रीराम कराहीं ॥
कहत सुनत तीरथ इतिहासा । भाइ बन्धु मिलि करत प्रकासा ॥
पितु आयसु अहेर हित दीन्हा । लगे जान तब राम प्रवीना ॥
बन जीवहिं जो पसु दुःख देहीं । मारहिं हेरि हेरि बन तेहीं ॥
येहि बिधि बीति गये बहुकाला । सोकाकुल भये राम कृपाला ॥
रस संयुक्त विषय सब त्यागा । पीत बदन मन जगेउ विरागा ॥
दूबरि देह अंग प्रति रूखे । धरके चिबुक कमल जनु सूखे ॥
खान-पान असनान भुलाना । बिरस भये लखि बन्धु सुजाना ॥
दसरथ सोकाकुल भये भारी । देखि देखि कलपति महतारी ॥
मत्रिन्ह बोलि बिचारेउ राजा । सोचेउ व्याह करन कर साजा ॥

दो०—गुरु बसिष्ठ बोलेउ नृपति चिंता करहु न आप ।
महापुरुष मन होत हैं कारण पाइ कलाप ॥१०॥ क

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बालमीकि आगे कहेउ हे मुनिराज सुजान।
दसरथ गृह आये तबहिं विस्वामित्र महान ॥१०॥ ख

नृप दल सहित कीन्ह अगवाना। तेजपुंज कहँ कीन्ह प्रनामा ॥
दरसन दीन्ह भाग्य मम जागे। धाइ बसिष्ठ कण्ठ मुनि लागे ॥
नृप वसिष्ठ दोऊ मिलि पूजे। अस्तुति बन्दन के स्वर गूंजे ॥
बार-बार नृप बन्दन लागे। मान दान हित मन अनुरागे ॥
कहहु काह तुम्ह देउँ सहरसा। तुम्हरिहिं कृपा सकल उतकरषा ॥
विस्वामित्र मुदित मन भयऊ। जिमि ससि पाइ सिंधु उमगयऊ ॥
कहेउ नृपति तुम अति बड़भागी। जो बसिष्ठ गुरु पद अनुरागी ॥
मैं कीन्हेउँ अरंभ मख राजा। खर-दूषण बिनसत मम काजा ॥
हाड़ मांस अरु रुधिरहिं डारी। काह कहउँ सब देत बिगारी ॥
मैं चाहौं जारौं देइ सापा। कोह भये मम घटइ प्रतापा ॥
येहि ते आयेउँ सरन तुम्हारी। तुम बिनु होइ न मख रखवारी ॥

दो०—दीजे रामहिं कृपा करि जे बल बुद्धि निधान।
जस अरु धर्म तुम्हार रह मोर होइ कल्यान ॥११॥

नहिं त्रिलोक महँ अइसन कामा। पूरित जाहि करहिं नहिं रामा ॥
सहित बसिष्ठ लखहिं जे ग्यानी। राम महान सकल गुन खानी ॥
रवि नभ चढ़े सकल तम जाई। तिमि दैत्यन कर गति सुनु भाई ॥
बालमीकि कह सुनु मुनिराई। नृपति गिरेउ महि मुरुछा आई ॥
भरि मुहूर्त बीता तब जागे। ऋषि सन विनत कहन अस लागे ॥
नाथ तोर अति मागन भारी। बहु बलवान निसाचर झारी ॥
राम युद्ध विद्या नहिं जानी। फूल सेज जेहि जोगवहिं रानी ॥
नहिं रन लखेउ न भृगुटि चढ़ाई। दैत्यन सन का करिहि लराई ॥
षोडस बयस सुकोमल बारे। मोरे राम नयन के तारे ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुल परिवार अवधके प्राना। किमि कहिदेउँ संग तव जाना
नारि धाम धन एक न जानउँ। प्रान समान राम कहँ मानउँ

दो०—कहहु चलौं मैं सेन लेइ हतौं निसाचर झारि।
किंतु दसानन संग मुनि डरत करत तकरार ॥१२॥

इन्द्र आदि रावन सन डरहीं। को समर्थ जो तेहिसन लरहीं
तापर राम मगन बल हीना। अस कहि बिबस भये नृप दीना
विस्वामित्र कोह करि बोले। बनि उदार पुनि मुंह किमि खोले
सिंह होइ तुम मृग बनि भागे। किमि तव कुल कलंक नहिं लागे
अब तुम राज करहु मन माना। आपुहिं देखब जो हम ठाना
जब अस कहि मुनि कोप देखावा। कंपित भूमि देव डर पावा
तब बसिष्ठ बोले असि बानी। नीति धर्म परमारथ सानी
कुल इक्ष्वाकु भये नृप दानी। सत्यनिष्ठ महिमा जग जानी
तोहिं अस कहत न पावत सोभा। जासों मुनि मन उपजेउ छोभा
बचन त्यागि निज धरम न छोरहु। हे नृप मुनिकर मन जनि तोरहु
कहहु राम इनके संग जाहीं। ये रखिहइं बनि के परिछाहीं
काल रूप तपसी बलवाना। अस्त्र सस्त्र विद्या सब जाना
सुभगा जया सुता दोउ दीन्हा। मुदित दक्ष अति आदर कीन्हा
पंच पंच सत सुत दोउ जाये। जे दैत्यन कहँ मारि भगाये
ते दोउ मूर्ति बनी संग सोहैं। जीतहि इन्हहिं भला रन को है
तुम दशरथ कर अरथ विचारहु। सहज जीव बनि मन जनि हारहु
श्रेष्ठ पुरुष जस करहिं नरेसा। सोइ आचरन करइ सब देसा
बचन पालि कुल रीति निभावहु। दैत्यन भय मन जनि कदरावहु
कालहु रूप धारि जो आई। मुनि प्रभाव कछु नाहिं नसाई
कीरति तप व्रत सब विनसाई। मोह सोक निज त्यागहु भाई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ुनि संग जानदेउ सुत राजा। अस कीन्हें सब पूरहिं काजा॥

दो०–भरद्वाज सन रिषि कहेउ सुनि गुरु कइ असि बात।
भृत्य बोलाइ कहेउ नृप रामहिं लावहु तात॥१३॥

ौटेउ सेवक राम न आये। सोइ नृप सन अस बचन सुनाये॥
ाथ राम मन चिंता छाई। गति उनकरि नहिं कछु कहि जाई॥
ब ते प्रभु तीरथ करि आये। कबहुँ न हमहिं प्रसन्न लखाये॥
ान-पान कछु नाहि सोहाई। निदरहिं क्रोध करहिं अधिकाई॥
षन देहिं हुलसि महतारी। निधनहिं बाँटत ताहि उतारी॥
जिसजि सुमुखि विहँसि जौ बोलहिं। लागत उनहिं मनहुँ विष घोरहिं॥
ाहू विधि हर्षित नहिं होईं। चाहे कोटि जतन कर कोई॥
क जिमि अपर बारि नहिं चाहैं। का चाहहिं हम कइसे थाहैं॥
ानि न जाइ सोच का करहीं। पद्मासन होइ कर मुख धरहीं॥

सो०–मुदित न होहिं कुमार कोउ कछु करइ बिनोद जब।
उनहिं न लगत पियार कछुक देइ जौ नेह बस॥१४॥

चिवहु जाइ जबहिं समुझावत। बीतराग जिमि ग्यान सिखावत॥
हि जग कहत सम्पदा भाई। जानु सोइ विपदा बनि आई॥
ठइ जिनिस मनोहर लागे। मृगतृष्णा सम जानु अभागे॥
ज सत्य नहिं सत्य न भोगा। बन्धन हेतु सबइ संजोगा॥
ंधु सखा सब झूठ बतावहिं। आस फांस जग लोग फंसावहिं॥
ाग विराग न कछु अभिमाना। हरष विषाद न मन कछु आना॥
ब्र अनरथ कर हेतु प्रसारा। करहु जतन छूटइ यह कारा॥
ेह सब देखि होत मन खीना। कृष भइ देह कठिन अति जीना॥
र्महिं नियर लखन रिपुसूदन। चिन्ताकुल लागहिं तीनहुं जन॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हे नृप करहु जतन अब कोई। जासों यह अनरथ नहिं होई।

दो०–कौसिक कहेउ नृपति सुनहु धन्य धन्य तव भाग।
अस महान सुत पायेउ जेहि मन जगेउ बिराग ॥१५॥

रामहिं लेहु समीप बोलाई। तात तुम्हार परम पद पाई।
हम बसिष्ठ उपदेसहुं तेही। जासों राम परम पद लेहीं।
भरद्वाज सुनि मुनि कर बाता। नृप बोलाइ लीन्हें चहुं भ्राता।
आये राम चरन पितु लागे। तेहि बिधि गुरु मुनि के भये आगे।
अपर उठे कहि रामहिं बंदे। गोद राखि नृप हृदय अनन्दे।
बोलेउ अंक मेलि नर नाहा। जौ प्रिय राम परम पद चाहा।
उदासीन मन काज न होहीं। गुरु बसिष्ठ उपदेसिहहिं तोहीं।
गुरु बोलेउ तुम धन्य कुमारा। विषय रूप सत्रू जो मारा।
गाधिज कहेउ राम कहु बाता। पायेउ मोह कवन बिधि ताता।
चाहउ काह प्रगट कहु सोई। सोइ पद देउँ न दुःख जेहि होई।

दो०–जिमि घन देखि नचत सिखी, आनद हृदय अपार।
राम भये प्रमुदित तिमि, सुनि मुनि बचन उदार ॥१६॥

जानि अभीष्ट मिलिहिं पद मोरा। मुदित राम उर हरष न थोरा।
पुलकित मन इच्छित फल पागे। मुनि सन राम कहन अस लागे।
कोसलपति गृह जनम हमारा। वेद पढ़ेउँ व्रत धारेउँ सारा।
पुनि करि तीरथ बरिस बितावा। दान-नहान कीन्ह गृह आवा।
संध्या बन्दन में रुचि लागी। कछु दिन गयेउ बात एक जागी।
राज भोग जग सब भ्रम लागा। मूरख जोइ राखत अनुरागा।
मिथ्या जड़ जंगम जग सारा। सकल पदारथ मन बिस्तारा।
मन भ्रम पात्र सदा दुःखदाई। मृगतृष्णा फँसि मृग की नाई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ूरख जीव भ्रमत थकि हारा । जस सम अलभ भोग बिस्तार ॥
हि समान सब इन्द्रिय भोगा । जन्म मरन कर लागत रोगा ॥
रि बिचार जानेउँ यह सारा । आन-जान इन्हकर व्यापारा ॥

दो०—मुनि मैं त्यागेउँ भोग सब नासवान जग जानि ।
तनिक न इन्ह मँह सुख कतहुँ ये सब दुःखकर खानि ॥१७॥

ब जगइ मन पाये भोगा । तृष्ना जारइ भये बियोगा ॥
ग सिला दुःखकर मुनिराई । सुखकर छिद्र न कतहुँ लखाई ॥
न ते आच्छादित जिमि खाई । लोभित हरिन गिरे दुःख पाई ॥
मि मूरख मन भोगहिं लागा । संसृति चक्र भ्रमत दुर भागा ॥
ग चोर उर तम अग्याना । आतम धन लूटत मनमाना ॥
हि बियोग सों जंतु होइ दीना । दुःख पावइ इमि भोग अधीना ॥
लइ न सान्ति देह अभिमाना । छनभंगुर जद्यपि सब जाना ॥
मूरख सोइ भोग रमा नर । परबस बोलन डोलन ताकर ॥
त दुःख जानि भोग नहिं भावा । नहिं भव वैभव मन भरमावा ॥
अनरथ करि करि जन पावत । सील धर्म वैराग्य नसावत ॥
के गये कहां सुख होई । नाथ आपदा जानिय सोई ॥
ति मिलत परुष भइ बानी । कोमलता सुचिता कर हानी ॥
ल रहे जल मृदुल सुहाई । पर हिम होइ पावइ परुषाई ॥
मि धन पाइ जीव जग होई । दुःख पावइ तहिं संसय कोई ॥
ले भोग बिछुरे पछतावा । काहू विधि कोउ सुख नहिं पावा ॥
तरंग विद्युत सम होई । स्थिर भोग रहइ नहिं कोई ॥

—सुभ गुन विरमत तबहिं लगि जब लगि तृषा न जाग ।
स्वाति नीर होइ जात विष जो आवै मुख नाग ॥१८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लक्ष्मी विषकर बेलि समाना। देखत सुघर छुअत हर प्रान
बंचित आतमपद सों प्रानी। होंहि दीन अतिसय अभिमानं
आत्मानन्द ग्यान बिनु नाहीं। लक्ष्मी येहि महँ विघ्न कराहिं
दीपक बुझे प्रकास नसाई। तदपि कालिमा देत लखा
तिमि धन गये तृषा रहि जाई। मन बासना बढ़े अधिका
पवन चले घन जात उड़ाई। धन तिमि गुन गन देत भगा
सूर सोइ निज गुन नहिं गावा। सोइ समर्थ सम बुधि जोइ पाव
सुभगुन युक्त रहइ धनवाना। अइसन नर दुर्लभ मुनि जान
तिसुना अहि करि पय धन पाना। पवन भोग नहिं करत अघान
निसा चन्द घन राहु अकासा। सागर नलिन बिवर मँह बास
खड्ग धार सम सुन्दरताई। किंतु परस अतिसय दुखदा

दो०—सद्गुन भोग बिरागमय ग्यान मोह दुख रूप।
तृन तिसना उर जन्म दुःख इन्ह के रूप अनूप ॥१९

सुभगुन नसत संपदा पाये। येहि ते मोंहि बिराग मुनि भा
तड़ित जागि पुनि दुरत अकासा। बारि होत हिम सीत बता
तिमि धन ते जड़ता मन आवै। येहि ते मोंहि संपति नहिं भा
पदुम पात नहिं बारि थिराई। तिमि धन की जग चंचलत
विद्युत पवन भले ठहराई। किंतु न संपति सकइ रुक
भोग अमरता धन नहिं देई। अस जे चहहिं मूढ़ जग
भोगी गर्दभ सम करि जानहु। पसु पाँखी जिमि जीवन मा
सास्त्र पढ़े तदरूप न होई। जानहु भार रूप नर स
देह पाइ अभिमान न त्यागा। आत्मपदहिं मन नहिं अनुरा
आस फाँस भटकत संसारा। ताकर किमि होइहि उद्धा

RajGuru Math; Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

काल गाल परि चाहत जीना । अहि मुख भेक मसक जिमि लीना ।।
सरित बेग सम यह तरुनाई । नसत देह पुनि पाइ बुढ़ाई ।।
कामी जिमि प्रति छन लख नारी । तइसइ काल न सुरति बिसारी ।।
वृद्ध अग्य कर दुखप्रद जीना । जउ नहिं भयउ आत्मपद लीना ।।
घुन जिमि काठहिं भीतर खाई । बाहर जानि परै सुघराई ।।
तिमि माया अन्तर बिनसावै । बहु विधि मोहक रूप लखावै ।।
बस्तु न साँच नाहिं सुखदाई । अहि गहि सरित पार किमि जाई ।।

दो०—इन्द्रधनुष सम मोहक भ्रामक यह संसार ।
येहि मँह कतहुँ न सुख मिलइ मुनिवर सकल असार ।।२०।। क
गरब जगइ अग्यान ते दुष्ट परम अरि आहि ।
जामे परि मैं दुःख लहेउँ दसा सुनावौं काहि ।।२०।। ख

पुन्य भजन व्रत जो कछु भये । हे मुनि सो सब व्यर्थहिं गये ।।
अभिमानहि परमारथ तइसे । राख बीच आहुति मुनि जइसे ।।
सब दुःख बीज होत अभिमाना । ताहि नसे बिनु नहिं कल्याना ।।
मुनि निवृत्ति कर कहहु उपाऊ । जाते मिटै मोर उर दाहू ।।
राहु ग्रसे ससि होत मलीना । तिमि अभिमान करत गुन हीना ।।
मन अभिमान मिटे सुख आवै । तिसुना तड़ित मेघ संग जावै ।।
जिमि जनेन्द्र अहमिति सों हीना । तिमि चाहौं मैं होन प्रवीना ।।
जिमि हिम करत कमल कर अंता । अहं ग्यान नासत भगवन्ता ।।
तिसुना डारि जाल अभिमाना । जीवहिं खग फांसत मनमाना ।।
विषय भोग इच्छा कर चारा । दीन बना भरमत इमि हारा ।।

दो०—सरद बिनासत घनहिं जिमि तिमि बिराग अभिमान ।
सोइ उपाय मुनिवर कहहु होइ मोर कल्यान ।।२१।।

काम भोग जिमि भोगत कामी । माला मेलि मगन अभिमानी ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तिसुना ताग फूल मन पोही। कामी मगन धारि गर होही
ग्यान सरद अहमिति घन नासै। तबहिं तुषार तृषा नहिं भासै
जिमि सागर सब सरि मिलि जाई। तिमि सब दुःख अभिमानहिं आई
मिटइ मोर केहि बिधि अभिमाना। कहहु कृपानिधि सोइ बिधाना
काम क्रोध मद लोभ बिकारा। सब मिलि कीन्ह मोर मन छारा
धीरज तोष बिराग भुलाई। बिषय धुन्ध सब पर इमि छाई
मोर पंख जिमि पवन डोलावै। तिमि मम चित नहि थिर रहि पावै
स्वान सदृस भटकत चहुँ ओरा। तृप्ति न होत तृषा घनघोरा
नहिं पिटार पूरइ जल पाई। चित न भोग सों कबहुँ थिराई
सिन्धु तरंग तीर तरु ढावै। बिषई चित सागर किमि थावै
तुंग तरंग बासना बेगा। अंचल स्वभाव उठत संबेगा

दो०—चित्त कीन्ह अस दीन मोहिं मृगी समूह अकेल।
मुनिवर बिसरेउ आतमपद समुझि परइ नहिं खेल ॥२२॥

फिरइ सिंह पिंजर मँह जइसे। मम मन फिरइ बासना तइसे
सूखे तृन सम मम चित जरई। तिसुना बनि बनि धूम निसरई
दूध बारि करि बिलग बतावत। चित नहिं मोर हंस बनि पावत
चाहौं जबहिं आतमपद पाना। विघ्न करत यह चित तब नाना
अवरोधहिं गिरि सरितहिं जइसे। रोकत चित मोहिं हे मुनि तइसे
यह चित अरि जेहिविधि बिनसाई। करहु महामुनि सोइ उपाई
बालक डरपहिं लखि परछाहीं। मिथ्या भय उपजत मन माहीं
अग्नि अहार सिन्धु कर पाना। सहज मेरु लंघन मैं जाना
किंतु चित्त की चंचलताई। मुनिवर रोके नाहिं रुकाई

दो०—चील उड़त जिमि गगन मँह उतरत भू लखि मास।
विषय देखि तिमि चित्त यह चाहत पहुँचन पास ॥२३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चेतन नभ तिसुना निसि आई । होइ उलूक कामादि फिराई ।।
ज्ञान भानु बिनु भये प्रकासा । होत न मोह निसाकर नासा ।।
बोध किरन तिसुनहिं बिनसावत । आतम ज्ञान हित रुचि तब आवत ।।
चित पहार तिसुना सरि धारा । उठहिं तरंग बिचार अपारा ।।
तिसुना मोर नचत घन भोगा । जेहिं ते उपजहि मुनि सब रोगा ।।
गुन समीप जौ चाहौं जाना । तिसुना बिघन पसारति नाना ।।
नारि पुरुष सुत कुल परिवारा । यह सब तिसुना कर बिस्तारा ।।
आसा फाँस इन्द्र धनु घेरा । षट बिकार तेहि बीच बसेरा ।।
तिसुना साँपिनि छुअत सुहाई । प्रान हरइ विष अति दुखदाई ।।
जेहि तम राति धीर डरपाहीं । नैन वन्त कछु नाहिं लखाहीं ।।
बासना दीपक जीव पतंगा । कइसे होइ मोह कर भंगा ।।
डार डार कूदइ कपि जइसे । तिसुना जानि परइ मोहिं तइसे ।।
जेहि विधि दीन कीन्ह मुनि मोहीं । जुगुति कहउ बिनवउँ मैं तोहीं ।।

सो०—नहिं यह अग्य न तग्य परम अमंगल देह मुनि ।
होइ नाहिं तप जग्य अरथ न येहि ते सिद्ध कछु ।।२४।।

नाना रूप बिबिध स्वर बोलत । अहंकार मूरति जिमि डोलत ।।
रोग रेत यह नाव सरीरा । बिनु बिराग जल लगइ अधीरा ।।
सतत प्रयास चलइ पतवारा । पार होइ तब येहि संसारा ।।
भव सागर तिसुना कर बारी । तेहि महं बोहित देह हमारी ।।
रोग मगर बहु बिघन मचावै । पवन बिराग पार लेइ जावै ।।
कवनौ उपाय होइ सोइ पारा । नहिं कीन्हें बूड़ै मझधारा ।।
सुखी सोइ जो पारहि गयउ । नहिं परि सिंधु निरत दुःख भयउ ।।
नर जेहिं देहहिं निज करि माना । पोषत करि बहु जतन बहाना ।।
अन्तु न संग जाइ यह देहा । मूरख तदपि न छाड़त नेहा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीव चलत अस करि पछितावा। जेहि हित कीन्हेंउँ बहुत बनावा
सोइ आज मम संग न लागा। वृथा कीन्ह येहि संग अनुरागा
देह प्राण मन बुद्धि अहंता। इन्द्रिय मोह भाव कर अन्ता
बिनु अस भये मुक्ति नहिं होई। भरमि जाल दुःख पावइ सोई
सपन झूठ जो मानइ साँचा। कपि सम बन्धन परि सोइ नाचा
काठ बिकार ज्ञान कर ज्वाला। जोइ जारइ सोइ सुखी कृपाला
परमानन्द लहहिं मुनि सोई। तन अभिमान करहि नहिं जोई
देह सँजोग सबहि दुःख साईं। मान मृत्यु भ्रम मोह बुढ़ाई
तजि अभिमान सकल धन पावै। जिमि नद नार सिन्धु महँ आवै

दो०–नहिं अभिमान न मोह मन नाहिं भोग कर चाह।
जासों पावौं परम पद सोइ कहउ मुनि राह ॥२५॥

बाल काल मानहु दुःख मूला। पावत जनम चलइ प्रतिकूला
इच्छा दुःख संताप दीनता। मूढ़ ग्रहत दुर्जनहिं हीनता
छन महँ नेह छनहिं महँ क्रोधा। चंचल मन कत पावइ बोधा
स्वान सरिस भोगइ अपमाना। कपि समान लोलुप एहि जाना
परम मूढ़ नहिं रंच बिवेका। अर्थ हीन बहु मांगन टेका
युवा काल नहिं कम दुखदाई। काम पिसाच चढ़हि सिर आई
पंकज चित इच्छा दल काढ़े। दुःख पावत परि परि अति गाढ़े
सब बिकार आवहिं तरुनाई। जिमि धनपतिहिं दीन मिलि जाई
युवा काल जिमि निसा घनेरी। करहिं दोष मिलि हेरा फेरी
लक्ष साधि जिमि छूटहिं बाना। विषय देखि मन करत पयाना
स्वर्ण कलस मदिरा जिमि सोहै। तइसइ तरुनाई मन मोहै
सिंधु तरंग रूप तरुनाई। छन भंगुर सहजहि मिटि जाई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—परम सत्रु यह जीव कर बचि पावैं सो धन्य।
तिसुना प्रेरित चित्त जहँ चिन्तन होई न अन्य ॥२६॥

ाम हस्ति युव काल जँजीरा। सुखी सँयोग वियोग अधीरा ॥

सवैया

केते गुनी बुधिबन्त प्रसन्न सुखी जन को मन होत है खीना।
निर्मल नीर भरी सरिता बरखा ऋतु में बनि जात मलीना।
ज्यौं तरु देह जगी युव बेलि मनो अति होत तृषा के अधीना।
तोष बिराग कहाँ ठहेरैं भव सागर में तलपैं मन मीना ॥
ज्यों तम में नहिं बस्तु को ज्ञान सुभासुभ को नहि होत बिचारा।
काम ही काम लखैं चहुँ ओर महामुनि ध्यान चढ़ो रहै दारा।
मानव जन्म है धन्य वही जहाँ बासना को न चलें कछु चारा।
ागर लाँघिबे में जो समर्थ युवा वय लाँघि न जात है पारा ॥

ा धूरि चित ताल गिराई। दूषित करत पवन तरुनाई ॥
ावर यह अवगुन कर खानी। करत सदा अपने मनमानी ॥
हु कृपा जनि मोहि लुभावइ। जासों मन भरमै दुख पावइ ॥

दो०—युवा न होंहि विनम्र मुनि जगइ न तोष बिराग।
जानन चहहुँ उपाय सोइ चित व्यापै नहिं राग ॥२७॥

ा वासना हेतु कर नारी। बढ़हिं बिकार बिवेक बिसारी ॥
ा, मूत्र, रुधिर मिलि सारा। रचित देह कर सकल प्रसारा ॥
ा बसन सिंगार सजावै। लागइ सुघर मनहिं ललचावै ॥
बिचार करि देखइ कोई। ताके मनहिं मोह नहिं होई ॥
विष बेलि मनोहरताई। हरत प्रान अतिसय दुखदायी ॥
ानास हित चाहत कामी। कपि समान बनि सोइ अनुगामी ॥
बन आगि बनहिं को जारति। कामआगि तिमि नर कहँ मारति ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बन अगिनी घरषन सों जरई। सुमिरत काम अगिनि तन ब
जरा-मृत्यु नहिं करैं चढ़ाई। हे मुनि बरनउ सोइ उपा

सो०—जगत बीज यह काम हनत अहरनिस जीव को।
मुनिवर कहउँ बिचारि येहिकर इच्छा मोहिं नहिं ॥२

बालकाल पर चढ़ति जवानी। सोउ नसै जब देह बुढ़ा
जर्जर अंग छीन मति होई। जाइ काल के गालहिं सो
वृथा होत बूढ़न कर जीना। सरि तट के तरु प्रान बिही
पवन चले जिमि पात उड़ाई। तिमि बूढ़हिं सरीर बिनसा
काया कृषित रोग सब आवैं। सुत औ नारि नेह नहिं ला
फल पाके तरु देत गिराई। बूढ़ देखि जग होत हँसा
परत तुषार कमल झुलसाई। जर्जर तइसइ होत बुढ़ा
कूबड़ देह होत सित केसा। सक्तिहीन नहिं बल लवले
रहइ मोह सब कृत्य नसाई। एक क्रोध सब ऊपर
तिसुना बढ़इ चपलता जाई। व्याध उलूक ग्रसहिं तन आ

दो०—बालकाल महँ मूढ़ता दोष खानि युव काल।
येहिते इन्हकर चाह मोहिं होत न तनिक कृपाल ॥

जे बड़ सूर समर संहारे। तेऊ जरा काल ते ह
परवत कीन्ह चूर जे बीरा। जरा कीन्ह तिन्ह परम अधी
जरा आगि लगि सकल सरीरा। निकसत तिसुना धूम अधी
जरा सबहिं मुनि विदस बनावत। सबहिं जीति निजध्वज फहरा
जरा जँजीर बन्हा नर दीना। सिथिल अंग जीवन सुख ही
जिमि निसि पाइ कमल सकुचाहीं। तिमि बूढ़े पन बल गलि जा
तिसुना बढ़ति सतत हरषाई। भांति भांति निज रूप ब

दो०—मुनिवर आयु प्रवाह महँ उलझे जीवन जाल।
तरु अहार जिमि गज करत वृद्ध देह तिमि काल ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हि जग जाल फँसत नहिं सोई । जगत झूठ करि जानत जोई ।।
ान हीन जे रत संसारा । करत भोग कर चाह अपारा ।।
ाकर गति बालक सम होई । छाया मुकुर गहन चह जोई ।।
ाल ग्रास यह सकल पसारा । खाइ मूस जिमि पाक अनारा ।।
ह लगि मुनि यह जगत लखाई । काल कराल गाल महँ जाई ।।
ंह मृगहिं जिमि ग्रास बनाये । ब्रह्मादिकहिं काल तिमि खाये ।।
न पल घरी पहर दिन मासा । बरस आदि सब काल तमासा ।।
ानि परइ नहिं काल सरूपा । बरखा सीत छाँह अरु धूपा ।।
ग तरु रूप जीव सब पाता । भक्षण काल करत मद माता ।।

दो०–महाक्रूर यह काल मुनि सबहिं बनावत ग्रास ।
याही ते जग होत है स्थिति प्रलय प्रकास ।।३१।।

तिक कलप काल गहि खावा । थकेउ नाहिं नहिं कबहुँ अघावा ।।
न्द्रहिं कीन्हेउ रंक अपारा । राई करत सुमेरु पहारा ।।
ोकर भयउ समुद्र समाना । रवि औ ससि कंदुक करि माना ।।
ानी फसहिं न यहि जग माया । येहिते उन्हहिं काल नहिं खाया ।।
व धारहिं नर सिरकर माला । जानहु सोइ काल कर हाला ।।
ोउ न समर्थ काल के आगे । देव नृपति दानव डरि भागे ।।
ीव अन्न धरि जग बटलोई । राग-द्वेष कर आगि सँजोई ।।
रछी कर्महिं काल चलावत । जासों कोउ नहिं थिर रहि पावत ।।
रम कठोर दया नहिं लावत । येहि विधि मुन्हि मोहिं काल डरावत ।।

सो०–जेहि उर दया न छोह को न डरइ अस काल सों ।
टूटइ जेहि विधि मोह मुनिवर कहहु उपाय सोइ ।।३२।।

हेउ राम मुनि काल कुमारा । फिरत जगत बन करत सिकारा ।।
पु-पाँखी सम सबहि डराहीं । एक एक करि सब मरि जाहीं ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रलय काल काहू नहिं बाँचै। चण्डी जगै कालिका नाचै।

बन मृगहिं ज्यों दोउ सिंह सिंहिनि खात सब दुःख पावहीं।
तिमि काल सहितहिं कालिका ग्रसि जीव हर्षित नाचहीं॥
तेहि सक्ति रूपा चण्डिका कत उदर भारी को कहै।
पूरहि न तबहुँ ललाति नाचति जदपि जग सरबस गहै॥
कछु काल बीते पुनि करहिं उतपाति सकल भव जाल को।
बन बाग धरा पहार पोखर सरित तृन तरु ताल को॥
बहु जीव जनमि विनास पावत काल कछु पुनि पाइ के।
विरचत मनोहर सिंधु नासत पुनः आगि लगाइ के॥
सुन्दर बनज बन रचत बिनसत तेहि तुषारहि मारि के।
बहु गाँव नगर सिंगार करि रखि देत पुनः उजारि के॥
कोउ रहत थिर नहिं काल बस बिगरत बनत संसार यों।
का कहउँ कहु 'जगदीश' गति अति लगत हमहिं असार यों॥
नहिं चाह मोरे मन तनिक येहि भ्रम जनित संसार की।
कोउ सुख न पावत प्रीति करि येहि काल गलित असार की॥
अस काल प्रेरित नाथ विस्व असार कर संग किमि गहौं।
संसय जगत इमि मोर अन्तर राह किमि प्रभु सोइ कहौ॥

दो०—नीचहि ऊँचो करत है करत ऊँच को नीच।
जग काँपत येहि काल सों सबहि मिलावत कीच॥३३॥

अति बिसाल येहि कर आकारा। मेरु नगेस कुण्डलहिं धारा।
सीस अकास पतालहिं चरना। दस दिसि भुजा सिंधु कर कँगना।
धरा थार जीवहिं जेवनारा। कर त्रिसूल मूसल हथियारा।
सूर्य चन्द्र लोचन दोउ ताके। तारक माथ विन्दु सम जाके।
ताँत फाँस कालिका सम्हारे। जेहि ते सब जीवन्ह को मारे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चौ०—पजावत नासत जग सारा। नाम कृतान्त ताहिं सों धारा॥
थ अभाव धनुष जब धारत। राग द्वेष बानन्ह सों मारत॥
लक घर निरमत बिनसावत। तइसइ कालहु खेल रचावत॥
वर काल क्रिया कर जाला। पाँखी सदृस जीव कर हाला॥

दो०—स्थावर जंगम जगत यह काल गाल महँ जाइ।
केहि के आश्रित होउँ मैं मुनिवर कहहु बुझाइ॥३४॥

वल आयु तीव्र गति धावत। बाल युवा वृद्धापन आवत॥
ग भोग संकट धन सारा। मृगतृष्णा सम सकल पसारा॥
दायक जो देत लखाई। इन्हहिं सेइ कोउ सान्ति न पाई॥
मि सागर बहु उठत तरंगा। उठि बड़वागि करत रस भंगा॥
न येहि भाँति पदारथ सारे। नहिं सुख होत आइ व्यवहारे॥
गर मेरु दैत्य गन्धर्वा। भू यम बरुण चन्द्र ग्रह सर्वा॥
ा बिष्णु रुद्र गन देवा। हे मुनि ये सब काल कलेवा॥
सब नासवान केहि साधहुं। भ्रम मय जगत डोर कहँ बाँधउँ॥
कार जीर्वहिं दुःख दीना। यह जानउँ मैं सुनहु प्रवीना॥
पतंग नाचत बन्हि डोरा। भरमत जीव तिमिहिं चहुं ओरा॥
रथ चढ़ि दिनकर नभ फिरई। तिमि जीर्वहिं चढ़ि अहं बिचरई॥
कि जीव परमारथ भूला। परि दुःख सिंधु सहत सब सूला॥
३। बिचार बोध बिनु आये। तिसुना दूरि कबहुं नहिं जाये॥

—अस भ्रम जर्गाहं न राग मम कहहु नाथ समुझाइ।
अविनासी पद मिलइ मोहिं सकल भरम बिनसाइ॥३५॥ क
जो सुख-दुःख होनिहार है रोके कहाँ रुकाहिं।
बइठे कोटहि जाइ या घोर कन्दरा माहिं॥३५॥ ख

त नासवान यह सारा। किमि रुचि करउँ असत संसारा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्यानहीन कर व्यर्थहिं जीना। जे इन्द्रिय के रहहिं अधीना।
यह जग सरि तिसुना कर बारी। राग द्वेष बिचरत मछ भारी।
येहि सरि परा जीव दुःख पावै। नासवान जग में रुचि लावै।
युद्ध समुद्र पार जो होई। मानहुं नाहिं बीर मैं सोई।
इन्द्रिय सिन्धु तरंग अनन्ता। करै पार सोई बलवन्ता।
मूढ़ जीव अस कारज करई। जेहि कर दुःख परिनाम निसरई।
झूठ पदारथ में भरमावै। तिन्हहिं धीर कइसे मिलि पावै।
येहि सरि कर अति चंचल धारा। तट तरु तोष बिराग उपारा।
नारि बेलि विष मोहहिं रूखा। चित अलि बैठि लहत अति दूखा।

दो०—पसुवत नर ते होत हैं दिन फिरि बन व्यापार।
राति होत तिन्ह कर सदा घर खूँटा आधार ॥३६॥

जिन कर कछु परमारथ नाहीं। तिन्ह कर तीनहु काल नसाहीं।
जीव मनुज गिरि पर जिमि आई। नभ फल पावन आस लगाई।
कहँ अकास महँ फूलत फूला। राग द्वेष कर पावहिं सूला।
अस आसा मूरख मन लावैं। जीवन जाइ दरस नहिं पावैं।
अस बिरक्त खोजेउ न लखाहीं। विषय भोग इच्छा जेहि नाहीं।
पंचतत्त्व कर देह प्रसारा। जनमत मरत सतत व्यापारा।
येहि आश्रित रहि किमि सुख पावउँ। ताते मुनि मैं नहिं रुचि लावउँ।
युग कर सहस चौकड़ी जाये। बिधि कर एक दिवस कहलाये।
अस दिन गये प्रलय तब होई। बिधि समेत रहिजात न कोई।
केतिक बिधि जहँ गये नसाई। हम आपनि का बात चलाई।

दो०—नासवान चलरूप सब स्थिर रहै न कोय।
येहि ते भोग विलास कर इच्छा मोर न होय ॥३७॥

जिमि मरु वारि हेतु मृग धावै। तिमि तिसुना परि नर दुःख पावै।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नारि पुत्र कुल तबहिं लखाई। जब लगि देह नाहि बिनसाई ।।
छूटत देह न कोउ लखि पाये। गये सब कहाँ कहाँ ते आये ।।
तेल बाति मिलि करहि प्रकासा। पर जरि गये होत सब नासा ।।
बाती बन्धु नेह कर तेला। दीप सरीर इहइ सब खेला ।।
बन्धु जगत अइसइ मुनि होई। जइसे तीर्थ चलइ संग कोई ।।
अहंकार ममता रजु जोरे। भरमत कल्पित सुखहिं निहोरे ।।
आत्मग्यान बिनु भये मुनीसा। झूठइ जगत साँच करि दीसा ।।
पात नाहिं तरु सों गिरि जुरई। देह मोह परि ज्ञान न फुरई ।।
जब लौं आत्मज्ञान नहिं आवै। तब लौं जग यह साँच लखावै ।।

दो०–जो कछु देखउँ नाथ मैं लागै सकल असार।
नासवान येहि जगत में केहिकर गहौं अधार ।।३८।।

रहइ नाहिं थिर कवनउँ रूपा। कबहुं छाँह कबहुँक होइ धूपा ।।
जहँ जलधार परी तहँ रेता। ऊसर बंजर बनि गये खेता ।।
परबत गर्त गर्त गिरि भारी। निर्जन ठाँव विपुल नर-नारी ।।
देखत देखत सब बदलाई। केहि के सरन नाथ मैं जाई ।।
तेजवन्त बलसील बिलाने। जे जनमे सब काल समाने ।।
कोउ पदार्थ नहिं एकरस रहई। नव नव रूप सबइ नित गहई ।।
छन-पल माहिं हमहु को जाना। चंचल जग कर इहइ प्रमाना ।।
राजा रंक रंक बनि राजा। बिगरि बनत बनि बिगरत काजा ।।
बालक चित सम जग न थिराई। स्वाँग करत सब नट की नाई ।।

दो०–पुरुष नारि तिय होहिं नर पसु जन जंन पसु रूप।
जड़ चेतन चेतन जड़ मुनि सब जगत अनूप ।।३९।।

मानव देव देव नर होई। जग संपदा न थिर रह कोई ।।

सवैया

देखत हौं इन आँखिन सों केतने बलसील भये औ बिलाये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मोहक ठाँठ बने उजरे औं हरे भरे बाग बगीचे सुखाये ॥
श्राप हू होइ बरदान गये वरदान हू केतिक श्राप ह्वै छाये ।
आपत-संपति चक्र चले 'जगदीश' कहाँ चित मोर थिराये ॥
सूरज हू तम रूप बनें मधु पूरित चन्द्र छटा बिनसाये ।
मेरु हिमाद्रि नगेस सलोक मनुष्य निसाचर जोभी हैं आये ॥
ईस्वर आदि समेत त्रिदेव बचे नहीं कोऊ सदा जो लखाये ।
का कर बाँह गहौं 'जगदीश' सबै जब कालके गाल समाये ॥

दो०—जग की जे गति जानिहैं माया ठगइ न ताहि ।
बलि चढ़िबे को जानि के कौन भोग लपटाहिं ॥४०॥

मूरख ही अस करत बिचारा । मच्छ पीठ चढ़ि सागर पारा ।
पवन धूरि बनि क्रूर नचावत । तिमि कालहु जीवहिं भटकावत ।
काल अगनि जग ईंधन जानउ । जो येहि फँसइ मूढ़ सोइ मानउ ।
देखत देखत जगत बिलावै । नाहिं चाह येहि ते मन आवै ।
विष मिश्रित यह जगत मिठाई । जोइ सेवइ बिनास सोइ पाई ।
भोग आगि जग झुलसत तइसे । गज पद चाप कमल बन जइसे ।
पवन घनहिं जइसे बिनसावै । काम क्रोध तिमि गुनहिं मिटावै ।
कंटक कंटकारि फल-फूला । तइसइ विषय बासना सूला ।
मोती जीव बासना धागा । हार रचइ मन नट करि रागा ।
जबहिं देत चेतन गर डारी । टूटे ताग मिटइ भ्रम भारी ।
बन्धन हेतु भोग अभिलाषा । जेहि परि नाहिं सान्ति कर आसा ।

दो०—राज गेह बन भोग कर इच्छा रंच न कोइ ।
जनम मरन सुख दुःख नहीं आत्मज्ञान जौं होइ ॥४१॥ क

येहि ते मुनि चाहउँ इहइ मेटउ मोह हमार ।
विषय सर्प जेहि के डसत भोगत जनम हजार ॥४१॥ ख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय भोग सम विष नहिं कोई। जनम जनम कलपावत जोई ॥
बज्र घाउ आरहु कर चीरा। भोग पीर मन होत अधीरा ॥
जउ न मोर अज्ञान नसाई। धीर सिला धरि बइठब जाई ॥
कहेउ राम मुनि सन कर जोरी। सुनहु नाथ बिनती यह मोरी ॥
मोह कीच जग गर्त अपारा। मूढ़ गिरत नहिं लागत बारा ॥
मिटउ बुधि कर चंचलताई। अचल होइ परबत की नाईं ॥
निज सुख हेतु देह जिन्ह जाना। ते भव कूप सहत दुःख नाना ॥
मूरख रहइ भोग में लीना। ताते बुधि होइ जात मलीना ॥
सरि मलीन बरखा ऋतु जइसे। भव परि होत बुद्धि मुनि तइसे ॥
नृप जनकादि सान्त किमि रहईं। कमल भाँति अवगुन नहिं गहईं ॥
सोइ जुगुति मोहिं कहउ बखानी। माया रहित होहिं जिमि ज्ञानी ॥
आत्मज्ञान बिनु भये प्रकासा। होत न मोह निसा कर नासा ॥

दो०-सोइ उपाय करउ मुनि जासों यह बिनसाइ।
सीतल अन्तःकरण होइ बुद्धि नलिनि बिकसाइ ॥४२॥ क
नहिं घर भावइ हमहिं अब नहिं चाहौं बनबास।
देहु सोइ पद मुनि हमहिं जासों मिलइ प्रकास ॥४२॥ ख

जीअन चाहहिं मूरख प्रानी। काल ग्रास कर नास कहानी ॥
काल ग्रसै तइसइ लपकाई। जस बिलार मूसक गहि खाई ॥
मुनि येहिकर कौन उपाई। जासों जगत रोग यह जाई ॥
जेन जोग भ्रम नासक जोई। बरनउ प्रभु उपाय तुम सोई ॥
फँसहिं जगत मूढ़ ते प्रानी। ज्ञानी जन न फंसहिं भ्रम जानी ॥
तीन लोक भू नभ पाताला। सकल पदारथ कर यह जाला ॥
तहुँ नाहिं कोउ बस्तु लखाई। जेहि विलोकि ज्ञानी ललचाई ॥
भ्रम कलंक चित्त ससि लागा। छूटे बिनु प्रकास नहिं जागा ॥
जासों काम कलंक नसाई। कहहु कृपा करि सोइ उपाई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आगि परे पारा जस होई। काम आगि सों चित गति सोई।
भव बन भोग रूप अहि बसई। अवसर पाइ जीव कहँ डसई।
राग द्वेष मिश्रित कृत सारा। कोटि उपाय जाइ नहिं टारा।
करहु जुगुति मन सत्ता जावै। सीतल अन्तःकरण सुहावै।
केहि विधि पायेउ नाथ बतावहु। मोहिं निवृत्ति कर राह देखावहु।
सब समेत अहमिति कर त्यागा। साधहुँ सोइ साधन मुनिराजा।

दो०—मूरति बनि तब लौं रहौं जब लौं होइ न ज्ञान।
सांस निसरि तन छीन बनि चाहे छूटइ प्रान ॥४३॥

सो०—बिरमे राम कुमार ऋषि सन आपनि पीर कहि।
देखि गगन घन भार पिहिकि सिखि चुप होत जिमि ॥४३॥

जब चन्द्र बर रघुवंस नभ श्रीराम निज मत कहि गये।
गाधिज बसिष्ठ नरेस सचिव समेत रोमांचित भये॥
मातादि कुल परिवार सेवक स्वजन की गति को कहे।
सुनि कीर पसु पाँखी निकट जे स्तब्ध से सब होइ रहे॥
गन्धर्व विद्याधर गगन सब देव सिद्ध निहारि के।
कहि धन्य धन्य प्रमोद प्रकटेउ पुहुप सुरभित डारि के॥
उमगाइ क्षीर तरंग मौक्तिक माल ज्यों गर डारहीं।
भरि पहर बरसे सुमन दल सब हरषि जीवन बारहीं॥

सो०—व्यापी मधुर सुगन्ध अलि दल फिरि गुंजन लगे।
छाये विपुल अनन्द वृन्दारक प्रमुदित भये ॥४४॥

नमोनमः स्वर अंबर छाये। जुरि देवन रघुबर गुन गाये
कमल नयन कुलमनि प्रिय रामा। सब जानत देखेउ बहु धामा
भाँति भाँति के बचन सुनाये। अब लगि कतहुँ न हम सुनि पाये
हम देवन कर गरब निवारेहु। बुधि हमार पूरित करि डारेहु
परमानन्द भयउ सुनि बचना। को करि सकइ मधुर अस रचना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऋषि बोलेउ कुल पूजन जोगू । मुनि सम्मुख प्रगटेउ बिनियोगू ।।
चाहिय सुनिय मुनीस्वर बानी । जो जग बिदित महा गुरु ज्ञानी ।।
नारद व्यास पुलह तहँ आये । गुरु बसिष्ठ मुनिवर सिर नाये ।।
पूजे नृपति सबहि सनमानी । बैठारे सुचि आसन आनी ।।
नारद के कर राजत बीना । व्यास लसे परिधान नवीना ।।
बामदेव भृगु ऋषि दुर्बासा । पुलह पुलस्त्य मनोहर बासा ।।
ऋषि ब्रह्मर्षि देवमुनि सारे । जे तेहिं सभा रहे पगु धारे ।।
कोउ सिर जटा मुकुट मनि माला । हाथ कमण्डलु अरु मृगछाला ।।
कोउ बाघम्बर अरु कोपीना । कोउ सुबर्ण मेखला नवीना ।।
कोउ रबि ससि तारावत कोई । राज सभा जगमग दुति होई ।।
राम सबहिं पद बन्दन कीन्हा । ऋषि अनुशासन आसन लीन्हा ।।
उन्हहिं बिलोकि सबहि हरषाने । धन्य धन्य कहि कहि सनमाने ।।

दो०–नारद बोलेउ कहेउ तुम बचन बिबेक बिराग ।
राम हमहिं अति प्रिय लगे बोध सबहि मन जाग ।।४५।।

तुम उदार पण्डित बुध ज्ञानी । महावाक्य प्रकटेउ निज बानी ।।
तुम सम क्षत्रिन मँह नहिं कोई । मति तव ज्ञान बिराग भिगोई ।।
भव निधि पार चहँइ जे जाना । येहि हित साधइ जुगुति बिधाना ।।
सुनहु राम प्रिय बात हमारी । ग्यान गहन के ते अधिकारी ।।
नाना तरु धरती पर होई । चन्दन होइ उपजै कोइ कोई ।।
पंचतत्व निर्मित सब प्रानी । कोउ एक होत इन्हहिं मँह ज्ञानी ।।
बिनु बिवेक जन मृतक समाना । तिन कर किमि कहु करउँ बखाना ।।
गज समूह बिचरहिं बन माहीं । तिन मह मुकुत जुक्त बहु नाहीं ।।
तुम समान नहिं जन बहुतेरे । पुन्य प्रभाव मिलहिं बहु हेरे ।।

गहनसील तव बुद्धि प्रिय जगमग दिव्य प्रकास ।
ब्रह्म ज्ञान तुम पाइहौ मोरे मन बिस्वास ।।४६।।

(वैराग्य प्रकरण समाप्त)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुमुक्षु प्रकरण

★

ऋषि बोलेउ मुनि ये बचन करत सदा कल्यान।
चाह सुनन कर होत तेहि जेहिकर पुन्य महान ॥१॥

जनम जनम जे पुन्य जुटावहिं। कल्पवृक्ष कर फल ते पावहिं
परम बोधकारक ये बचना। गूढ़ ज्ञान प्रद अद्भुत रचना
अस नारद जब बात चलाई। बिस्वामित्र कहेउ हरषाई
हे ज्ञानिन में श्रेष्ठ कुमारा। बोध तत्व जानत तुम सारा
कछु न सेष तोहिं जानन जोगू। हेतु बिराम चहिय कछु जोगू
ब्यास तनय सुक तुमहिं समाना। तुम्हरिहि भाँति ज्ञान सब जाना
तेउ विश्राम भये सुख पावा। अस कहि सुक इतिहास सुनावा
सास्त्र पढ़ेउ जग दुःख प्रद जाना। सान्त न भयेउ पाइ सब ज्ञाना
निज संसय तब पितहिं बतावा। ब्यास कृपा करि तेहि समुझावा
तदपि न सुक मन धीरज आवा। पितु तब जनक समीप पठावा
सुक मिथिलेस नगर तब आये। द्वारपाल सन खबरि जनाये

जिज्ञासा दृढ़ जानि के जनक बोलाये पास।
सादर कीन्ह प्रनाम तेहि पाइ ज्ञान आभास ॥२॥

सुक बोले नृप तुम बड़ ज्ञानी। तव कीरति मम तात बखानी
परम बोधहित मोहिं पठावा। सुनि नृप ब्यास सुजस बहुगावा
जदपि जनक बहुबिधि समुझावा। तदपि ब्यास सुत तोष न पावा
कह सुक सास्त्र तात मत एहू। तुम्हहुँ बिदेह सोइ सब कहेहू
हमहुं नाथ जानत सब सोई। मन विश्राम तदपि नहिं होई
बोलेउ जनक सुनहु मुनि ज्ञानी। येहि ते अधिक न कछुक कहानी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चित संबेदन सों जग होई। परमानँद चित चेतन जोई ।।
आत्मतत्व निर्मल तब होई। येहि हित करइ साधना जोई ।।
तुम सब बिधि येहि के अधिकारी। आत्मज्ञान हित चाह तुम्हारी ।।
जो मुनि तोहि मम पास पठावा। जानब नेह नीर बरसावा ।।
येहि बिधि सुक बिदेह कर गाथा। ऋषि बरनी बहुबिधि बिख्याता ।।
हम बाहर ते करत प्रयासा। अन्तर मँह तुम्हार बिस्वासा ।।

सो०–रामहु सुकहि समान बिश्वामित्र कहेउ नृपति।
चाहिय इन्हहुँ विधान सान्ति हेतु मंगल करन ।।३।।

भोग चाह नहिं रामहिं राजा। भये दीन सब नासत काजा ।।
बन्धन जगत कहावत जोई। भोग नसे बिनु मुक्ति न होई ।।
आत्मानन्द ज्ञान जब जागइ। विषय बासना कर तम भागइ ।।
जिमि मरुथल तरु लता न कोई। तिमि बुधमन बासना न होई ।।
फल कामना विषय नहिं त्यागहिं। बुध सुचि भाव स्वभावहिं जागहिं ।।
जिमि रबि उदय न तमस लखावै। तिमि नहिं भोग राम मन भावै ।।
बिदित देव प्रगटे श्री रामा। येहि ते चाहत मन बिश्रामा ।।
सोइ कहहु सोइ करौं नरेसा। जासों हटइ राम कर क्लेसा ।।
मुनि बसिष्ठ अस जुगुति बतइहैं। जासों राम सान्ति सुख पइहैं ।।
रघुकुल गुरु बसिष्ठ जग जाना। दीन्ह सदा रघुबंसिन ज्ञाना ।।

दो०–त्रिकालज्ञ सर्वज्ञ सोइ साक्षि रूप दिनमान।
तेहि उपदेसे राम कँ मिलिहि आत्मपद ज्ञान ।।४।। क

सो०–दीन्हेउ बिधि जो ज्ञान जब बिरोध मो सन भयउ।
आपहु करउ बखान हे बसिष्ठ सोइ राम हित ।।४।। ख
जागेउ मनहि बिराग सिष्य भाव श्रीराम में।
इहइ उचित मोहि लाग उत्तम पात्र बिलोकि मुनि ।।४।। ग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परम सान्ति सुचि रूप राग कोह भय रहित तुम।
सदा राम अनुरूप ऋषिवर तव उपदेस सुभ ॥४॥ घ

बालमीकि अस कहेउ बुझाई। गाधिज नीति सबहि मन भाई।
नारदादि मुनि अति हरषाने। साधु साधु कहि कहि सनमाने।
बिधि सुत गुरु बसिष्ठ तब भाखे। मुनि तुम जो अज्ञा करि राखे।
विधि उपदेस कण्ठ मोहिं भाई। नहिं भ्रम राम हृदय रहि जाई।
अस कहि कहत भये मत सारा। जासों खुलत मोक्ष कर द्वारा।
संसय राम कीन्ह गुरु पाहीं। दूर भये बिनु मति न थिराहीं।
जे सर्वज्ञ व्यास कहि जाहीं। भये बिदेह मुक्त किमि नाहीं।
गुरु बसिष्ठ तब कहेउ बुझाई। जाने बिनु संसय उपजाई।
चहै विदेह मुक्ति नहिं सोई। सदा अद्वैत रूप रह जोई।
सदा रहत निरवानहिं धारे। परमानन्द सरूप सम्हारे।
जनम मरन आना अरु जाना। साँच नाहिं भ्रम स्वप्न समाना।
राम जगत यह कछु नहि होई। जनमत मरत कतहूँ नहिं कोई।
कदलि खंभ जो पुष्ट लखाई। खोलि देखु कतहुँ कछु नाहीं।
सूर्य किरन संग रेनु उड़ाहीं। तिन्ह कर गणना किमि करि जाहीं।
संबेदन रवि किरन समाना। प्रकटत नसत त्रिलोकी नाना।

कोटि अनन्त त्रिलोक यह ब्रह्म सिन्धु निबसाहिं।
तात भला इनकी कबहुं गणना किमि करि जाहिं ॥५॥ क
जीव असंख्य असंख्य तिमि सृष्टि जानु यह तात।
मृतक भये संकल्प पुर बन्धन मात्र जनात ॥५॥ ख

जस बासना लगति तसि रचना। साँच इहइ जानउ कछु सच ना।
भ्रम ते घूमत जगत लखावै। नाव चढ़े जिमि वृक्ष बुझावै।
दृष्टि दोष नभ दीखति माला। भ्रम ते होत इहै सब हाला।
हम बत्तीस व्यास इमि देखे। दस-दस बारह रूपहिं पेखे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम व्यास इन्ह कहँ तुम जानहु। होइहैं अष्ट अबहिं यह मानहु ॥
वम बेर ब्रह्मा सोइ होइहैं। तात बिदेह मुक्ति तब पइहैं ॥
ालमीकि भृगु हमहिं प्रजन्ता। ऋषि अंगिरा आदि सब सन्ता ॥
न्ह कर उचित समय जब आई। सबहिं बिदेह मुक्ति मिलि जाई ॥

जीवन अउर बिदेह दोउ मुक्ति एक करि जान।
स्थिर जल जिमि होत है चलत तरंग प्रमान ॥६॥

ान भये नहिं भेद लखाहीं। भेद विभेद कतहुँ कछु नाहीं ॥
ीवनमुक्त देह जुत भासा। लोप सरीर बिदेह प्रकासा ॥
ाम सुनहु अब प्रकृति प्रसंगा। प्रमुख ज्ञान कर जानहु अंगा ॥
रुषारथ ते सब सिध होई। दैव करइ कह मूरख सोई ॥
नयसील जो करइ उपाऊ। लहइ सिद्धि सोइ नाहिं दुराऊ ॥
ास्त्र सन्त जो कहत उपाई। बिचरन चित्त प्रयत्न कहाई ॥
तर प्रयास दंभ जुत आसा। गहन चहइ जिमि कुसुम अकासा ॥
ात्म तत्व चेतन संबेदन। फुरइ ब्रह्म पद पावत भेद न ॥
ात्म तत्व कहँ चेतन जानहु। स्पन्दन संवेदन को मानहु ॥
रुढ़ चढ़इ सोइ बिष्नु कहावै। सिव ललाट पै चन्द्र लखावै ॥
ुरुष करत सुमेरुहिं धूरी। सुकृत ताप नासत बनि मूरी ॥

निबल छीनहूँ जो करै पुरुषारथ अविराम।
मनवांछित फल लहइ सो अन्त मिलइ विश्राम ॥७॥

रि सत संग सास्त्र अभ्यासा। संस्कार जीतइ बिस्वासा ॥
ुरुष तजि रह दैव सहारे। ते जानहु गर्दभ तन धारे ॥
हइ अचार असुभ करि त्यागा। संत संग ग्रंथन अनुरागा ॥
ुन गुन अवगुन करइ बिचारा। गुन साधइ अवगुन तजि सारा ॥
ष धैर्य वैराग्य बिचारा। जानहु सुभगुन कै बिस्तारा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साधि इन्हहिं जिन्ह दृढ़ ब्रत धारा। लांघत ते भव सिंधु अपारा।
पिंजर तोरि सिंह होइ पारा। सोइ नाउँ पुरुषारथ धारा।
पुरुषारथ तजि दैव पुकारै। मनहुँ रेत सों तेल निसारै।
जो आपन पुरुषारथ त्यागा। सब सम सोइ जग रहहि अभागा।

याते तुम नित साधहु पुरुषारथ धरि ध्यान।
दैव आस त्यागे बिना होत नाहिं कल्यान ॥८॥

सुधा निकट रहि करइ न पाना। सो किमि लहत अमर विज्ञाना।
तइसइ जे अभ्यास न करहीं। ते किमि कठिन परमपद बरहीं।
मूढ़ जीव निज जनम गँवावै। आपन तीनहुँ काल नसावै।
निज हंता कर दैव सहारा। अस आलसी परत दुःख कारा।
देखेउँ करि बिचार यह सारा। ताते पौरुष हेतु प्रचारा।
सतसंगति करि सास्त्र बिलोकहु। गुन प्रसारि अवगुन निज रोकहु।
राम करहु होइ दृढ़ अभ्यासा। आंनद होइ सान्ति कर बासा।
बालमीकि अस कहेउ बुझाई। सभा उठी संझा जब आई।
सन्ध्या भोजन निसि बिश्रामा। प्रात भये पुनि बइठे रामा।
गुरु आगे तब बात चलाई। पूरब कृत पुरुषार्थ कहाई।
संस्कार जीतइ पुरुषारथ। पावत सोइ जोइ गहत ज्ञान पथ।
पूर्व कुकृत फल अनहित पावइ। मूरख दैवहिं दोष लगावइ।

पूर्व जनम के अशुभ सब होत सदा दुःख रूप।
करि पुरुषारथ नासि तिन्ह पावै सुख अनुरूप ॥९॥

करि एकत्र भाव पुरुषारथ। बाधा रहित होत जीवन पथ।
जेहि पाये पुनि दुःख नहिं होई। परमानन्द मिलइ अस सोई।
पुरुषारथ जे नर नहिं करई। दैव आस रहि हित निज चहई।
संसृति चक्र सोइ भरमावै। सान्ति नाहिं कबहूँ सोइ पावै।
जीवहिं बपन रोग जग लागा। बिनु उपचार जाइ नहिं त्यागा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सन्त-सास्त्र जे भनत उपाऊ। तिन्ह धारे बिनु नाहिं निबाहु ॥
भासइ तत्र अद्वैत अनूपा। सत पुरुषारथ कै अस रूपा ॥
बिनु पुरुषार्थ ताप तिहुँ घेरहिं। सान्ति न होत राह बहु हेरहिं ॥
पुरुषारथ तजि सुख नहिं पावइ। चारि पदारथ तुरत नसावइ ॥
चेतन सुद्ध चित्त संवेदन। इन्द्रिय फुरत रहइ कछु भेद न ॥
पुरुषारथी सिद्धि बहु पावत। नहिं भ्रम जाल ताहि भरमावत ॥
दो०-कर बिनु नहिं कछु गहि सकै कोटिक करै उपाय।
तइसइ पुरुषारथ बिना जनम अकारथ जाय ॥१०॥

सवैया

पौरुष के बल देखौ बृहस्पति इन्द्रहु के गुरु मान्य कहाये।
सुक्र को पौरुष का कहिये जेहि के बल दैत्यहु सिष्य बनाये।
साधना जा की रही जेतनी खगराज समान अकास थहाये।
दैव सहारे परे जे रहे निज बैभव राज समाज नसाये ॥१॥
कारज जाते सधै अपनो कछु ताहि को तात कहौ पुरुषारथ।
जासों है होत अनर्थ अपौरुष मानिये सोई है कर्म अकारथ।
ताल सों लेइ जल तासहि सींचत जानिये मेघ को जीवन सारथ।
त्यों गुन-बुद्धि परस्पर पोषत निर्मल होत बिरागहु को पथ ॥२॥
सास्त्र औ सन्तन के अनुसार संवेदन औ मन इन्द्रिय मानौ।
राग न द्वेष छुवै जेहि ते करि ध्यान सुभासुभ को पहिचानौ।
सान्ति मिलै जेहि ते निज को तजि मान सबै प्रिय सेवक मानौ।
संसृति चक्र के भेदन हेतु उठौ 'जगदीश' इहै ब्रत ठानौ ॥३॥
जे तप तेज बिभूति बिभूषित ज्ञानी गुनी बलवान हुए हैं।
त्यागि के दैव की आस सबै निज जीवन में पुरुषार्थ किये हैं।
जानिये कीट पतंग समान तिन्हैं जिन पौरुष त्यागि दिये हैं।
बिष्नु को देखहु दैत्यन के निरमूलन को अवतार लिए हैं ॥४॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—निज पुरुषारथ ते सबहिं अक्षय पद मिलि जाय ।
भवसागर लंघन हित तुमहू करहु उपाय ।।११।।

दैव दैव मूरख कर बानी । छबि न दैव कर कतहुँ लखानी
पूर्व कर्म जानहु सोइ देवा । इतर दैव कर नहिं कछू भेवा
आगि परे कँह दैव निसारत । कहु अहार केहि के मुख डारत
दैवहिं जौ पूरत सब कामा । तौ उपदेस कौन हित रामा
दैव आस नहिं काज पुराई । बिनु अहार नहिं क्षुधा नसाई
दैव सरीर कबहुँ नहिं देखा । केहि बिधि करउँ दैव कर लेखा
निराकार जौ मानै कोई । तौ साकार संयोग न होई
विस्वामित्रहु दैव भुलाई । पुरुषारथ करि असि छवि पाई
ब्राह्मण भये त्यागि ठकुराई । कीरति जेहि कर अग जग छाई
केहि केहि कर तोहिं बात बतावौं । पुरुषारथ गुन कँह लगि गावौं

दो०—मिलत स्वर्ग सुख पुन्य सों नरक भोग करि पाप ।
कतहुँ चलत नहिं दैव कर देखहु क्रिया कलाप ।।१२।।
कहेउ राम गुरुदेव तुम जानत हौ सब धर्म ।
लोग कहत बिधि दैव हैं करत सबहि जो कर्म ।।१२।।

गुरु बसिष्ठ तब कहेउ बुझाई । जग सुभ असुभ करम फल पा
तेहि पुरुषारथ कहु या देवा । दूसर नाहि दैव कर भेवा
करता क्रिया करम नहिं कोई । दैव रूप भाषउँ किम सो
राम अकास सून जिमि होई । दैव केर जानहु गति सो
प्रकटेउ राम संक गुरु पाहीं । जो अकास सम सून्य कहा
येहि ते भासत दैव सरूपा । कहेउ बसिष्ठ सुनहु सुत भू
दैव नाम पुरुषारथ जानौ । और नाहिं मन मैं कछु मा
पुरुषारथ जग करम कहावै । करम नाम बासना बता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन ते सकल बासना जागै। चाहत जो जग तेहि मँह पागै॥
पूर्व असुभ कृत पाप करावत। सुकृत जीव पुरुषार्थ जगावत॥
देखु बिचारि राम मन माहीं। भिन्न करम पुरुषारथ नाहीं॥

दो०—करम जनित फल जानिये सुख दुःख बादर घाम।
तब येहि मँह पुनि दैव कहु करत कौन अस काम॥१३॥ क

पूर्व बासना दीन मोहिं कीन्ह बहुत कह राम।
अब उपदेसहु करौं का हे गुरुवर सुख धाम॥१३॥ ख

गुरु बोलेउ सुनु राम सुजाना। करत श्रेष्ठ जन सोइ विधाना॥
पुरुषारथ करि असुभ जरावत। मलिन बासना दूरि भगावत॥
पूरब मलिन करम बरिआई। काम कुपथ मँह चित लै जाई॥
जब न रुचइ जग फुरइ बिरागा। पूरब जनम सुकृत तब जागा॥
तुम दोउन बिधि परम सुजाना। येहि ते गहउ आतम बिज्ञाना॥
दृढ़ पुरुषारथ ते भव पारा। जाहु राम आदेस हमारा॥
निर्बासनिक ब्रह्म पद धारउ। नित्य सुद्ध निज रूप सँवारउ॥
जे प्रमाद बस पाप बढ़ावैं। तीनि ताप तपि जनम नसावैं॥
साधक जन अस करहिं उपाऊ। इन्द्रिय स्वबस होहिं सदभाऊ॥
सास्त्र कहत जस तस बरतावै। असुभ त्यागि सुभ करम दृढ़ावै॥

दो०—जगइ सास्त्र अभ्यास ते मनमँह बिमल बिचार।
राम तबहि जानउ खुलै आत्मज्ञान कर द्वार॥१४॥ क

आत्म ज्ञान कर फल इहै बाह्य जगत बिनसाय।
भासइ सुद्ध अद्वैत तब निरगुन रूप लखाय॥१४॥ ख

राम गहहु यह बचन हमारा। मन कर मिटइ कलेस तुम्हारा॥
दुःख नहिं अइहैं तुम्हरे पासा। साधहु येहि करि दृढ़ बिस्वासा॥
चित नहिं गिरइ भोग की खाई। त्याग तुम्हार सखा बनि जाई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

येहि बिधि त्यागहु भोग पसारा । गहन न ताकर होइ दुबारा।
साधन मोक्ष कहत हम जोई । चित थिर राखि सुनहु अब सोई।
बिषय त्यागि होइ सान्त उदारा। धारहु सम तुम भूप कुमारा
बाह्य इन्द्रियन कौ बस करहू । येहि बिधि दम संयम अनुसरहू
परम तत्व आपहि उपजाई । साधि बिवेक परम पद पाई
जेहि लहि कबहुं दुःख नहिं होई । अबिनासी सुख साधन सोई
येहि कँह मोक्ष संहिता जानहु । मिलिहि आत्मपद पौरुष ठानहु
विधि उपदेसेउ जेहि बिधि ताता । सुनहु बतावत तोंहि सोइ बाता

दो०–राम कहेउ केहि कारन बिधि उपदेसेउ तोंहि ।
केहि बिधि धारेउ कृपाकरि मोंहि सुनावहु सोइ ।।१५।।

गुरु बसिष्ठ तब कहेउ बुझाई । बरनउँ सोइ सुनहु चित लाई।
ब्रह्म अनन्त संबेदन होई । बिष्नु रूप होइ राजत सोई।
नाभि कमल ते विधि प्रगटावा । तेइ जड़ जंगम जग उपजावा।
विधि जाना मानव अति दीना । तब उपदेस बहुत बिधि कीन्हा
तप करि सकल कलेस हटावउ । अष्ट सिद्धि नव निधि तुम पावउ
तप बल महाकाल हर भयऊ । तप बल बिष्नु परम पद लयऊ
तपबल इन्द्र सुरन कै राजा । सुक्र भये गुरु असुर समाजा
तप करि हम ब्रह्माण्ड रचावा । पाँच तत्व गुन तीन बनावा

दो०–दृढ़ इच्छा बिनु तप नहीं तप बिनु पौरुष नाहिं ।
पौरुष बिनु अवगुन जनित किमि बिराग बिनसाहिं ।।१६।।

बिधि अनुसासन ते तप कीन्हा । तदपि मनुज मन ताप न छीना
तब बिधि सत्य धरम प्रतिपादा । जासों जन कर मिटइ विषादा
वेहि बल सुखी रहे कछु काला । लवटे बहुरि भयउ सोइ हाला
तीर्थ दान बहु जतन बतावा । जेहि करि सबहिं बहुत सुख पावा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ा०–तिसुना परि पुनि दुःख लहेउ बिधि तब कीन्ह बिचार ।
जनम मरन छूटे बिना इन्ह कर नहिं उद्धार ।।१७।।
व बिधि मानस रूप सँवारा । आतम ज्ञान हित कीन्ह बिचारा ।।
त्व ज्ञान कर बिग्रह रूपा । मोहिं प्रकटाये तब सुत भूपा ।।
मोहिं बिधि के समान तुम मानहु । गर रुद्राक्ष तिन्हहिं सम जानहु ।।
मृगछाला बासन तिमि सोहे । जगत न भासत नहिं कछु मोहे ।।
गोद राखि बिधि मोहिं सन बोले । जगहित तात वदन निज खोले ।।
रि मुहूर्त धारहु अज्ञाना । जासों होइ जगत कल्याना ।।
ष्ठ जनन कर इहइ सुभावा । ससि कलंक निज सीस चढ़ावा ।।
स कहि दीन्हेउ बिधि मोहिं सापा । होहु अग्यानी मोर प्रतापा ।।
न जागेउ मम साप प्रभावा । भाव अभाव जगत लखि आवा ।।
विधि सुत बसिष्ठ मन जाना । चंचल जगत प्रपंच प्रमाना ।।
ा०–जगत जाल दुःख रूप लखि बिधि सन पूछी बात ।
किमि प्रकटत जग नसत किमि मोहिं बतावहु तात ।।१८।। क
राम दीन्ह उपदेस बिधि मोहिं बहुबिधि समुझाइ ।
दूरि कीन्ह अज्ञान जिमि रबि तम देत भगाइ ।।१८।। ख
व मोहि अग्या दीन्हि बिधाता । अष्ट प्रजापति सम तुम ताता ।।
बू भरत खण्ड बसि देसा । जीवहिं तात करहु उपदेसा ।।
हैं जे सुख तिन्ह कर्म बतावहु । आतमसिद्धि हित ज्ञान सिखावहु ।।
तु इहइ तुम जानहु रामा । अस कहि गुरु लीन्हेउ बिश्रामा ।।
म कहेउ गुरु कहउ बुझाई । ज्ञान ते जीव सुद्धि किमि पाई ।।
व बसिष्ठ बोलेउ मृदु बचना । सुनहु तात बिधि कर असि रचना ।।

सवैया

तत्व स्वभाव संबेदन स्फूर्त सरूप सोई बिधि हैं कहलाये ।
सागर को द्रव रूप तरंग ज्यों ताहि समान सुनौ बिधि भाये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है जग सारा उन्हीं का रचा उनही ने है तीनहु काल बनाये।
जीवन बुद्धि मलीन भई कछु काल गये कलिकाल के आये ॥

दो०—वेद सास्त्र मत दुर्यो जब जागेउ पापाचार।
राजधर्म दूषित भये कीन्हेउ पाप प्रहार ॥१९॥

जीव स्वच्छन्द होइ दुःख लहेऊ। लखि लोकेस द्रवित अति भयऊ
सनत देवऋषि हमहिं बोलावा। अज्ञा देइ भूलोक पठावा
पितु अज्ञा तीनउ सिर धारी। सुभ मारग हित नीति बिचारी
दण्डराज थापित तब कीन्हा। ब्रह्म ज्ञान नृपतिन्ह कहँ दीन्हा
चलि तेहि राह परम पद पाये। सुखी होइ दुःख दूरि भगाये
वेद सास्त्र श्रुति बिबिध पुराना। प्रगट कीन्ह उपदेस बिधाना
जप तप दान यज्ञ ब्रत सारा। आनँद हेतु कीन्ह बिस्तारा
जदपि साधि कछु जीव जुड़ाये। तदपि न चित्त सुद्धि करि पाये
बिबिध कामना करि मन फूले। माया बस सरूप निज भूले
सब बिधि अहम भाव जिन्ह त्यागा। ब्रह्मज्ञान तिनके चित जागा
जीवन मुक्त आत्मपद पाये। बहुतक नृपति देव कहलाये
नृप दसरथ पायेउ जिमि ज्ञाना। दसा तुम्हरि राम सोइ जाना

दो०—तुम्हहिं बिराग स्वभाव ते मिलेउ सुनहु हे तात।
दुःख अनिष्ट देखेउ नहीं यह बड़ि उत्तम बात ॥२०॥

लखि मरघट अनिष्ट कोउ जानै। छनिक बिरांग चित्त मँह आ
मरन जानि मन मँह डर मानै। कछु दिन चित बिराग मँह सा
सोइ आसक्त होत पुनि जाई। तात बिराग जात बिसरा
श्रेष्ठ पुरुष बैराग्यहि साधत। मुक्त होत संसार न बाँध
बन्धन तोरि मुक्त गज होई। ज्ञानिहु कर जानहु मति सो
हि बिधि फन्द तोरि नहिं पावत। राग द्वेष नित तिन्हहिं जराव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिमि बरखा दावागी नासै। तैसेइ ज्ञान बिकार बिनासै ॥
बिरस जानि जग जे जन त्यागहिं। तिन्हहिं पदारथ नहिं अनुरागहिं ॥
ब्रह्म ज्ञान अधिकारी सोई। आतम तत्व जानइ चह जोई ॥

दो०—उर्वर माटी मैं बपत जइसे बीज किसान।
तइसइ तोहि उपदेस हित बहु बिधि रचहुँ बिधान ॥२१॥

भोगी पसु समान बन चरई। पुरुषारथी न येहि जग परई ॥
आस्तिक आत्मपरायन जानी। तोहि उपदेसहुं समरथ मानी ॥
सास्त्र बिहित सिष्यन गुन सारे। निरमल बुधि जिज्ञासा धारे ॥
निरमल बसन रंग जिमि चढ़ई। उत्तम सिष्य ज्ञान मन मढ़ई ॥
गूढ़ तत्व भाषउँ मैं तोही। आस्तिक भाव धारि सुनु मोहीं ॥
जो कछु तुम्हहिं गहन नहिं होई। तात प्रस्न जनि रोपेउ कोई ॥
जासों तुमहि ब्रह्म पद होई। करहु उपाउ तात तुम सोई ॥
संग असत्य बुद्धि कर त्यागहु। मोक्ष द्वारपालन्ह अनुरागहु ॥
चारहु पहुंचइहैं ढिग तोही। चित धरि राखहु बरनत ओही ॥
सम सन्तोष बिचार सुसंगा। इन्हहिं मित्र करि धारहु अंगा ॥
एक सधे चारिउ बस होईं। जनि संसय मन राखेउ कोई ॥

दो०—मति बिकसै सुभ गुनन ते जइसे कमल बिकास।
तात सुसंगति के मिले जागइ आत्म प्रकास ॥२२॥ क
जिमि सीतलता पाइके पानी पाथर होय।
तिमि अज्ञान करइ जड़ संसृति सरित डुबोय ॥२२॥ ख

बसत मूढ मन साँपिनि आसा। तहँ पुनि कहाँ सान्ति कर बासा ॥
आत्मतत्व अवरोधइ ज्ञाना। जिमि रबि ढाँपइ मेघ बिताना ॥
बोध कुठार बिकार बिनासै। तब सतसंगति ज्ञान प्रकासै ॥
आत्मज्ञान सुभगुन ते राजत। जहँ पंकज तहँ भौंर बिराजत ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दृस्याडम्बर मन किमि ठयऊ । राई ते सुमेरु किमि भयऊ
राम प्रगट संसय जब कीन्हा । गुरु बसिष्ठ इमि उत्तर दीन्हा

दो०—मिथ्या यह जग जानि कै राम करहु सतसंग ।
दृस्य भ्रान्ति मिटि जाइ सब होइ मोह तब भंग ॥२३॥

दूनउँ मिलि जब एक लखावैं । मन मँह अपर भाव नहिं आवैं
तब जानउ चित होइ अभंगा । उठइ न दूसर भाव तरंगा
दृस्य बोध सब भाँति निहन्ता । आतम बोध ते येहि कर अन्ता
चित दर्पन निर्मल तब होई । असत पदार्थ न भासत कोई
सच्चिद् ब्रह्म जगत बिस्तारा । कंचन भूषण रूप सँवारा
करि उपाइ दृसमल जब नासइ । सत्ता तब अद्वैत प्रकासइ
गुरु कर जुगुति गहै नहिं जोई । तेहि सिद्धान्त प्राप्त नहिं होई
ऋषि अस कहि रामहिं समुझावा । आतमबोध हित जतन बतावा
बहुत काल ते जड़ जग सारा । पचि पचि मरै होइ नहिं पारा
अर्थ जोइ चाहत कोउ पावइ । तेहि के हित प्रयास चित लावइ

दो०—हार मानि लवटइ न जउ सास्त्र सन्त अनुसार ।
दृढ़ अभ्यास निरत रहि गहइ ज्ञान आगार ॥२४॥

राम कहेउ सोइ सास्त्र बतावउ । सोक जाइ सदमार्ग दिखावउ
गुरु बोले यह सोइ रामायन । जानहु तात महा बोधायन
बेद पुरान सास्त्र दरसाई । तीन ताप सब पाप नसाई
जिनकर येहि मँह रुचि नहिं लागै । निज चित हनत विषय रस पागै
चित्त प्रान चेष्टा रत होई । आतमा माहिं रमण कर जोई
ज्ञाननिष्ठ होइ तोष सुहावै । सोइ जन जीवन मुक्त कहावै
जीवन मुक्त काल के पाई । तात बिदेह मुक्त होइ जाई
पूछेउ राम कहउ गुरु सोई । दोउ मुकुतन के लच्छन जोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बोले गुरु सुनु राम सुजाना । लच्छन भनउँ बिधान प्रमाना ।।
जदपि जगत व्यवहार निभावै । तदपि न द्वैत भाव मन आवै ।।
चित निरलेप अकास समाना । जीवन मुकुत तात सोइ जाना ।।
सुभ गुन पवन मेघ अभिलाषा । निवृत आतम ससि प्रकट प्रकासा ।।
जिमि नभ सोभित चन्द्रहिं पाये । बुधि तब होइ आत्म दरसाये ।।
रज तम त्यागि सत्व गुन धारहु । मलिन बृत्ति मन्दर सम जारहु ।।
दृढ़ अभ्यास बिराग जगावहु । मन मलीनता दूर हटावहु ।।
यह ज्ञानिन कर सहज सुभाऊ । राग-द्वेष नहिं नित चित चाऊ ।।

दो०-चित्त क्षुभित नहिं होत है देखि लोक ब्यवहार ।
ज्ञानी जग परतीत नहिं व्यापै नाहिं बिकार ।।२५।।

जे जग परे दुःखी सब काला । उन्हकर होत तात अस हाला ।।
अहि जिमि डसै कटे हथियारा । परे आगि भव सिन्धु अपारा ।।
जेहि पदार्थ लखि मोहित होई । चंचल नासवान सब सोई ।।
तजि सन्मार्ग इन्हहिं जे चाहत । जानहु दुःख सागर अवगाहत ।।
देह रथहिं इन्द्रिय कर घोरे । मन कर डोर तिन्हहिं जनु जोरे ।।
अस्व ज्ञान जुत जहँ जहँ जाहीं । तहँ तहँ आँनद सिन्धु लखाहीं ।।
अस अवरोही खेद न पावहिं । सब कारजहिं बिलास जनावहिं ।।
हिय दृढ़ रहई अनिष्ट न आये । आँनद होइ आतमपद पाये ।।
तेहि नहिं सोच न मागन कोई । हृदय सान्त परिपूरित होई ।।

दो०-लगइ चेष्टा करत बहु पर न मनहिं कछु काम ।
अमृत पूर्ण हिय चन्द्र सों पूरित ललित ललाम ।।२६।।

ज्ञान तबहिं असि वृतिकर होई । ब्रह्म दरस जउ पावइ कोई ।।
जिमि ससिमंडल होत न तापा । दुःख नासत तिमि दरस प्रतापा ।।
ज्ञान हीन नहिं धीरज पावै । तेहि कर हर कृत दुःख उपजावै ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कीकर तरु जिमि कण्टक होई। मूरख कर गति जानहु सोई
ठीकर लेइ उत्तम भिक्षाटन। पर मूढ़ता न लहइ कोउ जन
मोक्ष उपाउ नास कर सोई। परम बोधकारन यह होई
संस्कृत बुधि सँजोग बस होई। मूरखता यह मेटइ सोई
बरनउँ बिबिध प्रमान बताई। तिहुँ लोकहु न सास्त्र मिलि पाई
तिमिर अज्ञानहिं ज्ञान सलाका। जोतित नभ जिमि सूरज राका
होइ जीव कर तब कल्याना। ज्ञानवान गुरु रचइ बिधाना
गुरु अनुभव जुत सास्त्र बखानइ। सिष्य ध्यान अनुभव करि जानइ
जब लगि सहज अनन्द न होई। तब लगि दृढ़ अभ्यासइ सोई
अस मैं गुरु आँनद कर दाता। मित्र जीव कर जानहु ताता

दो०—याते जेहि बिधि कहउँ मैं तात करउ तुम सोइ।
मेटहिं जगत अनन्त दुःख तोहि परम पद होइ ॥२७॥

तजउ भोग छनभंगुर सारा। जेहि ते परत जीव भव कारा
निज प्रमाद ते जन होइ दीना। तिसुना निसा तमस आधीना
भोग मगन दादुर सम रहई। सदा कीच परि मन सुख लहई
आपद सिन्धु सकल संसारा। ज्ञान नाव बिन होहिं न पारा
श्रेष्ठ सुसंग सास्त्र चित बान्हइ। भवसागर प्रयास बिन लांघइ
जे जग रमत मूढ़ तिन्ह जानौं। ते नहिं लहहिं कबहुँ सुख मानौं
ह्वै प्रमादबस जो विष पीवै। कहहु तात सो कैसे जीवै
विमुख आत्मपद जग जे धावत। जनमत मरत सतत दुःख पावत
आसन घास फूस कर छानी। आगि लगे बचिहैं किमि प्रानी
जगत पदारथ सुख न थिराई। विद्युत कौंधि जथा छिपि जाई

दो०—आगमपाई जगत दुःख समुझउ राजकुमार।
अविचारिहिं जग भासई बिनसत करत बिचार ॥२८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दीपक कर लेइ अन्ध बनि गिरइ कूप महँ जाइ ।
सास्त्र गुरुहिं के होत सुनु मूरख जे बिनसाइ ॥२८॥ ख

सन्त संग चलि सास्त्र पथ होइ आत्मपद लीन ।
लहइ सोइ कैवल्य पद भाषइ ज्ञान प्रवीन ॥२८॥ ग

मन संसरन प्रकट संसारा । येहि जीतइ तब होइय पारा ॥
संजम साधि पूर्णता पावै । साधन सम सन्तोष जगावै ॥
आतमज्ञान कल्पतरु जानहु । तोष बिराग फूल फल मानहु ॥
शान्तिमान निरलेप रहाहीं । भावाभाव छुअत तिन्ह नाहीं ॥
जिमि रवि उदय अस्त गति जानी । नभ मानत कछु लाभ न हानी ॥
श्रद्धा सहित सुनइ यह जोई । जानु मोक्ष अधिकारी सोई ॥
धर्महिं कहेउँ चतुर दिक्पाला । एकउ सधे कटइ भव जाला ॥
म ते मिलइ परम बिश्रामा । सिव पद परमानन्द निकामा ॥
हि ते होत सिन्धु भव पारा । बनत अरिउ निज मित्र उदारा ॥
जाके उर सम चन्द्र बिराजै । ताप नसै सीतलता साजै ॥
सम ते जीव कान्ति बहु धारै । ससि सम मोह तिमिर सब टारै ॥

दो०-एक सरीर एक सन्त महँ बिष्नु दूइ उर होत ।
तिमि सरीर सम जगत में दुइ उर जीव उदोत ॥२९॥

म साधे जो आँनद होई । सुधा पान करि पाव कि कोई ॥
न्तर्धान प्रकट जिमि होई । तेहि दरसन सम आँनद सोई ॥

छन्द

सोइ करउ प्रनामा ब्रत दृढ़ ठाना जे पायेउ सम ज्ञाना ।
बोलइ मृदु बचना निर्मल रचना सीतल चन्द्र समाना ॥
जननी जिमि पाये सुत हरषाये उपजइ सुख लखि सोई ।
अस सान्त सरूपा जगमग रूपा सुभगुन पूरित होई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कइसउ कष्ट काल के आये। नहिं काहू के चलइ चलाये
समयुत जीव त्रास नहिं पावै। जिमि बरषा भुवि ताप नसावै
याज्ञिक तपी धनी गुरु ज्ञानी। मानवीय जग ये सब प्रानी
किन्तु सदा समसील सयाना। आत्मज्ञान हित करहि बिधाना
सबद परस रस गंध सरूपा। राग द्वेष न होइ सुत भूपा
सान्तात्मा तेहि जानहु ताता। सान्तिमान कर सुनु अब बाता
जग रमणीय पदार्थ न रमई। आत्मानन्द जोति , जगमगई
मलिन सुभासुभ कर नहिं लागइ। नित निर्लेप गगन सम राजइ
सोक हरष नहिं व्यापइ कोई। अन्तःकरण सान्त अस होई
छूअत न कोउ दुःख जगकर सोई। परमानन्द गहन जब होई

दो०—जिमि दिनकर के उदय ते अन्धकार बिनसाइ।
तइसइ सान्ति मिलत सोइ निर्बिकार होइ जाइ ॥३०॥

चेष्टारत सोइ परत लखाई। निर्गुंन होइ बिचरत हरषाई
सान्तिमान कर इहइ सरूपा। दुःख सुख माहिं रहइ एक रूपा
जे असान्त तिन्ह द्वंद्व जरावत। छन छन राग द्वेष उपजावत
सान्तिमान सीतलता पावइ। कान्तिमान रहि एक रस भावइ
परमानन्द सदा तेहि होई। परम लाभ पावइ जग सोई
पुरुषारथ जे चाहइ करना। प्रथमहिं करइ सान्ति कर बरना
गहउ राम येहि बिधि तुम सारा। होइय तब भवसागर पारा
बोले गुरु पुनि आगिलि बानी। सुनहु बिचार निरूपन जानी
निरमल उर बिचार तब होई। सास्त्र बुझाइ कहत जिमि सोई

दो०—बन अज्ञान आपद लता उपजि सदा दुःख देइ।
तेहि बिचार तरुआरि सों काटि सांति सुख लेइ ॥३१॥
मोह हस्ति हिय कमल जिमि नासत करि आघात।
सिंह बिचारहिं जगे बिनु तात बनइ नहिं बात ॥३१॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हि जग कछुक सिद्धि जे पाये। सोइ बिचार पौरुषहिं जगाये ॥
ल बुधि तेज पदार्थ आगमन। प्राप्त होंहि ये प्रमुख पंच धन ॥
ढ़ बिचार इच्छित फल पावै। येहि ते सोइ निज मित्र कहावै ॥
सत न जीव बिपति में तइसे। बूड़त नहिं तुम्बी जल जइसे ॥
खत करत सो मुक्त बिचारहिं। सिद्धि होइ सोइ कतहुँ न हारहिं ॥
ढ़ बिचार चारिउ फल पावइ। तात कल्पतरु सम सोइ भावइ ॥
मुहु राम इमि ब्रह्म बिचारहु। आतमज्ञान लहि लक्ष्य सँवारहु ॥
पि ते होइ पदारथ ज्ञाना। सत्यासत्य बिचार प्रमाना ॥
गि असत्य सत्य जे धारत। ते दृढ़ आतम ज्ञान बिचारत ॥
पति तरंग उठइ भव सागर। भाव अभाव प्रभाव न तापर ॥

दो०–क्रिया जो होत बिचार जुत सुख उपजत चहुँ ओर।
बिनु बिचार कीन्हे सदा दुःख कर ओर न छोर ॥३२॥ क

कण्टक तरु अबिचार महँ उपजत नाना सूल।
तात बबूल न देत है कबहुँ कमल कर फूल ॥३२॥ ख

सिष यह हमार प्रिय रामा। नसै सकल संसय कृत कामा ॥
वि सुबिचार सकल तम नासत। दुःख अबिचार कतहुँ नहिं भासत ॥
हि बिचार तहँ दुःख न थिराहीं। सुभ गुन जगहिं असुभ गुन जाहीं ॥
नु बिचार के जो कछु होई। जानहु दुःख कर कारन सोई ॥
प विवेक ध्वजा सुबिचारा। ज्ञान तिलक सोहत सुचि सारा ॥
ष्ट अनिष्ट राग नहिं द्वेषा। औषधि यह भव हरन कलेषा ॥
न अबिचार करा मद पाना। भे उन्मत्त सास्त्र नहिं माना ॥
च्छा रोग बिचार निदाना। परमारथ पथ बनत बिधाना ॥
क्षी रूप लखइ सब सोभा। भावाभाव हरष नहि छोभा ॥
प गिरे कर बल बहिराई। तिमि बिचार सुनु होत सहाई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तइसइ तुमहु बिचारहि धारहु । सिद्धि पाइ निज मोक्ष सँवारहु
सास्त्र बिहित पथ बिचरन करई । दृढ़ होई आत्मतत्व पुनि बरई

दो०–छन एकहु बिसरइ न तोहि देखहु तात बिचार ।
जेहि अभाब जन पावई जग मँह दुःख अपार ॥३३॥
जब बिचार थिर होत है तत्वज्ञान तब होय ।
विश्रामहि चित उपसमित आवै नहि दुःख कोय ॥३३॥

परमानन्द होइ तब तेही । चित सन्तोष जाग सुन जेही
तोषानन्द न समता कोई । राज त्रिलोक मिलेउ नहिं होई
इच्छा निसि हिय कमल मुदाहीं । तोष सूर्य पाये हरषाहीं
इच्छा ग्रसित दीन जन होई । तुष्टी सम सम्पत्ति न कोई
प्रिय सन्तोष जानु तुम सोई । दुर्लभ हित इच्छा नहिं होई
तोषवान हिय हर्षित रहई । जिमि रवि उये कमल सुख लहई
तोष रहित हिय दुःख तरु छाये । लोभ - मोह फल फूल सुहाये
चाह सरित कै बीचि अपारा । चित्त विकल बहु परि तेहि धारा
अष्ट सिद्धि नौ निधि के पाये । होत न सुख बिनु तोष सुहाए
तोष मेघ मन गगन बिराजै । इच्छा धूरि नाहिं तब छाजै
तोषवान जन परम सयाना । ताकर सुजस करहिं श्रुति गाना

दो०–सदगुन ताके चित बसहिं जाके चित सन्तोष ।
देव सन्त तेहि नमत हैं पास न आवै दोष ॥३४॥
दान तीर्थ उत्तम सदा उत्तम ध्यान बिधान ।
तदपि कृपा बिनु सन्त के नाहि आतमपद ज्ञान ॥३४॥

सन्त संग सुर तरू सम जानहु । आतम ज्ञान तेहिकर फल मानहु
जे जन फल इच्छा चित लावइ। ते तासों अनुभव फल पावइ
आतमानन्द हीन अज्ञानी । आपद ग्रसित दीन अति प्रानी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सतसंगति प्रभाव दुःख नासा । लाभ परम सब होइ सुपासा ॥
ज्ञानदीप उर करत प्रकासा । जहाँ तिमिर कर कबहुँ न बासा ॥
चाह न काहु भोगकर जागइ । बोध होइ उत्तम पद राजइ ॥
कल्प वृक्ष सम जानहु सन्ता । करत सदा भव दुःख कर अन्ता ॥
धीबर बनि भव पार कराहीं । संत संग दुर्लभ कछु नाहीं ॥
देहादिक सनेह जब नासइ । आतमा सुद्ध तृप्त तब भासइ ॥
जगत प्रपंच नाहि तब मोहइ । समता भाव धारि सोइ सोहइ ॥

दो०-भवसागर लांघन हित सन्त सेतु बनि जाहिं ।
इनहीं तें आपदा कर बेलि समूल नसाहिं ॥३५॥

न्त नरक कर ताप मिटावत । पौरुष कर पथ सहज बनावत ॥
सतसंगति गंग नहाई । संसय नाहि परम गति पाई ॥
त संगति त्रय ताप मिटावत । मानव अबिनासी पद पावत ॥
हि वृक्ष हित बनत कुठारा । तप्त हृदय हित सीतल धारा ॥
रपाल जे चारि बताये । एकउ साधि मोक्ष नर पाये ॥
मि सागरहिं सकल सरि जाहीं । तिमि चारिउ एक संग रहाहीं ॥
चारिउ जेहि के संग होहीं । परम श्रेष्ठ जानहु तुम ओही ॥
उ एक साधहु तात बिचारी । सब अइहैं तब बारी बारी ॥
भ परम सन्तोषहिं जानहु । सब सम्पति सतसंगति मानहु ॥
न बिचार परम करि ज्ञाना । एहि सम सुख कोउ होत न आना ॥

ब्रह्मादिक स्तुति करत सम रह जेहि के पास ।
आश्रय करि मन बस करहु दृढ़ करि मम बिस्वास ॥३६॥

मन बहति बासना धारा । जानौ सुभ अरु असुभ किनारा ॥
पुरुषार्थ करहु चित लाई । असुभ ओर मन कबहुँ न जाई ॥
गउ सब संसय अबिचारा । अबिचल होइ प्रवाह तुम्हारा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्तर्मुख प्रवाह जब होई। बनत मोक्ष कर साधन सोई॥
कहेउ बुझाइ बसिष्ठ बहोरी। सकल सास्त्र कर तत्व निचोरी॥
मोक्ष उपाय सास्त्र येहि मानहु। परम बोध कारण प्रिय जानहु॥
जनम जनम के पुन्य प्रभावा। कल्पवृक्ष सन्मुख करि पावा॥
सुनिहहिं पढ़िहहिं जे चित लाई। तिन्हकर सकल भरम मिटि जाई॥
भ्रम ते रज्जु सरप बनि भासै। तैसेइ सत महँ असत प्रकासै॥
पाइ बोध भ्रम होइ निवारन। जानै सब कारन कर कारन॥
नहिं कोउ उतपति नाहिं बिनासा। सकल बासना केर तमासा॥
करि अभ्यास बासना मारहु। तात आतम पद कँह तुम धारहु॥
भनत सास्त्र सब बेद पुराना। आतम ज्ञान बिनु नहिं कल्याना॥

युक्तिपूर्ण बिरचित बचन बोधक परम बिचार।
पढ़ि सुनि धारण किये ते खुलत मुक्ति कर द्वार॥३७॥

प्रकरण प्रथम बिराग बिचारे। लगिहैं बिरस भोग जग सारे॥
येहि ते आतम स्वरूप लखाई। बुधि तुम्हार निर्मल होइ जाई॥
यह सिद्धान्त गहन जब होई। आधि ब्याधि व्यापइ नहिं कोई॥
आये सरद बिमल नभ जइसे। तजि बिकार बुधि निर्मल तइसे॥
बार बार जब होइ बिचारा। चेतन जागइ नसइ बिकारा॥
जस जस दृढ़ बिचार निज होई। छोभ मिटइ पावइ पद सोई॥
रवि प्रताप जिमि तम सब नासत। मन बिकार तिमि कतहुं न भासत॥
ज्ञान कवच जेहि कें तन राजत। राग द्वेष कर बान न लागत॥
भोग चाह नहिं ताहि सतावइ। बिषय जानि तेहि बुधि नहिं लावइ॥
चित्रित बेलि न पवन चलावै। तिमि जग दुःख तेहि छूइ न पावै॥

पर्वत सम स्थिर रहइ सिन्धु समान गंभीर।
सीतल सुर्सरि सम रहि होइ न कबहुँ अधीर॥३८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्मज्ञान ते पद सोइ पावत । जाहि मिले जग ताहि न भावत ॥

सवैया

तात सुनौ येहि सास्त्र के ज्ञान को चाहे न तीरथ औ तप सारे ।
जो जुरं खाइ जहाँ मिलै बैठिके बारहिं बार बिचार बिचारे ।
जानि परं पद अउर पदारथ ताहि सों दृस्यहु को भ्रम टारे ।
तेन बिचार लखै पद आपन ध्यान सों सास्त्र को दीपक बारे ॥

भ्रम ते सकल आपदा आवै । ज्ञान जीव भव व्याधि नसावै ॥
वत प्रमाद जगत भ्रम जागइ । ज्ञान भये आपुहिं सोइ भागइ ॥
त्मा सुद्ध अद्वैत सरूपा । जगत मात्र जानहु भ्रम रूपा ॥
पर जो साँच न होई । तात असत्य जानु भ्रम सोई ॥
ग्रत स्वप्न समानहि जानहु । कोउ सच नाहिं दोउ भ्रम मानहु ॥
हि बिधि जग यह भ्रम कर जाला । उत्पति नास होत प्रति काला ॥
पदार्थ दीपक लेइ देखहु । तेल बाति कर भाउ न लेखहु ॥
द्ध होइ अनुभव जेहि जागइ । वाक्य तात जोइ हितकर लागइ ॥
इ करहु तुम अंगीकारा । सेष तजहु जिय जानि पवारा ॥
ध हेतु जे बचन गहाहीं । श्रेष्ठ सोइ जानहु जग माहीं ॥
द विवाद हेतु जे गहई । जानहु तेहि मूरख बड़ अहई ॥
न हेतु चाहिय अभ्यासा । सम आदिक रहिहैं तब पासा ॥
रि बोध आतम पद पावै । और जतन कछु काम न आवै ॥

दो०-होइ न जबहिं तुरीय पद जाहि कहत बिश्राम ।
तब लौं करइ बिचार दृढ़ होइ प्रयास रत राम ॥३९

रन पवन आतम संवेदन । सोइ प्रकटत यामे कछु भेद न ॥
आतम सबहिं कहँ जानहु । आतमपदहि बिचार करि आनहु ॥
परे तजउ अभिमाना । सुद्ध बोध कर होइहि भाना ॥
त्यागि पुरुषार्थ जगावहु । आतमपदहि जेहि बिधि तुम पावहु ॥
सुद्ध करै सतसंगा । सोइ आतमपद हेतु अभंगा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चलहिं सास्त्र पथ तिन्ह संग करहू। सम सन्तोष आदि गुन धरहू
आत्म ज्ञान सम ये गुन जानहु। येहिमहँ कछुक भेद नहिं मानहु
ज्ञानिन मँह गुन होहिं स्वभावा। जिज्ञासू अभ्यासहि पावा
आदि अन्त लौं करहु बिचारा। मिलहि तबहि पुरुषारथ सारा

दो०—सुद्ध बुद्ध जन जे करहिं येहिकर गहन बिचार।
सीघ्र आत्मपद मिलइ तेहि राम सुनहु चित धार ॥४०

(मुमुक्षु प्रकरण समाप्त)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्पत्ति प्रकरण-३

दो०-सम अरु आतम बोध हित उत्पति प्रकरण तात ।
ब्रह्म रूप जानहु जगत आन नाहि कोउ बात ॥१॥

...व जड़ जंगम केर पसारा । जानहु सब अकास बिस्तारा ॥
...ष्टा दृस्य जोग जो पावै । सोइ बन्धन परि जगत कहावै ॥
...ग चिन्मात्र रूप तुम जानहु । उपजइ नसइ नाहिं कछु मानहु ॥
...ानि परइ उपजा जग जोई । जिमि सुषुप्ति मँह सपना होई ॥
...ह्म जीव पदबी जब धारइ । सोइ सबद अरु अर्थ बिचारइ ॥
...न्दन ते मन रूप सुहावा । तेहि संसरन जगत प्रगटावा ॥
...प्न सुषुप्ति सदृस जग होई । माया जनित अबिद्या सोई ॥
...उ संकल्प दृस्य कोउ मानहिं । ज्ञानी ब्रह्म रूप सब जानहिं ॥
...स कंचन भूषन मँह राजै । तइसइ ब्रह्म जगत मँह छाजै ॥
...ातिसना भ्रम बारि तरंगा । धावत मरत दहत सब अंगा ॥

दो०-ब्रह्मअंस अणु ते सकल भासइ सृष्टि अपार ।
ज्ञानी कँह अचरज नहीं आतम रूप संसार ॥२॥

सवैया

...ाप में राजति सक्ति है ब्रह्म की जन्म औ मृत्यु कहाँ पुनि आवै ।
...न्धन मुक्ति बृथा चरचा उपजै न मिटै कोउ आवै न जावै ।
...ल्पित है सब तोऊ सदा 'जगदीश' प्रमाद भये सत भावै ।
...ठहि में भरमाये सबै दृढ़ ज्ञान बिना कोउ पार न पावै ॥१
तीरथ दान नहान करै बहु काल तोऊ भ्रम दूरि न जाई ।
गूढ़ता ही समझौ येहि को येहि ते सोइ बन्धन और दृढ़ाई ।
ध्यान समाधि लगै जुग लौं उपरामहुँ ते जग छूटि न पाई ।
ज्यों फल फूल में बीज बसै बिनु ताहि नसे सोइ रूप न जाई ॥२

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुख समाधि लागै तब होई। दुःख घेरहिं जब टूटइ सोई।
बिनु बिचार अज्ञान न जाई। जेहि ते जग यह साँच लखाई।
चेतन बिना सृष्टि नहिं होई। जग इमि सतत अभासत जोई।
गन्ध फूल मँह तिल जिमि तेला। मनोराज बिरचित बहु खेला।
ताप अगिन मँह जइसे राजत। तिमि आतमा मँह जगत बिराज

दो०—आकासज आख्यान यह तोहि कहौं समुझाइ।
परम बोधकारक कथा तात सुनो चित लाइ ॥३॥ क
आत्मनिष्ठ धर्मालु जे चिरजीवी गुणवान।
मृत्यु न तेहिं जब मारि सक मन अति भई गलानि ॥३॥

धर्मराज सों जाइ सुनावा। प्रभु रहस्य यह जानि न पाव
जोइ उपजइ सोइ ग्रास बनावउँ। आकासज किमि मारि न पाव
यम बोले मृत्युहिं समुझाई। तुम्हरे मारे कोउ न मरा
अपने कर्म मरहिं सब जानहु। आन बिचार न उर कछु आन
आकासज कोउ कर्म न करई। याते सोइ मारे नहिं मर
तेहि जौ ग्रास बनावन चहहू। खोज कर्म कर पहिले कर
मृत्यु चतुर्दिक खोज करावा। आकासज कर कर्म न पाव
बिवस जाइ यम सों पुनि भाखा। हे प्रभु बहुत खोज करि रा
कतहुँ न येहि कर कर्म लखाई। काह करौं कोउ कहौ उपा
अस कहि यम पुनि तेहि समुझाये। चिदाकास सुचि अंबर भा
जहँ नहि कारन कोउ लखाई। आकासज तँह उतपति पा
येहि ईस्वर समान तुम जानहु। मारन हित हिय भाव न आ

दो०—निराकार चैतन्य बपु स्वायंभू सुचिमान।
येहि के जानहु अन्त कर नाहीं कोउ बिधान ॥४॥

पलटी मीचु पराजय मानी। बोले राम गुरुहिं मृदु बा
कहेउ पितामह प्रभु येहि बाता। जेहि समुझाइ सुनायेहु ता
तब बसिष्ठ बोले असि बानी। यम अरु मीचु बिवादहिं जा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुम सन राम कथा ये कही । अपर कलप सुनु जो कछु भयी ।।
मृत्यु सकल जग करि आहारा । बिधि कर अन्त भाव मन धारा ।।
धर्मराज तेहि कहेउ बुझाई । मृत्यु बिधिहि तुम सकहु न खाई ।।
ब्रह्मा कर अकास बपु होई । जाहि पकरि पावै नहिं कोई ।।
आदि अन्त अरु मध्य बिहीना । मैं तुम आदि भाव अबिछीना ।।
मन मँह रूप गढइ जिमि कोई । कहहु ताहि कर बपु कँह होई ।।
बपु बिहीन कहँ ग्रास न मानउ । देहवन्त कहँ निज बस जानउ ।।

दो०–गुरु बोले सत्ता सुचि चिन्मय सूक्ष्म सुजान ।
तेहि के सन्मुख गिरि सदृस थूल व्योम कर भान ।।५।।

होइ चेतन निज बपु सोइ देखा । गगन रूप ताहू कर लेखा ।।
कारन बिना सोइ प्रगटावा । स्वायंभू सोइ ब्रह्म कहावा ।।
ब्रह्मा ब्रह्म एक दोउ जानहु । दोऊ माहिं भेद नहिं मानहु ।।
सिंधु लहर सूनता अकासा । जइसे तात फूल अरु बासा ।।
तिमि दोउन मँह भेद न कोई । जल तरंग एकइ जिमि होई ।।
कारन कर्म आदि सों हीना । बीचहिं बोलेउ राम प्रवीना ।।
बपु बिहीन स्मृति रूप न सोई । नाथ कहउ केहि बिधि अस होई ।।
गुरु बसिष्ठ तब कहि समुझावा । आतम तत्व ब्रह्मा बनि आवा ।।
अज अद्वैत आदि सों हीना । स्वायंभू स्वरूप निज लीना ।।
निराकार संकल्प सरीरा । कीन्हेउ प्रस्न राम मतिधीरा ।।

दो०–दुइ सरीर हर जीव के थूल सूक्ष्म जिमि होंहि ।
ब्रह्मा सूक्ष्महि भये किमि नाथ बतावहु मोंहि ।।६।।

राम जीव कारन ते होई । दुइ सरीर धारत तेहि सोई ।।
प्रगटत ब्रह्म अकारन ताता । येहि ते सूक्ष मात्र तेहि गाता ।।
होत बिधिहि जीवन कर कारन । करत स्वरूप स्वयं निज धारन ।।
ग्राहक अन्तरूप तिमि ज्ञानी । तहँ प्रमाद नहिं भ्राँती जानी ।।
जानत व्योम रूप जग सारा । देस काल संबन्ध न धारा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दृस्य जगत यह मन सद्भावा। मनहिं दृस्य कर बीज सुहावा।
चेतन दृस्य लखइ जिमि सपना। जानहु तिमि यह जगत कलपना।
मन जब लौं नहिं उपसम होई। तात दृस्य भ्रम जाइ न सोई।
सुद्ध बोध तब पावइ प्रानी। आत्मानन्द सकल सुख खानी।

दो०—गुरु बसिष्ठ के बचन सुनि अग जग साधेउ मौन।
सन्ध्या बन्दन समय लखि सबहिं चले निज भौन॥७॥

प्रात भये सब जुरे बहोरी। बन्दन कीन्ह गुरुहिं कर जोरी।
राम कहेउ गुरु किमि मन रूपा। जाते जीव परत दुःख कूपा।
कीन्ह अरंभ बसिष्ठ प्रसंगा। ज्ञान प्रकास भयउ भ्रम भंगा।
तात न मन कर रूप लखाई। नाम मात्र समुझउ येहि भाई।
येहि अकास सम सूनहि जानहु। मन मँह कछु उपजइ नहिं मानहु।
रबि मँह तेज पवन मंह स्पन्दन। जल तरंग सुबरन महँ भूषन।
तिमि चेतन जानहु मन रूपा। जदपि असत् उपजइ जग रूपा।
जो संकल्प फुरइ मन जानहु। और भाव कछु नहिं चित आनहु।

छन्द

मन के बहु नामा स्मृति तम कामा अनत अविद्या सोई।
ज्ञानी सब जानहिं ताहि बखानहि कहत मही भ्रम कोई॥
जग जाल जो भाषइ मन रचि राखइ सबहि दृस्य चित रूपा।
बाहक यह अन्ता देह कहन्ता धारइ जीव सरूपा॥
जग दृढ़ संकल्पा रूप अकल्पा पिण्डाकर लखावें।
जिमि सपन अकारा गगन पसारा धरा आदि नहिं आवें॥
मन कर संसरना जग बहु बरना बोध मात्र यहि जानउ।
येहि मन के नासे दृस्य बिनासे कतहुँ नाहिं कछु मानउ॥

दो०—दृस्य भाव नासत जबहिं सुद्ध बोध तब होइ।
द्रष्टा दर्सन दृश्य कर त्रिपुटी मेटत सोइ॥८॥

सपना मँह त्रिपुटी जिमि भासत। जागि गये आपुहिं सोइ नासत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सता आतम जबहिं यह जागत । निज अद्वैत आप उपराजत ।।
सुद्ध बोध बिनु भ्रम नहिं जाई । बाहर भीतर सृष्टि लखाई ।।
पवन पाइ ह्यलै तरु डारा । तस मन ते बन्धन बिस्तारा ।।
कहेउ राम प्रकटउ प्रभु सोई । भव रुज सकल बिनासै जोई ।।
गुरु बोले प्रिय राम सुजाना । येहि निबृत्ति कर सुनहु बिधाना ।।
करि बिचार जग को भ्रम जानहु । निज पद सान्ति प्रथम तुम आनहु।।
होइहौ तब सर्वात्मा ताता । मेटउ दृस्य भ्रमहि सुनु बाता ।।
स्मृति अनुभव अकास महँ होई । सोइ अनुभूति पूर्ब कृत जोई ।।
सोइ भासत संकल्पजा जानहु । कछु नहिं सत पदार्थ जग मानहु ।।

दो०–असत नाहिं थिर होइ प्रिय मन सम चलन स्वभाव ।
दृस्य वस्तु उपजत नसत लागत भाव अभाव ।।९।।

क मनहि थिर करि जे देखइ । मैं तुम आदि जगत नहिं लेखइ ।।
न मलीनता दूरि हटावै । आतम तत्व आपन प्रकटावै ।।
र्पन मँह गिरि नहिं सद्भावा । तस चेतन मँह जगत अभावा ।।
भ सूनता सिन्धु जल जइसे । निज महँ ब्रह्म बिराजत तइसे ।।
ह्म माहिं जग होइ अभावा । राम चकित होइ प्रश्न उठावा ।।
हिं मति गहइ गूढ तव बचना । समुझि परइ नहिं गुरु असि रचना।।
स्य नाहिं कछु नहिं उपजावै । काल गाल महँ सबइ समावै ।।
हेउ बसिष्ठ उचित तब बानी । बरतहु जगत असत सब जानी ।।
हाकास सम ब्रह्म बिराजै । तहँ नहिं कारन कारज छाजै ।।

दो०–कारन बिनु तेहि मँह फुरइ तात सकल संसार ।
जिमि सुषुप्ति मँह सपन कर नाहीं कोउ आधार ।।१०।। क
जे समवाय निमित्त बिनु कारण प्रकट लखाय ।
जानहु भरम सरूप सोइ तात कहउँ समुझाय ।।१०।। ख

जिमि तोहिं सपना नित्य लखाई । तइसइ जगत जानु यह भाई ।।
मन संसरन जगत अरु सपना । दोउ समान जानहु कोउ सच ना ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन कल्पना जाल जग जागै। उपसम भये तिमिर सब भागै।
कहेउ राम मन रूप बतावहु। केहि ते होइ मोहि समुझावहु।
गुरु बोले परलय जब होई। सेष रहइ सत जानहु सोई।
जगत बिलात सत्य नहिं नासइ। सोइ परमात्म तत्व नित भासइ।
पद पदार्थ कलपित सब जानहु। स्वाभाविक इन कँह नहिं मानहु।
ज्ञानी जन बहु नाम बतावहिं। पुरुष ब्रह्म निर्मल कहि गावहिं।
बोध कहइ कोउ सून्य बखानहिं। बक्ता सर्वात्मा करि मानहिं।
अधिष्ठान सब कर सोइ होई। परम देव करि जानहिं सोई।

दो०—षट्बिकार सौं रहित सोइ सुद्ध परम चैतन्य।
रबि समान दीपत सदा जानहु सोइ अनन्य ॥११॥

ब्रह्मा बिष्णु रुद्र जे नाना। सोभित तेहि कर किरन समाना।
ब्रह्म सिन्धु ब्रह्माण्ड तरंगा। बुदबुद बनत होत पुनि भंगा।
नभ सूनता अगिन महँ तापा। जल महँ द्रवता पवन प्रतापा।
पुष्प सुगन्ध सिला महँ भारा। स्थावर जंगम सकल पसारा।
सब कर अधिष्ठान सोइ होई। सुद्ध बुद्ध परमानद सोई।
सत्य असत्य सोइ प्रगटावा। जड़ चेतन समान होइ भावा।
जे जन तेहिकर दरसन पावै। तेहिकर सकल क्रिया बिनसावै।
चिद् जड़ ग्रंथि भंग तब होई। मृत्यु देखि दुःख होत न कोई।
रामहिं कहेउ बसिष्ठ बुझाई। घट घट मँह सोइ बास कराई।
ज्ञानहीन कँह दूरि लखावै। कर्म मात्र ते नहि मिलि पावै।

दो०—दान नहान तपादि ते तात मिलइ नहिं सोइ।
ताहि बोध सुनु होत है ज्ञानवान जे होइ ॥१२॥

कहेउ राम प्रभु बिधि ससुझावहु। ब्रह्म दरस हित राह देखावहु।
तेहि कर बास कहाँ मुनि राया। सकल कहहु मो पर करि दाया।
गुरु बसिष्ठ बोले मृदु बानी। ज्ञान बिराग प्रेम रस सानी।
राम वसै सोइ अन्तर माहीं। आत्म बोध ते तुरत लखाहीं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्रह्मा बिष्नु महेस समेता। लोकपाल दिग्पाल देवता ॥
अहं धारि चेतन दुःख पावइ। ताहि तजत ईश्वर होइ भावइ ॥
घटइ अहं मुकुति मिलि जाई। दृस्य जगत भ्रम सकल नसाई ॥
राम विनत होइ कहेउ बहोरी। हे गुरु हरहु संक सब मोरी ॥
चेतन जगत बिराजत जोई। दृस्य निवृत्ति नाथ किमि होई ॥

दो०-परमातमा सरूप कस तात कहहु समुझाइ।
प्रस्न चलायउ राम तब कहेउ बसिष्ठ बुझाइ ॥१३॥ क

द्रष्टा दर्सन दृस्य कर जहँ तिहुँ काल अभाव।
तात सोइ परमातमा तुम सन कहाँ दुराव ॥१३॥ ख

जत सून्य अकास समाना। जेहि महँ बहु ब्रह्माण्ड बिधाना ॥
इ चेतन जड़ रूप लखावै। बाहर भीतर सबहि बसावै ॥
स अद्वैत सत्ता जो भासै। सोइ परमातम जगत प्रकासै ॥
स रवि तेज दसहुँ दिसि ब्यापै। तस आतमा माहिं जग थापै ॥
म बीच पुनि संक उठाई। गुरुवर कहहु मोहिं समुझाई ॥
परमातम ब्यापक भाखा। होय नाहिं दरसन तिमि ताका ॥
क बोले सुनु राम सुजाना। करहु जतन ते आतम ज्ञाना ॥
तम ज्ञान ते आपहिं जानहु। तब परमातम रूप पहिचानहु ॥
स अकास नीलिमा लखावै। तस आतमा महँ जगत सुहावै ॥
त अभाव भाव जब आवै। परमातमा तबहिं दरसावै ॥
हि चित महँ जब दृस्य सुहावै। तब सोइ आतम बोध कहँ पावै ॥
याडंबर मन किमि ठयऊ। राई ते सुमेरु किमि भयऊ ॥
म प्रकट संसय जब कीन्हा। गुरु बसिष्ठ इमि उत्तर दीन्हा ॥

दो०-वेद धर्म योगादि ते रहित करहु सतसंग।
दृस्य भ्रमहिं मेटइ तबहिं होइ मोह तव भंग ॥१४॥ क

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दृस्य अभाव भये बिना द्रष्टा होइ न धीर।
दूनउ भाव न होइ जब आत्मा भासत वीर ॥१४॥

दूइ होंहि तब एक लखाई। एक रहे दूसर नहि जा
तात एक कर होत अभावा। जागइ नहिं तब दूसर भाव
चित दर्पन निर्मल तब होई। असत पदार्थ न भासत को
चेतन ब्रह्म जगत बिस्तारा। कंचन भूषण रूप सँवार
आत्म ज्ञान ते दृस्य बिनासै। सत्ता तब अद्वैत कर भा
गुरु कर जुगुति गहइ नहि जोई। तेहि सिद्धान्त प्राप्त नहिं हो
ऋषि अस कहि रामहिं समुझावा। आत्म बोध हित जतन बता
अर्थ जोइ चाहत कोउ पावइ। तेहि के हित प्रयास चित ला

दो०—जो सिद्धान्त गहइ सदा सास्त्र सन्त अनुसार।
दृढ अभ्यास निरत रहइ लहइ आत्म अधिकार ॥१५॥

राम कहेउ सोइ सास्त्र बतावहु। सोक जाइ निरमल पद पा
गुरु बोले सोइ यह रामायन। एहि कर सतत करहु पाराय
येहि महँ सकल सास्त्र दरसावा। बोध हेतु तोहि सार बता
जाकर मन एहि महँ नहिं लागा। पापात्मा सोइ परम अभा
चित्त प्राण चेष्टा रत होई। आतमा माँहि रमण कर जो
ज्ञाननिष्ठ होइ तोष सो पावा। सोई जीवन मुक्त कहा
जीवन मुक्त काल के पाये। तात बिदेह मुक्त होइ जा
पूछेउ राम कहउ गुरु सोई। दोउ मुकुतन लच्छन जो हो
जग व्यवहार करंत जे प्रानी। द्वैत भावना नहिं उर आ
हिय निरलेप अकास समाना। जीवन मुक्त तात सोइ जा
जे जग सदा सुषुप्त रहाहीं। जग भ्रम जाल घिरे जे ना
इष्ट अनिष्ट न सुख दुःख होई। राग द्वेष जागइ नहिं क
सान्त रूप जे बिचरन करहीं। ममता अहं भाव नहिं ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ान क्लेस नहिं क्रोध बिकारा । गगन रूप देखत जग सारा ।।
िर्वासनिक बुद्धि तेहि जानहु । जीवनमुक्त सदा तिन्ह मानहु ।।

दो०–आत्म भाव स्थित सदा जग जेहि ब्रह्म स्वरूप ।
जानहु जीवन मुक्त सोइ प्रस्न कीन्ह सुत भूप ।।१६।।

ैसे इष्ट अनिष्ट समाना । नाथ कहहु समुझाइ बिधाना ।।
ोले गुरु सुनु राम सुजाना । द्वन्द्व भाव उपजहिं अज्ञाना ।।
ानी दोउ महँ भेद न मानत । राग द्वेष दूनउ नहिं जानत ।।
ेष्टा करत जदपि दरसाई । सदा सुषुप्त रहइ सोइ भाई ।।
ाल पाइ जब तजत सरीरा । ब्रह्म पदहिं पावत मति धीरा ।।
न्दन त्यागि पवन जिमि होई । मुक्ति बिदेह लहइ तिमि सोई ।।
ि बनि तपइ रचइ बिधि होई । बिष्णु रूप प्रतिपालइ सोई ।।
होइ संहार सो करई । धरती बनि जड़ चेतन धरई ।।
ष्ध अन्न आदि उपजावइ । होइ अकास सुपास बनावइ ।।
म कीन्ह अस प्रस्न बहोरी । नाथ कहहु तुम ज्ञान निचोरी ।।
ि बिदेह देह जब धारत । भ्रम त्रिलोक किमि नाहिं बिसारत ।।
नि मुसुकाइ कहेउ मुनिराया । नहिं ज्ञानी कहँ बान्हइ माया ।।
ख जगत जाल भरमाई । ज्ञानवान तहँ नहिं अरुझाई ।।
क्ति बिदेह बोध सुचि ताता । उदय अस्त कर नहिं कोउ बाता ।।
तुम जगत सबहि आकासा । मात्र अज्ञान प्रकट सोइ भासा ।।

दो०–कंचन भूषण बनि लसत सागर जगइ तरंग ।
तिमि आतमा मँह जगत यह धारइ नाना रंग ।।१७।। क
जगत जाल मन कर फुरन रूप होइ नहिं तात ।
ज्ञानी जानत मरम सब येहि ते नहिं अरुझात ।।१७।। ख

ारन हेतु तोहि समुझावा । कहाँ जगत प्रिय सतत अभावा ।।
ा दृस्य गाढ़ भ्रम छावा । दूरि भये बिनु बोध न पावा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह भ्रम तात क्रमहिं ते जाई । मुक्त होइ येहि हित बिचराई
जे उपजइ सोइ बंधन परई । जानइ सोइ मुक्ति तब वरई
भासत जगत नाहि उपजाई । जस मरुथल सरिता दरसाई
स्थावर जंगम किन्नर देवा । ब्रह्म बिष्णु सब काल कलेवा
प्रलय भये सत्ता जो रहई । आत्मतत्व चैतन्य सो अहई
मैं तुम आदि कल्पना नाहीं । पूर्ण अपूर्ण न सोइ कहाहीं
सोइ सत्ता जग रूप लखाई । जगत बनत बिगरत नहिं भा

दो०—चित्त सक्ति स्पन्द ते जगदाकार लखाइ ।
निस्पन्दन के होत ही सोइ बिलुप्त होइ जाइ ॥१८॥

सत्ता आत्म एकरस रहई । जगत रूप धारण सोइ कर
सुनइ श्रवन बिनु चख बिनु देखइ । परस त्वचा बिन सरबस पेख
जल ते भिन्न भँवर नहिं होई । आत्मा जगत जानु गति सो
जिह्वा रहित तदपि बहु बोलइ । पद बिहीन दस दिसि सोइ डोल
सोइ अद्वैत द्वैत दरसावै । निराकार साकार लखा
सब्दातीत सब्द सोइ धारइ । द्रष्टा बनि चहुँओर निहार
चित्र बिचित्र बिराजत सोई । जस कंचन बहु भूषन हो
पूछेउ राम प्रलय जब आवै । जड़ जंगम जग सब बिनस
सून्य प्रकास सेष रह जोई । सो किमि सब्द गम्य नहिं हो

दो०—बोले गुरु सुत प्रलय में प्रकटत दृस्य अभाव ।
सून्य सेष किमि रहइ जब भासइ दृस्यहि भाव ॥१९॥

साँच बात सुत यह तुम जानहु । भयउ नाहि कछु येतनहि मा
सत अरु असत भाव जब होई । सून्य भला कइसे रह स
रबि जेहि जोति प्रकासित होई । ताहि अन्हार कहइ किमि क
आत्म तत्व तेहि ते तुम मानहु । आन भाव जनि जिय कछु आ
आत्मा माहिं जगत प्रकटावै । कहहु तात किमि सून्य कह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वैत न आतमा माहिं लखाई। नभ ते निर्मल जानहु भाई ॥
द्रष्टा दर्सन दृस्य प्रसारा। आतमा कर स्वरूप यह सारा ॥
दृढ़ अभ्यास प्राप्त यह होई। द्वैत कल्पना इहाँ न कोई ॥
जीवहिं नाहिं बुद्धि सोइ कइसे। बुद्धि अभाव मनहिं नहिं तइसे ॥
इन्द्रिय नाहि त देह न होई। देह अभाव जगत नहिं कोई ॥

दो०–सत्ता आतम अपार यह सब कल्पना नसाहिं।
आदि अन्त सत् असत प्रिय भाव अभाव न ताहि ॥२०॥

अजर अमर आनन्द अनन्ता। चित् स्वरूप चिन्मात्र कहन्ता ॥
सूक्ष्म ते सूक्ष्म अकास ते सूना। थूल ते थूल ऊन ते ऊना ॥
बोध हेतु गुरु पुनि समुझावा। मन कर पाँचहु बृत्ति बतावा ॥
अहंकार मनकर जब नासइ। तबहि अनन्त आतमा भासइ ॥
जाग्रत भये सुषुप्ती आवइ। परमात्मा सोइ रूप कहावइ ॥
जीव देह दूनउ नहिं सोई। व्योम रूप कोउ छोभ न होई ॥
उष्ण सीत कर अनुभव करई। द्रष्टा दर्सन दृस्य बिचरई ॥
स्थावर चेतन दोउ मँह रहई। मन बुधि इन्द्रिय जाहि न गहई ॥
ब्रह्मा बिष्णु रुद्र जब नासइ। तिन्ह कर पीछे जो छबि भासइ ॥
तेहिकर कोउ बिकल्प नहिं होई। परमातमा जानु प्रिय सोई ॥

दो०–राम कहेउ गुरु दृस्य जग जो प्रत्यक्ष लखाइ।
महाप्रलय जब होत है कहहु कहाँ चलि जाइ ॥२१॥

गुरु बसिष्ठ बोलेउ समुझाई। बाँझ पुत्र कहँ आवइ जाई ॥
जिमि अकास मँह बन दरसावै। तइसइ सुभु. यह जगत लखावै ॥
वारि तरंग ससी सीतला। अगिन ताप कज्जल स्यामलता ॥
नभ सूनता ब्रह्म जग माहीं। जानहु तात भेद कछु नाहीं ॥
निज स्वभाव राजत यह सारा। सत्ता आतम सरूप सम्हारा ॥
कोउ एक मिटे होइ निरवाना। नाथ कहउ अब सोइ बिधाना ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदि देव चिन्मात्र अचेता। चैत्य भाव चैतन्य समेता।
स्पन्दन सक्ति पवन मँह होई। चिन्मात्रा मँह चेतन सोई।
अहं अस्मि चेतन कहि लावत। संविद पूर्वक जीव सुहावत।

दो०–चित संविद संकल्प होइ बीज कहावत सोइ।
सर्व भूत सब भाँति कर जासों उतपति होइ॥२२॥

चित संविद सब जीवहिं होई। चेतन चैत्य सून्य तब सोई।
प्रकटे वेद शब्द गुन आये। सूर्य अग्नि बनि तेज सुहाये।
रस ते उदक गन्ध ते धरनी। पंचभूत जानहु सब सरनी।
जग संकल्प मलहिं ते जाये। येहि ते तात न शुद्ध सुहाये।
भासत जगत चिदणु मँह सारा। आडंबर संकल्प पसारा।

छन्द

सम सान्त स्वच्छ अनंत प्रिय परब्रह्म सास्वत राजई।
सम असम रूपहि जगत तेहि मँह तात यह उपराजई।
तहँ प्रथम चैत्यहि फुरन ते सोइ जीव संज्ञा छाजई।
तेहि दृश्य चेतन शब्द परस सरूप आदिक भ्राजई॥
येहि ते जगइ अप तेज धरती पवन नभ तरु जानिये।
ब्रह्माण्ड फल ते जगत कारन तात पंचहि मानिये।
तन्मात्र संविद् बीज ते आकाश ब्रह्म सरूप है।
जस बीज तइसइ फल लगत उत्पत्ति सोइ अनुरूप है॥
जब बीज ब्रह्महि फलउ ब्रह्म समान ब्रह्माकाश है।
चैतन्य संविद जगत भासत सोइ जीवाकाश है।
सोइ पंचभूतहि रहित येहिते शुद्ध निर्मल होत है।
आकाश चिद् रूपहि जगत भासत न कछु प्रिय द्वैत है॥
अहमस्मि जीवहि अहं ते चिन्मात्र चैत्योन्मुख भये।
संकल्प मन संसरन चक्षुहि श्रवन आदिक निरमये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

येहि भाँति रस मह निरत इन्द्रिय जीव अहमिति धारई।
जिमि मुकुर गिरि प्रतिबिंब इन्द्रिय देह बाह्य प्रचारई॥
यह देह इन्द्रिय बाह्य दृश्यहिं होत निज मँह भासई।
सोइ देह चिद् अणु संग मिलि बहु भाँति दृश्य प्रकाशई।
तेहि अहंकारहि क्रिया भासत स्वप्न मँह जिमि धावई।
सब चित्त कर स्पन्दन जगत प्रत्यक्ष होइ सोइ भावई॥
जस चित्त फुरतहिं गयउ तइसइ जगत मर्यादा भई।
संकल्प रूपहिं सकल येहि ते इतर नहिं कछु सोहई।
जागे लगइ जस सपन सब 'जगदीश' मोहिं बुझात है।
आकाश रूपहिं जानु येहि नहि तात कछु उपजात है॥

दो०–पूछेउ राम बसिष्ठ ते नाथ कहउ समुझाइ।
जीव एक सोइ कवन है जेहि ते सब उपजाइ॥२३॥

गुरु बोलेउ सुनु राम सुजाना। कवनउ जीव नाहिं प्रकटाना॥
सत्ता आतम स्वयं में राजत। भेद कल्पना तहँ नहिं छाजत॥
जग होइ सोइ सत्ता दरसाई। एक अनेक जीव नहिं भाई॥
ब्रह्म स्वरूप जीव सब होई। इहाँ न द्वैत भाव कछु कोई॥
पूछेउ राम बहुरि गुरु पाहीं। जब जग आदि जीव कोउ नाहीं॥
कहु येनकर के पालन करहीं। केहि के अज्ञा सबहि बिचरहीं॥
तब बसिष्ठ बोलेउ समुझाई। आदि जीव बिधि जानहु भाई॥
करि संकल्प रचेउ जग सोई। सुभ अरु असुभ बिचारेहु जोई॥

दो०–गुरु बोलेउ श्रीराम सों तात सुनहु धरि ध्यान।
तोहिं बोध हित कहत हौं यह मंडप आख्यान॥२४॥

शुचि सम्पन्न महा गुणवाना। भयेउ पद्म नृप परम सुजाना॥
पति परायणा छबि कर खानी। लीला सुमुखी मिली तेहि रानी॥
प्रीति परस्पर का कहि जाई। प्रान एक दुइ देह सुहाई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लीला मन बिचार अस आवा। सोइ रिषि मुनि सन बचन सुनावा।
सोइ उपाय प्रभु कहहु बखानी। जाइ न नृप कर कबहुँ जवानी।
तप ब्रत दान करउँ मैं सोई। अजर अमर जेहि ते नृप होई।
ऋषि बोले अस संभव नाहीं। देह न स्थिर कबहु रहाहीं।
जप तप ते बहु साधन होई। तदपि अमर जग होत न कोई।

दो०—रानी तब ब्रत ध्यान करि बाणी कीन्ह प्रसन्न।
तेहि ते दुइ बर पाइ के जीवन जानेउ धन्य ॥२५॥

प्रथमहिं जउ नृप छूटइ देहा। जीव न कतहुँ जाइ तजि गेहा।
दूसर बर मागेउ इमि सोई। जब चाहौं तब दर्सन होई।
येहि बिधि बीति गयउ बहु काला। रण मँह घायल भयउ नृपाला।
भवन आइ सोइ तजेउ सरीरा। बिकल नारि अति भई अधीरा।
जोग साधि पुनि सुरति जगाई। अर्द्ध राति वाणी प्रकटाई।
भक्ति देखि करुना उर आई। लीला ते अस कहेउ बुझाई।
पुत्रि अकारण सोक तुम्हारा। भ्रान्ति मात्र जानहु जग सारा।
मृगमरीचिका सरि यह बहई। जामें परि नाहक जग दहई।
आत्मा माहिं नाहिं कछु भयऊ। लीला कहेउ नृपति कँह गयऊ।
जननी बेगि जुगुति कहु सोई। पति दर्सन जेहिते मोहिं होई।
बोली देवि धीर मन धरहू। बिरथ पुत्रि तुम सोक न करहू।
समुझउ होइ तीनि आकासा। भूत चित्त अरु चिद सुप्रकासा।
तुम जइहौ जब चिद् आकासा। पति तुम्हार होई तोहिं पासा।
संप्रति तहाँ बिराजत सोई। तेहि मँह सब प्रतिबिंबित होई।

दो०—त्यागत सब संकल्प के चिदाकास सोइ होइ।
आश्रित धरा अकास जो भूत गगन है सोइ ॥२६॥

मिलइ परम पद दृस्य अभावा। बिनु अभ्यास नाहिं कोउ पावा।
देवि भई कहि अन्तरधाना। लीला मन साधन हित ठाना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निर्विकल्प समाधि तब लागी। खगवत अहंकार तन त्यागी ॥
गृह तजि नभ पहुँची उड़ि जाई। आत्म अनन्त शान्ति जँह छाई ॥
नन्द कल्पना धारन कारन। कीन्ही लीला नभ मँह बिचरन ॥
सिंहासन नृप लखेउ बिराजा। मण्डलेस बहुतक तहँ छाजा ॥
जयजयकार शब्द बहु होई। मन्दिर दिब्य बिराजत जोई ॥
पूरब मुनि धुनि मंत्र उचारा। नारि बिराजहिं साजि सिंगारा ॥
हय गय रथ सेवक बहु संगा। उत्तर खड़ी सेन चतुरंगा ॥
मण्डलेस पश्चिम दिसि नाना। लीला लखि मन अचरज आना ॥
बहुतक प्रजा तहाँ प्रकटानी। सभा जाइ बैठी तब रानी ॥

दो०–कोउ न लीलहि लखि सकइ सोइ देखत सब लोग।
जिमि अउरहिं संकल्प पुर होइ नाहिं संयोग ॥२७॥

अन्तःपुर देखेउ सोइ जाई। गन्ध धूप मन गयेउ लोभाई ॥
इस समान नृप कर जस छावा। को बरनइ जस बनेउ बनावा ॥
दसि दिसि केर दूत तँह आवइं। पृथक पृथक बृत्तान्त सुनावइं ॥
उ ठाँउ नृप छोभ बतावहिं। युद्ध कलह सब कहि समुझावहिं ॥
ला देखेउ सकल पसारा। ऋषि मुनि मंत्री बालक दारा ॥
का भई बुद्धि चकरानी। परी सोच भारी तब रानी ॥
म पति मरेउ कि नगर नसावा। जोइ देखौं परलोकहिं आवा ॥
नि देखेउ दिनकर नभ जागा। सुन्दर नृपति युवा अति लागा ॥
न साज समाज सजावा। पूर्व रूप नृप कर नहिं पावा ॥
ला चकित लौटि घर आई। समुझि परै नहिं बिधि प्रभुताई ॥
जन भृत्य दौरि सब आये। मंत्री मंडलेस बुलवाये ॥

दो०–पति सिंहासन स्वच्छ करि पुनः लगेउ दरबार।
मंत्री पंडित आदि सब बइठे भीर अपार ॥२८॥

तु नाहिं कतहूं नृप देखा। रानी करन लागि मन लेखा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गति बिधिकर कछु जाइ न जानी। सोचति चकित मनहि मन रानी॥
ध्यान कीन्ह प्रकटी तब बानी। रानी पूछेउ अति बिलखानी॥
मातु मोहि कछु समझि न आवा। केहि मानहुं सच काह बनावा॥
देखेउ सरग नरेस बनावा। किन्तु नृपति नहिं इहाँ लखावा॥
बानी कहन लगी समुझाई। कारन ते कारज प्रकटाई॥
जो कारन सत् काजहु साँचा। असत होइ तब असतहि राँचा॥
निज पति सृष्टि अकारन जानहु। गगन रूप तेहि जीवहु मानहु॥
तहँ समवाय निमित्त न कोई। तब सोइ कहौ कृत्रिम किमि होई॥
मैं तुम वह नभ मात्र सुहाई। जग यह भ्रम स्वरूप दरसाई॥
सत पदार्थ कर स्मृति सच होई। झूठहि स्मृति कर फल तिमि सोई॥
धरती सरग सकल भ्रम मानहु। संसय कर कारन निज जानहु॥
चिदाकास ब्यापक बिस्तारा। चिद्अणु अंस बृक्ष जग सारा॥
मेरु खम्भ नभ जेहिकर साखा। रस सागर त्रिलोक फल राखा॥

दो०—सिद्ध देव गन्धर्व नर मसक सदृस बिचराहिं।
सप्त लोक तँह डार सम तारक पुष्प जनाहिं॥२९॥

तेहि तरु छिद्र देस एक राजत। गिरि छाया तहँ नगर बिराजत॥
तेहि समीप सरिता सुचि बहई। नाम बसिष्ठ बिप्र तट रहई॥
धन विद्या बल ऋषिहिं समाना। ज्ञान भेद प्रकटत कछु आना॥
जिमि खेचर बसिष्ठ कर ज्ञाना। भूचर कर नहिं ताहि समाना॥
रूपवती पतिब्रता ललामा। अरुन्धती तेहिकर प्रिय बामा॥
नभ महँ अरुन्धति जस सोहति। तइसइ धरा इहउ मन मोहति॥
बिद्या कर्म कान्ति धन ज्ञाना। सब लक्षण दोउ एक समाना॥
एक दिवस बसिष्ठ मन भावा। गिरिवर शिखर बैठि सुख पावा॥
दल वल सहित दोउ नृप देखा। साज सिंगार करइ को लेखा॥
भूषण बसन सेन कुल संगा। मन अहेर कर उठत उमंगा॥
नृपहि बिलोकि बसिष्ठ लोभावा। नाना बिधि बिचार मन आवा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कंचित मोहुँ मिलत अस राजा। अइसइ सोभा अइसइ साजा।।
ाह उठन लागी मन भारी। होइ चतुर्दिक बिजय हमारी।।
त्र चँवर बहु सेन सुपासा। करतेउँ सब बिधि भोग बिलासा।।
स संकल्प कीन्ह मन माहीं। घिरेउ बिप्र अपनी परछाहीं।।
त्यु काल जब तेहि कर आवा। तेहि कर नारि मोहिं प्रकटावा।।

सो०–मागेउ सोइ बरदान, मोहि प्रसन्न अति जानि के।
दूरि जाइ नहिं प्रान, मम पति त्यागइ देह जब।।३०।।

हि ते बिप्र तजेउ जब देहा। प्रान गयेउ नहिं तजि निज गेहा।।
रमेउ गगन रूप करि धारण। पूरब दृढ़ संकल्पहि कारण।।
जहि ते अंकुर जिमि होई। देखेउ निजहि नृपति सम सोई।।
गेउ जस दस दिसि सोइ छाये। ससि प्रकास अरि तमहि नसाये।।
प्र वृन्द तेहि पूजन लागे। सत रज दूनउँ गुन सोइ पागे।।
हि कर नारि कहाँ यह जाना। सब बिलोकि अतिसय दुःख माना।।
न्धती त्यागी निज देहा। पति सों मिलि प्रकटी निज नेहा।।
इ वसिष्ठ पति पद्म तुम्हारा। नृप घर लीन्हेउ जन्म दुबारा।।
ला अरुन्धती तुम सोई। दृढ़ संकल्प किये अस होई।।
अकास गिरि सागर सारा। बिप्र सोइ अन्तःपुर धारा।।

दो०–आठ दिवस बीते उहाँ गयउ न सूतक काल।
साठ सहस्र बरिस गये परे भोग के जाल।।३१।।

ला जनम जाहि बिधि पावा। सोइ संक्षेपहिं तुमहिं बतावा।।
न्तु प्रपंच सकल भ्रम जानहु। जोइ जग भासित साँच न मानहु।।
ठइ जब यह जगत लखाई। स्मृति तब कइसे साँच कहाई।।
ला कहेउ साँच तव बानी। तदपि संक मन मोर समानी।।
व रहेउ जब निज गृह माहीं। जगत अडंबर कहाँ समाहीं।।
हि कहेउ तहँ सकल पसारा। पर्वत सिन्धु बिभव भव सारा।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लघु गृह कइसे सबहिं संमाहीं । याते होत संक मन माहीं
देबि कही मैं झूठ न भाखा । सास्वत अस बिधान करि राखा
नस्वर देह जबहिं यह नासत । तबहिं जीव नभ रूप प्रकासत
निज बासना रूप जग देखत । जिमि सपनहि द्रष्टा सब लेखत
जगत फुरइ अन्तःपुर माहीं । सोई चित्ताकास कहाहीं

दो०–मृगतृष्णा के जल सदृस पुत्री यह जग जान ।
कोउ पदार्थ उपजत नहीं सब भ्रम केर बिधान ।।३२।।

स्वप्न नगर संकल्पपुर सदृस जगत कर भान ।
जिमि मरु महँ सरिता फुरै होत नाहिं जलपान ।।३२।।

रहित उपाधि रूप आकासा । भ्रम बिनोद आतमा प्रकासा
तेहि महँ परि भटकत जग प्रानी । भ्रम कर कँह लगि कहौं कहानी
हरिश्चन्द्र नृप भ्रम जब भयऊ । बारह बरिष राति महँ गयऊ
उन्मत भये स्वप्न के आये । थोरहिं में बहु काल लखाये
बिन भोगे भोगत सब भोगा । सोकोत्साह होहिं संजोगा
भ्रम परि देखत कालहिं आना । तइसइ भासत जगत प्रमाना
इतर ब्रह्म ते नहिं कछु कोई । येहि ते बन्ध मोक्ष नहिं होई

सवैया

बानी की ज्ञान भरी सुनि बात विनीत हो लीला ने प्रश्न उभारा
बिप्र मरे दिन आठ भये कहु कैसे लखौं सोई सृष्टि प्रसारा
बोली सरस्वती संभव है तेहि को अवलोकन योग के द्वारा
सृष्टि सोई चिद् अंबर राजत और कोऊ येहि हेतु न चारा

थूल देह जब लौं तब बासा । ताहि दरस कर होइ सुपासा
निराकार आकार न पावै । योग काज यह सुगम बनावै
थूल देह तजि चित थिर होई । निरावरण पहुँचउ ढिग सोई
लीला चिदहि ब्योम मैं रहऊँ । जाउँ तहाँ जँह जँह चित चहऊँ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०–सृष्टी निज संकल्प ते चित्तवृत्ति जब होय।
आपन देह न भासई अपर लखं किमि कोय।।३३।।

थूल देह सों होइ बिरागा। निराकार साधन चित लागा।।
सूक्ष्म रूप येहि ते प्रकटाये। खग सम उड़ि अकास बिचराये।।
लीला कीन्ही प्रश्न बहोरी। दासी मातु सरन मैं तोरी।।
अनुभव सत्ता आपन जानी। बहुत काल मैं किमि भटकानी।।
देवि कहेउ येहि कर भ्रम कारन। बिनु बिचार नहिं होइ निवारन।।
भ्रम बिचार दोउ तोर सरूपा। अबिचारहिं भटकत तम कूपा।।
आत्म बिचार होत भ्रम जाई। द्वैत भाव स्वयमेव मिटाई।।
स्याभाव बिराग जगावहु। आतमदरस अभ्यासहिं पावहु।।
हि ते होइ सान्त भ्रम सारा। पुत्रि परम कल्यान तुम्हारा।।
श्य जगत सों होत बिरागा। मन वासना भाव सब भागा।।

दो०–पुत्रि सतत अभ्यास ते जग भ्रम मिटिहैं तोर।
अन्धकार जिमि नसत है जेंहि छन होत अँजोर।।३४।।

ह सकल भासत जोइ तोही। स्वप्न समान गहौ तुम ओही।।
ज स्वरूप कर स्मृति कर जोई। स्वप्न सरीर न भासइ सोई।।
मि बासना सान्ति जब पाये। जाग्रत देह सान्त होइ जाये।।
वन मुक्त जानु जग सोई। बस्तु बासना जौ नहिं होई।।
इ सत्ता सामान्य कहाई। कोउ कल्पना नाहिं रहि जाई।।
दा ज्ञान बासना नाहीं। रूप सुषुप्ती सोइ कहाही।।
टारत बासना बिहीना। सोइ तुरीया होइ प्रवीना।।
प्रत्यक्ष प्रयास कराहीं। अन्तःकरण बासना नाहीं।।
वनमुक्त कहावत सोई। दृढ़ साधना करइ तब होई।।

दो०–जेहि कर चित सतपद भयउ जग बासना न जाइ।
किंचित होइ प्रबाह जौ पुत्रि स्वतः बिनसाइ।।३५।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देह बासना जबहिं मिटाई। भौतिक भाव नाहिं रहि जाई।
ताहि सरीर चित्तमय लागै। बहु जनमन कर सुधि तब जागै।
जँह चाहइ तँह पहुँचइ जाई। जोइ चित चाह सिद्धता पाई।
अहं देह कर भाव नसावै। तब प्रत्यक्ष जगत दरसावै।
भौतिक देह वासना नासइ। अन्तर देह बृत्ति तब भासइ।
येहि ते निज बासना हटावहु। जीवनमुक्त श्रेष्ठ पद पावहु।
जीव न मरइ जनम नहिं धरई। मन संकल्प बासना जरई।
लीला पूछेउ गिरा भवानी। मोहि उपदेसेउ बहुत बखानी।
अब अभ्यास बिधान बतावहु। केहि बिधि होइ ताहि समुझावहु।
कही देबि लीला सुनु सोई। बिनु अभ्यास सिद्धि नहिं होई।
पुत्रि मनहिं निज धरि बिस्वासा। करहु अरंभ ब्रह्म अभ्यासा।

दो०—आत्म ज्ञान हित चिन्तना कथन परस्पर बोध।
ब्रह्माभ्यासहिं जानु येहि चेष्टा बिनु अवरोध ॥३६॥
गुरु बानी अरु सास्त्र मत प्रकटइ जुगुति लगाइ।
देबी कही बुझाइ अस सोइ चिन्तना कहाइ ॥३६॥

सिष्य बृन्द उपदेसइ जोई। बोध परस्पर जागृत होई।
निस्चय जो निर्णय महँ आवै। सोइ ब्रह्म अभ्यास कहावै।
पाप रहित इर्ष्या जेहि नाहीं। सेवक ब्रह्म जानु तुम ताही।
निसि दिन जे अध्यात्महि साधत। जिन्हहिं बासना रंच न ब्यापत।
ब्रह्माभ्यासी कर अस रूपा। जे नहिं परहिं कबहु भव कूपा।
भोग बासना जिन्हहिं न कोई। जग अभाव जानत मन जोई।
भव्य मूर्ति नहिं राग सतावै। सत्वर सोइ आत्मपद पावै।
जेनकर बुधि विराग रंग राँची। आत्मानन्द बृत्ति सुचि साँची।
मिथ्या लगत त्याग मन माहीं। ब्रह्माभ्यासी तेहि कहाहीं।
लीला राग द्वेष के जाये। दृस्याभाव स्वभावहिं आये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परम तत्व तब होइहै ज्ञाना । परमानन्द मिलइ निरवाना ॥
करइ दृस्य मँह जतन जे प्रानी । ते प्राकृत भटकइ अभिमानी ॥

दो०–ब्रह्माभ्यासी बिबिध ये सेवक ब्रह्म कहाँहि ।
उत्तम मध्यम अरु अधम तीन प्रकृति बिचराँहि ॥३७॥

उत्तम बोध कला उपजावै । दृस्य असंभव जाहि जनावै ॥
मध्यम दृस्य असंभव जाना । बोध कला कर भयउ न ज्ञाना ॥
दृस्य असंभव हेतु प्रयासा । सोइ तीसर नित रत अभ्यासा ॥
पुत्रि कहेउँ साधन बिधि जोई । करु अभ्यास परम पद होई ॥
गुरु बोले सुनु राम सुजाना । लीलहिं दीन्ह देबि इमि ज्ञाना ॥
बालमीकि तब कहेउ बुझाई । सभा उठी संझा जब आई ॥
प्रातःकाल सभा जब लागी । भई अरंभ कथा रस पागी ॥
पुनि लीला देबी कर ज्ञाना । दृस्य कल्पना तजि सुख माना ॥
तब स्वभाव सत्ता मन ठयऊ । अपर सृष्टि दर्सन चित भयऊ ॥
लांघेउ ब्योम अपार अनन्ता । देखी सृष्टि भूत पर्यन्ता ॥
कर गहि देवि संग संग जाहीं । जइसे संग चलइ परछाहीं ॥
घटा सघन धधकइ अंगारा । पवन बेग कहुँ उठइ अपारा ॥
निरमल गगन पार पुनि जाई । सूर्य चन्द्र जँह नाहि लखाई ॥
उड़त देवगन चढ़े बिमाना । विद्याधर किन्नर स्वर नाना ॥
सृष्टि प्रलय कर जँह मिति नाहीं । सिद्ध बैठि कहुँ ध्यान कराहीं ॥

दो०–बिपुल दैत्य डाकिनी कहुँ, कहुँ जोगिनि बिचराँहि ।
पसु पाँखी नाना बरन कहुँ बन सघन फिराँहि ॥३८॥

वरुण कुबेर इन्द्र कहुं राजत । लोकपाल जग कतहुं बिराजत ॥
कहुँ सुमेरु मदराचल सोहत । बन उपवन अनुपम मन मोहत ॥
कहुँ अन्हार कहुँ गंग तरंगा । ताल बावड़ी कमल कुरंगा ॥
कल्पबृक्ष चिन्तामणि राजत । कहुँ देवता यान निज साजत ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युद्ध प्रलय बहु नखत फिराहीं। बिबिध रूप कछु बरनि न जाहीं।
जम बाहन कहुँ महिष समूहा। भैरव गण नाचत करि हू-हा।
जगज्जाल देखे तिन्ह नाना। प्रानी गूलर कीट समाना।
तब ब्रह्मण्ड मध्य मँह जाई। लखी अष्टदल कमल खिलाई।
पर्वत ढोढ़ चेतना बासा। सागर सरि बहु ताल तमासा।
निसा भौंर पंकज सकुचाहीं। अतल पताल पंक दरसाहीं।

दो०—जन देवता सुपात सम राकस कंटक जाल।
सेष नाल सम जानियत हिलत होत भूचाल ॥३९॥

रबि ते चहुँदिसि जगत प्रकासा। जोजन कोटिक दीप बिकासा।
तेहिकर दून सिन्धु जल खारा। चौगुन साकदीप बिस्तारा।
दूना क्षीर सिन्धु लहराबै। तासु दून कुसदीप लखावै।
क्रौंच दीप देखा तेहि आगे। घृत दधि सागर ते दोउ पागे।
सप्त दीप रस इक्षु अपारा। पुष्कर दीप बारि बिस्तारा।
सप्त समुद्र स्वर्ग सम धरनी। लोकालोक जगत गिरि सरनी।
सिन्धु बिसाल अपर पुनि आगे। दसगुन पावक देखेउ जागे।
दसगुन पवन दसहि गुन अंबर। जोजन लक्ष परे घन डंबर।
जब इन्हकर आगे पथ आवा। तब बसिष्ठ कर मण्डल पावा।
सोभा लखेउ सकल बिनसानी। बाग सूख जिमि मिलेउ न पानी।

दो०—ग्राम दसा कहि जाइ किमि रुदन करहिं सब झारि।
लीला अस परिणाम लखि लागी करन बिचारि ॥४०॥

सत संकल्प मनहिं मन कीन्हा। प्रकट भई कोउ नहिं तेहि चीन्हा।
गौरी लक्ष्मी करि तिन्ह जाना। चरन बन्दि पुनि कीन्ह प्रनामा।
अरुन्धती सुत ज्येष्ठ प्रवीना। बिनत बचन बोलेउ होइ दीना।
काल गयेउ पितु मातहिं खाई। अब त्रिलोक मोहिं सून जनाई।
तरु के खग सब उड़ि बन गये। नदी पहार दुःखित सब भये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मल पत्र जल अश्रु जनावै । पवन उष्ण निःस्वास बुझावै ॥
रउ कृपा मम सोक निवारहु । देबि बिपद सागर ते तारहु ॥
ला देखि दया अति कीन्ही । आपन भुजा सीस धरि दीन्ही ॥
मिटेउ सीतलता आई । निर्धनता गइ संपति छाई ॥
न जन के मन आँनद जागे । सूखे तरु पल्लव फल लागे ॥

दो०-पूछेउ राम बसिष्ठ सन कारन कहउ बुझाइ ।
किमि लीला नहि जननि होइ पूतहि मिली हहाइ ॥४१॥

दाकास ज्ञानी कँह भासत । जगत कल्पना ताहि न फाँसत ॥
म तोर भाव तँह नाहीं । चिदाकास होइ जे बिचराहीं ॥
रूप करुना उर धारा । तेहि ते सिर पर हाथ पसारा ॥
वसिष्ठ तात सुनु आगे । छन मँह दोउ सरूप सोइ त्यागे ॥
रूप देबी जब धारा । लीला ते अस बचन उचारा ॥
न जोग तोहि समुझावा । पुत्रि उचित जोइ सोइ देखावा ॥
क्ति कर इहइ प्रमाना । पूछउ अब चाहउ जो जाना ॥
कही समुझि नहिं आवा । पति मोहिं देखि जानि नहि पावा ॥
देवि सुनु लीला रानी । द्वैत अद्वैत अनन्त कहानी ॥
संकल्प अबहिं हम ठाना । सुत पति लखि करिहैं पहिचाना ॥

०-लीला बोली रुखेउँ सब नभमण्डल कर हाल ।
तीनि जनम पति लहेउ मम चक्र चलत इमि काल ॥४२॥ क
जन्म मरण संतत चलत मिलत न येहिकर थाह ।
मातु कहहु अब का करौं समुझि परइ नहि राह ॥४२॥ ख

अरुन्धती सुनु बानी । जनम मरन सब जगत कहानी ॥
जनम पुत्रि तुम पाये । बिबिध रूप पति संघ सुहाये ॥
वसिष्ठ रहे पति जोई । पद्मराज होइ आयेउ सोई ॥
र सत्र मण्डप मँह राजत । पति बसुधापति होइ बिराजत ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सोइ जग भोग माहिं बिकलाना। तेहि चित नाहिं आत्मपद ज्ञाना।
सत्ता मद चित अहं समाना। निज संकल्प बिकल्प भुलाना।
जो चाहउ पति ढिग पहुंचावउँ। लीला रंच बिलंब न लावउँ।
जेहि जग मण्डल जानहु पासा। चिदाकास पुत्री सोइ भासा।
सृष्टि हेतु सोइ दूरि अनन्ता। बपु येहिकर नभ रूप गहन्ता।

दो०—जिमि जलमाहिं तरंग उठि पुनि बिलीन होइ जाइ।
तिमि आत्मा मँह जगत सब उपजइ अउ बिनसाइ ॥४३॥

लीला तब बोली असि बाता। पुरुब जनम कर स्मृति मोहि माता।
राजस जनम प्रथम बिधि दीन्हा। अष्टोत्तरसत जनम सो लीन्हा।
प्रथमहिं चिदाकास ते पावा। विद्याधर तन नारि सुहावा।
कर्म प्रभाउ धरा पुनि आई। जेहिते मातु सतत दुःख पाई।
खगी होइ जाल मँह परी। भिलनी तनु विपदा सिर धरी।
ऋषि गृह पुष्पित लता सुहानी। निज कर ते ऋषि डारेउ पानी।
सींचत ऋषि उर प्रीति दृढ़ाई। तेहि गृह पुनः सुता बनि आई।
पुनि बानरी गऊ पुनि भ्रमरी। मृगी आदि नाना तन बिचरी।
नृपति होइ सत बरष बिताये। कच्छप हंस जनम पुनि पाये।
येहि बिधि बहुत जनम मैं धारा। पायेउँ कष्ट सिन्धु संसारा।

दो०—आत्मज्ञान बिनु मातु नहिं येहि संसृति कर नास।
निःसंकल्पहि पाइ पद जागेउ मन बिस्वास ॥४४॥

सवैया

प्रस्न किये तब राम बसिष्ठ सों नाथ कहौं मोहिं बात बुझाई।
आदि न अन्त अनन्त लगै ब्रह्मण्ड भला यह कइसे बंधाई।
संक निवारण हेतु तबै इमि बोले बसिष्ठ हियँ मुसुकाई।
है कछु नाहिं कहूँ ब्रह्मण्ड सुनौ सुत कोऊ न आये न जाई।
राम सुनौ कछु काल गये तेहि पर्वत ग्राम बसिष्ठ बिजाने।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मण्डलाकास के कोनहिं में सोइ सागर राजसमाजहिं जाने ।
आपुहि पद्म नरेश बिचारि अरुन्धती को कहि लीला बखाने ।
सोइ बिदूरथ होइ प्रकटे सब रूप सरूपहिं चित्तहि आने ॥ २

तात बिचारि बिलोकौ भला कँह रूप गये केहि रूप में आवा ।
कीन्हीं सरस्वती जी ने कृपा तब लीला उड़ी नहि गेह भुलावा ।
स्वप्न समानहि जानौ तेही जब आँखि खुले कछु हाथ न पावा ।
आना औ जाना न होत कहूँ सब जानहु कल्पना केर बनावा ॥ ३

नामहि मात्र फुरै जग तात निवारन ज्ञान प्रकास ते होइ ।
पौन प्रवाह तरंग उठै कहु सान्त भये कँह दीखत सोई ।
किंचन चित्त जगै जग भाव अभाव भये दरसात न कोई ।
स्वप्न में का का लखात नहीं सोइ जानत साँच है जागत जोई ॥ ४

स्वप्न में जइसे किला दरसै मरुभूमि में ज्यों लहरात है पानी ।
स्वर्ण में नाना अभूषण भासत लीलहु तइसे छटा दरसानी ।
कल्पना के अनुरूप लखै सब बावड़ी ताल लता मनमानी ।
बाग बगीचा सुहावन देखि धरा सोइ स्वर्ग समानहिं जानी ॥ ५

किन्तु न साँचहि में कछु होइ संकल्पहि ते सब दृश्य लखाये ।
ज्यों मन कल्पना होत अनेक जहाँ उठै चाह तहैं चलि जाये ।
दूरी अनन्त समीप जनात अपार समय छन माहिं समाये ।
बासना मात्र सबै जग जाल न कोऊ मरै न कोऊ प्रकटाये ॥ ६

दो०—गुरु बसिष्ठ बोलेउ बहुरि सुनहु राम चित लाइ ।
आत्माभ्यासहि साधि दोउ ज्ञान त्रिकालहिं पाइ ॥४५॥ क
येहि ते लीला देबि सों कहेउ पूर्व इतिहास ।
सहज बोध पायेउ सोई निज मंडप आकास ॥४५॥ ख

कही सुनु लीला रानी । दिव्य बोध हित प्रकटी बानी ॥
कमल दस अंगुल ऊपर । हृदयाकास अंगुष्ठ मात्र कर ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेहि मँह संविद भयउ अकासा। नृपति बासना पाइ बिकासा
सागर धरा राज्य प्रकटावा। सोइ बिस्तार चतुर्दिक पावा
गयेउ आठ दिन जब तन त्यागा। काल अनन्त इहाँ सोइ लागा
तेहि पुर्यष्टक जगत फुराई। सोइ विदूरथ रूप जनाई
संकल्पहि संविद होइ आवा। तेहि ते अस मण्डल सोइ पावा
लीला कही चलउँ अब तहवाँ। भरता मोर विदूरथ जहवाँ
चिदाकास ते पासहिं सोई। याते हमहिं बिलम्ब न होई

दो०—अन्तबाह बपु ते उड़ी दूनउ ब्योम अपार।
सूर्य चन्द्र मण्डल गये देखी घन अन्हियार ॥४६॥

देबि कही लीलहिं समुझाई। महाकास हम पहुँचे आई
इहाँ न रबि ससि गति लखि जाई। ऊर्ध्वहिं तोहि पुत्रि लेइ आई
अब ब्रह्मण्ड कपाट लखाई। जोजन कोटि अनन्त सुहाई
रज कन येहि कर बज्र समाना। लांघेउ तेहि कछु श्रम नहि माना
दस गुन जल तेहि दस गुन ज्वाला। पवन पार पहुँची तत्काला
नित्य अनित्य सुद्ध आकासा। बोधहिं मात्र होइ जोइ भासा
रज सम तँह ब्रह्माण्ड लखाई। येहि बिधि परमाकास सुहाई
राम चिदणु जहँ सृष्टि फुराई। अधः उर्ध्व कोउ तिर्यक जाई
जदपि साँच तहँ कोउ नहिं जाई। सत्ता आतम सोइ प्रकटाई

दो०—कर्ता कर्महु करण अरु संप्रदान जे आहिं।
गुरु बोलेउ प्रिय राम सुनु ब्रह्महि जानहु ताहि ॥४७॥

येहि विधि तिन्ह ब्रह्मण्ड निहारा। उपजत मिटत सृष्टि नहीं धारा
कहुँ अन्हार कहुँ जोति अपारा। बेद बिहित कहुँ कर्म पसारा
ब्रह्मा बिष्णु महेस प्रजापति। जहँ तहँ इन्ह ते देखी उतपति
कतहुं अनीस्वरबादी राजत। कतहूँ मानव मात्र बिराजत
चिदाकास कर सकल पसारा। निज संकल्पहिं दरसत सारा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

येहि विधि नृप मण्डल जब गयी । पद्म नृपति सब देखत भयी ।।
सव समीप लीला कर देहा । अगर सुगन्ध भरेउ बहु गेहा ।।
दोउ बिचार कीन्हेउ मन माहीं । चलौं बिदूरथ सृष्टि लखाहीं ।।
अन्तर बाह सरीर उड़ाई । नभ मारग बहु बेग बढ़ाई ।।
नांघेउ नभ ब्रह्मण्ड अपारा । जहाँ बिदूरथ नभ बिस्तारा ।।
नृपति बिदूरथ मण्डप सोहा । सिद्ध राज जहँ ठानेउ द्रोहा ।।
दोउ बीच जहँ छिड़ी लड़ाई । जाहि त्रिलोकी देखत आई ।।

दो०-राकस भूत पिसाच गन जोगिनि बिबिध समाज ।
देव यान आरूढ़ होइ बिचरत दरसन काज ।।४८।।

खड्ग कुलिस परिघादिक भाला । छूरी कटार त्रिसूल बिसाला ।।
अस्त्र प्रहार होत घन घोरा । मनहु मेघ बरसत चहुं ओरा ।।
कातर भागत बीर जुझाहीं । हय गय रथ पैदल मिति नाहीं ।।
गुरु बोलेउ आगे सुनु रामा । दूनउ देबि लखत संग्रामा ।।
गगन माहिं जिमि घन टकराई । दोउ दल तड़सइ करत लराई ।।
सब्दु होत जनु हाहाकारा । मनहु प्रलय कर बजत नगारा ।।
बिज्जु जगत चमकत हथियारा । कातर भागत छोरि अखारा ।।
कटु सिर गिरत कतहु बहु अंगा । तदपि बीर नहिं तजत उमंगा ।।
सरिता सहस रक्त कर धारा । मज्जत हय गय सेन अपारा ।।

दो०-लीला होइ अदृस्य तन जाइ कल्प आकास ।
युद्ध भूमि देखन लगी जहां भयउ बहु नास ।।४९।।

जिमि पाँखी दीपक मँह जरई । सरिता उमगि सिन्धु मँह परई ।।
तिमि चँहु दिसा बीर रन करहीं । भरि उमंग मन रंच न डरहीं ।।
राम करउँ किमि समर बखाना । सेष गिरा करि सकहिं न गाना ।।
ताइ संक्षेपहिं तोहिं सुनावा । येहि बिधि साँझ समय होइ आवा ।।
नृपति बिदूरथ सचिव बोलावा । रोकहु रन आदेस सुनावा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अस्ताचलहिं गयउ दिनमाना। जोधा थके समर करि नाना॥
दोउ दल मध्य सचिव तब गयऊ। बस्त्र फेरि रन रोकत भयऊ॥
उभय दलन मँह बजे नगारे। बीर लवटि निज राज पधारे॥
निर्मल गगन निसा तब आई। युद्ध भूमि अति सान्ति लखाई॥

दो०—राकस डाकिनि स्यार बहु पसु गन प्रेत पिसाच।
मास खात पीअत रुधिर हरषि करत बहु नाच॥५०॥

देखि पिसाचनि घायल डरहीं। कलपत सक्ति हीन का करहीं॥
प्रात समर योजना बनाई। सयन कीन्ह नृप महलहि जाई॥
किन्तु न नीद निसा तेहि आई। बैठेउ पलंग उचकि अकुलाई॥
सूक्ष्मरूप देबी दोउ आई। प्रबिसी तब नृप मन्दिर जाई॥
करि संकल्प देवि दोउ जाई। नृप के अन्तःपुर प्रबिसाई॥
तहँ जगमग अति जोति सुहाई। मिटेउ ताप सीतलता आई॥
अमृत बृष्टि भइ जिमि नृप ऊपर। उठे चकित श्रद्धा बस सत्वर॥
बिनय कीन्ह देबी दोउ जानी। करि पूजन बहु बिधि सनमानी॥
वाणी चाहेउ परिचय जाना। बिनत सचिव तब कीन्ह बखाना॥
नृप इक्ष्वाकु बंस प्रकटाये। नृपति बिदूरथ नाम कहाये॥

दो०—नृपति कुन्दरथ बुधरथ सिन्धु रथहु गुनवान।
बिष्णु कला सयरथ कुल नभरथ पूत महान॥५१॥

मातु सुमित्रा मन हरषाई। ससि सम प्रकट भये जब आई॥
बय दस बरिस राज नृप दीन्हा। निज तप हेतु गवन बन कीन्हा॥
ता दिन ते प्रभु राज सम्हारा। पालेउ धर्म पुण्य बिस्तारा॥
तेहिकर फल दरसन तव पावा। बड़े भाग अस बनेउ बनावा॥
नृपति सीस देबी कर राखा। तम मिटि गयउ ज्ञान चित भाखा॥
पूर्व जनम कर स्मृति होइ आई। सब बृतान्त तव कहेउ बुझाई॥
लीला पद्म रूप जब रहेऊ। जगज्जाल परि बहु दुःख लहेऊ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कछु दिन भये तहाँ तन त्यागे । सोइ सत साल मातु मोंहि लागे ।।
स्मृति पूरब कर सब मोंहि आई । अस अचरज कछु नहिं कहि जाई।।
मृत्यु काल मूर्च्छा जब आये । तेहि महँ अइसइ तात जनाये ।।
बीते अष्ट दिवस तन त्यागे । बरिस अनेक सोइ तोंहि लागे ।।

दो०–येहि ते पूर्वंहि रहे तुम बिप्र बसिष्ठ सरूप ।
अरुन्धती पत्नी मिली तुर्मांहि तात अनुरूप ।।५२।।

अरुन्धती मोंहि ते बर पाई । पति के मरे जीव नहिं जाई ।।
येहि ते तेहि मण्डल आकासा । पद्मराज नृप रूप प्रकासा ।।
अरुन्धती लीला होइ आई । एहि बिधि संवित चक्र चलाई ।।
तेहि मण्डल जब तुम तन त्यागेउ । नाना भाँति जगत तहँ पागेउ ।।
यह जग फुरेउ पद्म उर सारा । सोइ मण्डपहिं भयउ बिस्तारा ।।
पद्मराज कर मण्डप जोई । सुत बसिष्ठ मण्डप महँ सोई ।।
सोइ बसिष्ठ तुम भयेउ बिदूरथ । येहि बिधि समुझउ तात जन्मपथ ।।
नृप कल्पना माहिं सब भासत । साँच इहै नहिं कछु उपराजत ।।
सपना माहिं काल बहु होई । मृत्यु मूर्च्छा जानहु सोई ।।
नहिं तुम मरेउ जनम नहिं पायेउ । सत्ता आतम जगत उपजायेउ ।।
सकल सून्य नहि कोउ संसारा । कतहुं नाहिं कोउ देखनहारा ।।

दो०–आतमबोध जेहि भयउ नृप समुझत भ्रम संसार ।
तिन्हहिं न साँच बुझाइ कछु दृढ़ जे सत्य बिचार ।।५३।। क

सो०–तिन्ह कहँ दृढ़ संसार, जे नहिं पायेउ परम पद ।
मरुथल मँह जलधार लागत ज्ञान भये बिना ।।५३।। ख
जाग्रत रूप जनाइ दीर्घ काल कर सपन जग ।
तात न कछु प्रकटाइ सान्त रूप चिदकास मँह ।।५३।। ग

चिदाकास सोइ आतम होइ । जस स्पन्द फुरइ जग सोई ।।
फुरइ स्वप्नपुर तेहि चिदकासा । द्रष्टा होइ सब लखइ तमासा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्रष्टा दृस्य चेतना संविद । तहाँ बिराजत ब्रह्म सर्वं बिद ॥
प्रकटी राम संक तेहि काला । कहहु कृपा करि दीन दयाला ॥
जाग्रत भये सपन मिटिजाई । तेहि कर कोउ न पदार्थ लखाई ॥
प्रभु जग सदा प्रकट रह जोई । किमि सपना ते समता होई ॥
गुरु बोले अन्तर नहिं मानहु । जाग्रत स्वप्न एक तुम जानहु ॥
सपन झूठ जागे पै लागैं । तइसे ज्ञान भये भ्रम भागैं ॥
जग आभास मात्र सुत होई । आतम बोध सत्ता नित सोई ॥
जस कल्पना तहाँ तस भासत । नाना रूप सरूप बिकासत ॥

दो०–रामहिं अस अमुझाइ गुरु कहेउ तात धरु ध्यान ।
अमृत बचन सुनि देबि कर नृप उर उपजा ज्ञान ॥५४॥

बव बानी अस कही बहोरी । सबहि कहा तोंहि तत्व निचोरी ॥
सुनु धरि ध्यान कहउँ अब जोई । रण महँ तात मृत्यु तव होई ॥
अस कहि देवि जान जब लागी । कहेउ नृपति मैं अति बड़ भागी ॥
जननी देहु मोंहि बरदाना । मुये पद्म सव करहुँ पयाना ॥
मंत्री लीला मिलहिं बहोरी । पुरवउ देबि चाह यह मोरी ॥
देबि कही सुनु तात सुजाना । मुदित देहुं तोंहि सोइ बरदाना ॥
सेवा मोर जाहि हित होई । भगतहि देहुँ हरषि मैं सोई ॥
मिलिहि पद्म नृप कर तोहि देहा । संक रहित बिचरहु निज गेहा ॥
अस कहि लागी करन पयाना । तेहि छन कोउ दूत प्रकटाना ॥
राजहिं सोइ अस खबरि जनाई । प्रभु गढ़ पर अरि कीन्ह चढ़ाई ॥
गदा चक्र बरसत हथियारा । मनहु प्रलय कर बजत नगारा ॥
बरसत बान जरत बहु आगी । जनु सागर दहकत बड़वागी ॥

दो०–महा प्रलय के ज्वाल सम दिसा दिसा धुधुआत ।
गिरत नखत बरसत अगिन जीव जगत जरि जात ॥५५॥

अस बिनास कर तनेउ विताना । हाहाकार होत स्वर नाना ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मोह नेह कर गूंजत बानी । मरतिउ बेर तजत नहिं प्रानी ।।
नृप देखेउ लीला तहँ आई । जीरन पट मुख कमल सुखाई ।।
संग सखी तब नृपहिं बतावा । अन्तःपुर अरि दल चढ़ि आवा ।।
हेउ नगर हरि लेइ गये नारी । लोगन दुःख दीन्हें अति भारी ।।
ीलहि चोरि इहाँ लेइ आवा । अरि तव सकल सेन बिनसावा ।।
नी नृपति सब बिपति कहानी । देबी सन बोलेउ नत बानी ।।
तु सरन तुम्हरे यह आई । रक्षहु येहि मैं करउँ लराई ।।
कहि नृपति रणांगन गयऊ । लीला के मन बिसमय भयऊ ।।
ज प्रतिरूप देखि चकरानी । बिनत देबि सन बोली बानी ।।
तु मोहिं कछु समुझि न आवा । तब देबी अस कहि समुझावा ।।
चित संवित् तें स्पन्दत जोई । तइसइ होइ प्रकटत जग सोई ।।
इ बिचार करि जन तन त्यागत । तेहि छन तस सरूप सोइ पागत ।।
पनहिं सम परलोक फुराई । चित मँह नाना रूप लखाई ।।

दो०—पति तुम्हार मृत काल मँह प्रकटेउ जिन्ह मँह नेह ।
सोइ सोइ भासत भये सद्यः धरि धरि देह ।।५६।।

सत पदार्थ होइ सत भासत । अस अज्ञानहिं काल प्रकासत ।।
न काल नहिं कछु दरसाई । जिमि जागे नहिं सपन लखाई ।।
त्यु मँह जाग्रत देह नसाई । मृतक जन्म महँ असत जनाई ।।
स बिचारि अवलोकहु सारा । भ्रान्ति मात्र यह सकल पसारा ।।
ता ब्रह्म आप महँ छाजत । जग अज्ञान मात्र यह राजत ।।
मि अकास महँ तरुवर भासत । तिमि आत्मा महँ जगत प्रकासत ।।
तृष्णा कर जल जग मानहु । परि अज्ञान साँच जनि जानहु ।।
त तरंग जीव जल माहीं । येहि कर अपर रूप कोउ नाहीं ।।
निहिं सर्वात्मा दरसाई । अज्ञानिहिं कछु अउर जनाई ।।
मि सुगन्ध कर रूप न होई । तिमि जगतहु कर बपु नहिं कोई ।।
ता ब्रह्म जगत होइ भासत । चेतन संबिद स्पन्द प्रकासत ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बस्तु साँच जग कर नहिं कोऊ। ज्ञान भये भासत नहिं सोऊ॥
लीला जीव मृतक जब होई। फुरइ जगत छन महँ तब सोई॥
पति तव जस संकल्प जगावा। सभा नारि मंत्री फुरि आवा॥

दो०—अस प्रसंग कहि गुरु कहेउ राम सुनहु धरि ध्यान।
देबी पद निज सीस धरि लीला माँगेहु ज्ञान॥५७॥

देबि ध्यान करि जेहि हम पूजा। रूप तुम्हार न तेहि ते दूजा॥
करहु मातु मो पर अब छोहू। तुम सम दीनदयाल न कोऊ॥
मगन देबि तब कहा बुझाई। पुत्री तव श्रद्धा मोहिं भाई॥
भक्त बछलता कर मम बाना। मागु तोहि देइहौं बरदाना॥
लीला बोली दोउ कर जोरी। मातु लालसा पुरवहु मोरी॥
तजइ सरीर समर पति जबहीं। येहि तन ते तेहि पावौं तबहीं॥
अइसइ होउ कही जब बानी। लीला पूर्व बुद्धि चकरानी॥
सत्यमयी तुम ब्रह्म सरूपा। समुझि परइ नहिं चरित अनूपा॥
देबि प्रपंच सृष्टि दरसाई। कहहु मोहिं काहे लेइ आई॥

दो०—देबि कही लीला सुनहु मैं न करहुँ कछु काज।
जीब करत संकल्प जो ज्ञप्ति होइ उपराज॥५८॥

जीव माहिं चेतन मैं देवा। जस भावना होत तस भेवा॥
तुमहु पुत्रि मागेउ बरदाना। बिचरइ निज मण्डल पति प्राना॥
तेहि अनुसार तोहि समुझावा। जेहि ते पुत्रि बोध तोहिं आवा॥
देह सहित भर्ता संग जाई। जस चाहेसि तइसइ येहि पाई॥
जस जस चित स्पन्द दृढ़ाई। तइसइ सोइ सिद्धता पाई॥
तप दृढ़ता कर फल अस होई। आतम देव होइ प्रकटत सोई॥
जस संकल्प तीब्रता धारा। फल चेतन संबित अनुसारा॥
येहि ते इतर नाहिं कोउ पावै। चेतन आतम सुभासुभ लावै॥
कहेउ राम नृप जब रन गयऊ। कहहु कृपानिधि का तब भयऊ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तात गयेउ रन जबहिं बिदूरथ । सेना सहित साजि आपन रथ ।।
प्रलय मचेउ अस भई लराई । बरसत सस्त्र रन बीर डराई ।।
नृपति बिदूरथ हारत जानी । बिनय कीन्ह आरत होइ रानी ।।
सक्तिमयी तुम कृपा सरूपा । तोहिं सन्मुख हारत मम भूपा ।।

दो०–नृपति सिद्ध हे सुता सुनु मागेउ जय बरदान ।
किन्तु तोर पति पूजि मोहिं चाहेउ मुक्ति निदान ।।५९।।

हे ते सिद्ध बिजय रन होई । पुत्रि न येहि महँ संसय कोई ।।
इहैं मुक्ति बिदूरथ राजा । पुरिहैं पुत्रि दोउ कर काजा ।।
राम लखत सब युद्ध अपारा । रबिहुँ लोप भये बान पसारा ।।
उत्तर प्रति उत्तर दोउ देहीं । घटत कटत भये सैन्य सनेही ।।
र परिनाम भयउ रन सोई । देबि कही लीला सन जोई ।।
खड्ग प्रहार बिदूरथ हारा । मूर्च्छित नृप सारथी सम्हारा ।।
रथ सोइ हाँकि भवन लेइ आवा । देखि ताहि सब रुदन मचावा ।।
सिद्ध राज कर फिरी दोहाई । छत्र चँवर सोभा अति छाई ।।
लीला प्रथम देबि सन पूछा । यह नृप नारि परी जो मूर्छा ।।
किमि नृप संग संग यह जाई । कहा देबि तब अस समुझाई ।।

दो०–हे लीला जो कछु लखी समर जगत बिस्तार ।
भ्रमहि मात्र जानहु सबहि साँच न कोउ आधार ।।६०।।

हम हृदय मण्डल आकासा । यह संपूर्ण जगत होइ भासा ।।
विप्र बसिष्ठ मण्डपाकासा । तेहि मँह मण्डप पद्म प्रकासा ।।
चिदाकास बसिष्ठ आकासा । येहि क्रम स्थित सकल बिकासा ।।
तुम सत्ता आत्म कहावै । जग भ्रम फुरण न कछु उपजावै ।।
ष्टा दृस्य दोउ भ्रम सोई । दृस्य नाहिं द्रष्टा किमि होई ।।
त्र न भये परमपद ज्ञाना । साँच रूप कर होइ न भाना ।।
त्य सुद्ध अज नसत न जोई । सोइ अद्वैत परम पद होई ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीव जीव जो सृष्टि लखाहीं। कदली खंभ सदृस कछु नाहीं॥

सवैया

पद्म की सृष्टि बसिष्ठ के मण्डपाकास बिदूरथ का जग जोई।
पद्म के अन्तर मैं निबसैं पै सरीर परो मृत देखहु सोई।
पार्सहि देह तुम्हारी परी दोउ प्रान बिहीन है भान न कोई।
जानहु मात्र अंगुष्ठ प्रमानक तौं पति जीव अकास जो होई॥१

ताहि में है जग सारा लखात समात है संबित कल्पना सारी।
सीमित सोइ असीम लगैं सत योजन दीखैं छटा बिसतारी।
बज्र समान भये पट पार बिदूरथ राज की सृष्टि पसारी।
लांघि दुरूह महा यह मारग लीला तहाँ छन माँहि सिधारी॥२

दो०—पूछी लीला प्रथम तब मातु कहहु समुझाइ।
सब समीप छन माँहि सोइ कइसे पहुँची जाइ॥६१॥ क
देखि उहाँ के लोग कहु किमि किन्ही पहिचान।
येहि सब कर संक्षेप मँह जननी करहु निदान॥६१॥ ख

सवैया

देबी कही भ्रम मात्रहि जानहु जो कछु पुत्रि तुम्हें दरसाई।
जानौ यहू भ्रम रूप सबै जग पद्म के अन्तर माँहि फुराई।
जन्म बिदूरथ लीला सरूप सबै भ्रम भूप करी जो लराई।
पुत्री परी तुमहू भ्रम माँहि कहौं भ्रमजाल कहाँ ते गिनाई॥

मृतक जीव छन होत न धीरा। अन्ताबाहक पाइ सरीरा॥
भौतिक आधि बासना कारन। येहि बिधि पति तव कीन्हेसि धारन॥
जन्म मृत्यु कुल आदिक भासेउ। तेहि ते नृप सोइ जगत बिकासेउ॥
सर्वात्मा यह ब्रह्म कहावै। स्पन्दन रूप सिद्धता पावै॥
चेतन सक्ति ज्ञप्ति मम रूपा। सुफल देउँ पूजा अनुरूपा॥
लीला जोइ मागा बरदाना। सोइ सरीर ते पति ढिग जाना॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हि ते मृत्यु मूरछा आई। तब तेहि निज सरीर प्रकटाई ॥
ई सदेह मण्डपहिं सत्वर। परा भूमि जँह सब राजा कर ॥

दो०–गुरु बोले सुनु राम यह सकल कल्पना खेल।
अन्त समय जस बासना जीव पैहँ तस मेल ॥६२॥

ना लहेउ देबि बरदाना। खग सम नभ पथ कीन्ह पयाना॥
नभ कन्या प्रकटानी। कहा कौन तुम देबि भवानी ॥
बोली अस ताहि बुझाई। ज्ञप्ति सुता तोहि छोड़न आई ॥
बिधि देबि चली लेइ संगा। उड़ि अकास जिमि पवन तरंगा ॥
सूर्य तारागन मण्डल। ब्रह्मा बिष्णु रुद्र आदिक थल ॥
घि सबहि ब्रह्माण्ड अपारा। दस गुन जल सोइ अग्नि पसारा ॥
न ब्योम तत्वहु के आगे। चेतन महागगन तब लांघे ॥
अकास ब्रह्मांड अनेका। लांघत भई एक ते एका ॥
ब्रह्मांड अपर एक देखा। बरनन जोग न ताकर लेखा ॥
प्रवेस कीन्ही तेहि माहीं। तीनहु देव त्रिलोक लखाहीं ॥
हिं लांघि लोकप करि पारा। नखत चन्द्र घन वायु अपारा ॥
री नृप नगरी तब जाई। पद्म राज कर सव दरसाई ॥
देबी भइ अन्तरधाना। लीला यह रहस्य नहिं जाना ॥
समीप बैठी तब जाई। मन मँह नाना भाव जगाई ॥
कर बरदान अनूपा। तेहि प्रभाव मैं देखेउँ भूपा ॥
पर चँवर डोलावन लागी। ससि प्रकास सम सोभा जागी ॥

सवैया

पूछति लीला सरस्वती ते अब मातु कहौ मोहिं बात बुझाई।
छोड़ि के प्रान नृपाल को देह जो पद्म सरीरहिं में प्रकटाई।
जाग्रत देखि मही पति को तेहि मंत्री औ दासन काह जनाई।
देबी कही यह द्वैत सरूप हमैं तजि काहुहि नाहिं लखाई ॥१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लीला सरीर पर्यो येहि ठाँव मिला जननी तुम ते बरदान।
काहे गई नहिं या तन संग न जानि परे यह मातु बिधाना।
बोली बुझाइ के देबी सुनौ नहिं धूपहिं छाया क होत पयाना।
झूठ औ साँच मिलै न कबौं यह नीति पुरातन आदि बिधाना ॥२

राति में होत कबौं दिन नाहिं औ नाहिं कबौं दिन रात लखावै।
कल्पना आपन आपु फुरै तेहि में कोउ और कहाँ प्रकटावै।
तइसइ पद्म के दर्पण में सोइ लीला सदेह कहाँ ते समावै।
देह तजे पुनि रूप मिलै सोई ये बर मोर वृथा नहिं जावै ॥३

देह संकल्पहि में सोइ राजत जाते गई नृप के सब पासा।
आपहि के सोइ रूप में जानत भावना में दृढ़ कै बिसवासा।
भौतिक आधि परी भ्रम में बरदान के कारन अइसइ भासा।
तइसइ जानि परै जग साँच सबै दृढ़ बासना केर तमासा ॥४

मूरख चित्त असान्त रहै जिमि ताप चढ़े पै पियास बढ़ावै।
ज्ञान भये नहि द्वेष न राग तृषा अरु बासना आप नसावै।
देबी कही प्रिय बाहक अन्त बिना पद ज्ञान कोऊ नहि पावै।
यद्यपि झूठ इहौ 'जगदीश' न साँच संकल्पहि ते जोइ आवै ॥५

दो०—येहि ते सब जग झूठ है भास अनादि अनन्त।
लीला पूछी मातु किमि होत आदि औ अन्त ॥६३॥

उष्ण सीत चल अचल सरूपा। नगर अरण्य रंक अरु भूपा।
जन्म मरन आना अरु जाना। जग सत्ता कर बिबिध बिताना।
अस्त होत रबि संध्या छाये। होत अभाव प्रलय के आये।
तब सत्ता कर बोध नसावै। मात्र एक चित सून्य लखावै।
चेतन जब चिद् संविद होई। जोतित अणु प्रतीति यह सोई।
सोई ब्रह्मा रूप गहाई। निश्चय होइ जगत बिचराई।
रचना आदि नियत कर होई। निज स्वरूप त्यागइ नहिं जोई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ह्मा आदि अकारण जानहु । कछु उपजा नहिं येतनहि मानहु ॥
उ सरूप ते नहिं उपजाई । चेतन संवेदनहि फुराई ॥
गत जगत रूप यह सारा । जस निस्चय तइसइ बिस्तारा ॥
दो०-चेतन हित उपदेस बहु जड़ता जड़हि स्त्रभाव ।
आदिहिं जस फुरना भई बदलत नाहिं बनाव ॥६४॥
अभाव जगत तस भासत । नाना रूप सरूप प्रकासत ॥
मृत्यु फल कर्म अपारा । येहिकर रूप सुनहु बिस्तारा ॥
काल अरु देस प्रभावा । आयु दीर्घ अथवा लघु पावा ॥
अकाल कोउ मरइ जवानी । अन्त होत जब आयु खोटानी ॥
त्र बिरुद्ध यथा अनुसारा । जस चेष्टा तस आयु पसारा ॥
क्रिया ते आयु बढ़ाई । एक क्रिया कीन्हें घटि जाई ॥
दि नीति रचना यह जोई । मेटि सकइ बिधान नहिं कोई ॥
दिव्य सत कलियुग काला । द्वापर तेहि कर दूनहिं साला ॥
चारि सत त्रेता स्तयुग । अइसइ होइ जगत चारिउ जुग ॥
दो०-चारि लक्ष बत्तिस सहस कलि कर लौकिक साल ।
दून तिगुन चौगुन तेहि क्रमहिं युगन कर काल ॥६५॥ क
असि मरजदा चतुर जुग काल नियत यह जोइ ।
जीव करत जस कर्म जग आयु ताहि बिधि होइ ॥६५॥ ख
करत पुत्री जोइ पापा । मरत समय पावत दुःख तापा ॥
समय दुःख सुख किमि होई । देबि कृपा करि बरनउ सोई ॥
सुनहु सोइ धरि ध्याना । तीनि प्रकार जीव जग आना ॥
अपर धारणाभ्यासी । तीसर ज्ञानवान सुख रासी ॥
होइ न ज्ञान प्रकासी । येहि ते मरत धारणाभ्यासी ॥
देव निज ध्यान बसावत । तजत सरीर लोक सोइ पावत ॥
भ्यास पूर्ण नहिं सोई । मरत न ताहि दुःख, कछु होई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज्ञानी सुख ते तजत सरीरा। ताहि न होत तनिक भव पीरा॥
निसरत प्रान लीन होइ जाई। सोइ बिदेह मुक्त कहि जाई॥
मूरख करत मूढ़ कर संगा। निरत सदा बासना तरंगा॥
सास्त्र बिचार करत नहिं जोई। ताहि मरत दारुण दुःख होई॥

दो०—तेहि पदार्थ आसक्ति ते सहि नहिं जात बियोग।
कंण्ठ रुँधइ दृग फटत है रूप न देखन जोग॥६६॥
निकसत नाड़ी तंत्र ते प्रान बथत सब अंग।
दुःख अपार तेहि होत है मोह न छोड़त संग॥६६॥

तेहि पदार्थ भ्रम रूप लखाई। गगन धरा भुइँ गगन जनाई॥
महा बिपर्यय जब तेहि होई। चितकर चेतनता जनु खोई॥
जस जस चेतनता घटि जाई। तस तस ज्ञानहु जात मिटाई॥
अनुभव होत कष्ट बहु रूपा। लागत परा गहन तम कूपा॥
नभ ते गिरा परा बड़वागी। पवन उड़ावत सकत न भागी॥
जनु गर फन्द डारि कोउ खींचत। मानहु पाहन ते कोउ पीसत॥
प्राण बियोग मूर्च्छा आये। तब अखण्ड बपु जड़ होइ जाये॥
लीला प्रश्न कीन्ह तेहि काला। मातु न मैं समझी यह हाला॥
मरत काल मूर्च्छा कस होई। देह अखण्ड त दुःख किमि कोई॥
अहंकार युत कर्म जुराहीं। ते पुनि काल पाइ प्रकटाहीं॥
बपित बीज कालहिं के पाये। अंकुर बृक्ष भये फल आये॥

दो०—तइसइ बस्तु बियोग दुःख घेरत चहुँदिसि आइ।
येहि बिधि तजत सरीर इमि फल बनि दुःख प्रकटाइ॥६७॥
जेहि आश्रय तन रहत यह प्राण अपान नसात।
नस नाड़ी प्रति अंग क्रम निसरे लबटि न जात॥६७॥

तन ते प्राण निसरि जब जाये। जड़ीभूत होइ देह लखाये॥
जन्म मृत्यु लीला भ्रम दोऊ। आत्मा माहिं होत नहि कोऊ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संवेदन बनि साँच लखाई। तेहि मँह जन्म मरन दरसाई ॥
जस जस होत बासना सारी। सुख दुःख प्रकटत बारी बारी ॥
अधः उर्ध्व अरु मध्य सरूपा। गिरत निदान बासना कूपा ॥
चेतन सुद्ध न कोउ कल्पना। तजइ सरूप नाहिं सोइ अपना ॥
देह अनेक नष्ट होइ जाई। चेतन सत्ता सतत रहाई ॥
नहिं बिनसाइ चेतना सत्ता। रहइ न जीव हिलइ नहि पत्ता ॥
... मरइ न जन्म गहाई। कल्प रहित चिन्मात्र कहाई ॥
कवनउँ काल न नासत सोई। तेहि कर जन्म मरण किमि होई ॥
जेहि के निस्चय मँह सद्भावा। लीला सोइ मृत्यु जग पावा ॥
जीवहिं जब अभाव यह होई। बन्धन मुक्त होइ तब सोई ॥
बन्धन केर बासना कारन। मुक्ति मात्र बासना निवारन ॥
आतमबिचार ज्ञान जब जागइ। दृस्य अभाव भाव तब पागइ ॥

दो०–दृस्य अभावहिं भये बिनु नहिं बासना नसाइ।
पुत्रि बासना त्यागु सब जेहि ते बन्धन जाइ ॥६८॥ क
लीला बोली मातु तव बात समुझि नहिं आइ।
बोध हेतु मोहि बार एक पुनः कहउ समुझाइ ॥६८॥ ख
प्रान तजत यह पुत्रि जब जड़ीभूत तन होइ।
कुल परिवार बिलोकि तेहि प्रेत कहइ सब कोइ ॥६८॥ ग

थावर जंगम जग यह सारा। बन पहार नभ पवन पसारा ॥
... पदार्थ मँह ब्यापइ जोई। उदय अस्त तेहिकर नहिं होई ॥
...ला मृत्यु मूरछा आये। प्राण पवन नभ माहिं बिलाये ॥
...न माहिं चेतनता होई। तेहि मँह रहइ बासना गोई ॥
...न सत्ता प्राण कहाई। लेइ बासना गगन मिलि जाई ॥
...मि गहि गन्ध पवन नभ राजत। चेतन सँग बासना बिराजत ॥
...न वासना रूप जग फुरई। क्रिया काल बहु द्रव्य उभरई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पापात्मा पुन्यात्मा दोऊ । पुत्रि मरे बिनु रहा न कोऊ ॥
तीनि कोटि दूनउँ क्रर होई । तोहि बोध हित बरनउँ सोई ॥
पापी महा मृत्यु जब पाये । सहस वर्ष तेहि मूर्च्छा आये ॥
मूर्च्छा काल दुःख बहु पावत । उर इन्द्रिय दूनउँ कलपावत ॥
बाहर मथइ जरइ उर ज्वाला । जड़ी भूत मूर्च्छा अस हाला ॥
जब तब फुरइ चेतना तेही । देखत देह संग निज देही ॥
पुनि भोगत दुःख नरक अपारा । नाना जन्म परत भव कारा ॥
निर्धन दीन दुःखी अपमानी । अन्तहीन यह दुःखद कहानी ॥

दो०—मध्यम पापी जब मरत तरु समान जड़ होइ ।
मूर्च्छा मँह अन्तर दहइ दुःख पावत इमि सोइ ॥६९॥

अल्पहि काल चेतना आवइ । भोगइ नरक योनि बहु पावइ ॥
तेहि पाछे बासनानुसारा । मानव तन धारत संसारा ॥
कोटि तृतीय अल्प जे पापी । अल्प काल मूर्च्छा तेहि ब्यापी ॥
फुरइ चेतना नरकहिं जाई । कर्म अधार जन्म दुःखदाई ॥
मानव जन्म पुत्रि तब होई । अब सुनु धर्मात्मा जग जोई ॥
श्रेष्ठ देह तजि चढ़त बिमाना । स्वर्ग जाइ भोगत सुख नाना ॥
गिरत धरा फल रूपहिं आई । तेहि खाये बनि बीर्य सुहाई ॥
येहि बिधि मातृ गर्भ सोइ आवत । रूप बासना जन्म सुहावत ॥
धर्मातमा धनिक सुत होई । सुख कामना करइ जौ सोई ॥
जौ निष्काम भावना जागी । सुत बनि जनमत सन्त बिरागी ॥
मध्यम देह तजइ जेहि काला । फुरइ चेतना तेहि ततकाला ॥

दो०—पुण्य रूप लहि स्वर्ग सुख गिरे होत फल आइ ।
बीर्य प्रभावहिं जन्म लेइ सोइ धरती प्रकटाइ ॥७०॥

अल्पहिं फुरइ मीच मैं पावा । पिण्ड क्रिया कुल पुत्र करावा ॥
पितर लोक सुख अनुभव होई । धान्य रूप होइ प्रकटत सोई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ताहि करत जब पुरुष अहारा। बीज बनत जनमत संसारा ॥
निज बासना रूप सब होई। येहि ते इतर न जनमत कोई ॥
पापी मरे क्रूर पथ जाई। पद कंटक सिर ताप जनाई ॥
पुण्यवान सुख छाया पावत। मोहक मार्ग देखि मन भावत ॥
चित्रगुप्त बरनत तस करमा। जो जस कीन्ह पाप अरु धरमा ॥
धर्मराज कर्महिं अनुसारा। स्वर्ग नरक कर करत बिचारा ॥
अनुसार भोग करि सारा। लेत जनम सोइ बारहिं बारा ॥

दो०—जननी जठरहि रहत जब जन्म जन्म सुधि होइ।
बाहर आवत बिसरि सब मूढ़ देत बस रोइ ॥७१॥

परमारथ सब जात भुलाई। जग क्रीड़ा रमि मगन रहाई ॥
यौवन घेरत काम बिकारा। बनत अन्ध नहिं रहत बिचारा ॥
वृद्ध भये कृस होत सरीरा। नाना रोग उठत बहु पीरा ॥
कमल तुषार परे कुम्हिलाई। देहउ तइसइ होत बुढ़ाई ॥
बल घटिजात तृषा अधिकाई। दुःख भोगत भोगत मरि जाई ॥
स्वर्ग नरक कर पावत भोगा। पर न जाइ संसृति कर रोगा ॥
आतमपदहिं प्रमाद भरमाई। जन्म मरण के ब्यूह घिराई ॥
पुनि बालपन यौवन आवत। बृद्ध होइ पुनि देह नसावत ॥
निज बासना रूप परलोका। जाग्रत जानि स्वप्न कर झोंका ॥
जिमि सपनहिं मँह सपना होई। निज कल्पना जगत भ्रम सोई ॥

दो०—लीला पूछी बिनत होइ मातु कहउ अब सोइ।
परब्रह्म मँह जगत यह भ्रम ते कइसे होइ ॥७२॥ क
लीला खर्वात्मा सोई लागत सबहि अनूप।
स्थावर जंगम जगत यह सब परमार्थ सरूप ॥७२॥ ख
सत्ता संबित गगन मँह संबेदन आभास।
फुरत जर्बाहि तब होत है पुत्रि जगत भ्रम भास ॥७२॥ ग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संवित आदि संवेदन जोई। ब्रह्म रूप होइ स्थित सोई॥
जस जस चित मँह चेतत गयऊ। तस तस पुत्रि जगत यह भयऊ॥
नाड़ी तंत्र देह मँह जोई। तेहि मँह सुनहु छिद्र जो होई॥
स्पन्दित रूप प्राण बिचराई। लीला सोई जीव कहाई॥
निसरत जीवहिं मरत सरीरा। होत नाहि तेहि कवनउँ पीरा॥
आदि फुरन संवेदन जोई। जगत आज लगि स्थित सोई॥
जोइ चेतेउ सोइ जड़ होइ जाई। पृथ्वी अप नभ आदि सुहाई॥
चेतन हित भावना जगाई। सोइ सरूप होइ प्रकटे आई॥
जंगम प्राण क्रिया आधीना। स्थावर होत याहि ते हीना॥
सत्ता आत्म समानहि दोऊ। चेतन हीन होहिं नहि कोऊ॥

दो०—स्थावर जंगम एक है दोउ सत्ता कर रूप।
दोउ निज मँह चेतन रहहिं जानहु चरित अनूप॥७३॥ क

साँच इहइ लीला कोऊ स्थावर जंगम नाहिं।
सत्ता राजत आप मँह भ्रम बस सकल लखाहिं॥७३॥ ख

देबी लीला सन कही पुत्रि लखहु करि ध्यान।
नृपति बिदूरथ बेगि ही त्याग करहिं गे प्रान॥७३॥ ग

सवैया

प्रस्न करी तब देबी सों लीला ने मातु मोरे मन संक जगाई।
पद्म के मण्डप में कवने पथ राजा बिदूरथ कइसे क जाई।
याहि के पाछे कहौ केहि राह ते मोहिं उहाँ अब के पहुँचाई।
देबी कही निज बासना रूप नृपालहु मानव राह गहाई॥
यद्यपि है चिद्‌कास सबै पै अग्यान के कारन दूरहि भासै।
हौं हूँ तहाँ चलिहैं सोइ राह मिलाइ के ताहि सँकल्प प्रकासै।
जौ लौं सँकल्प मिलाप न होइ एकत्व क भाव कबौं न बिकासै।
बोले बसिष्ठ तेही छन राम जी टूटन लागी नरेस की साँसै॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देवी औ लीला निहारत दोऊ फटे दृग राजा परे मुरझाई ।
सान्त सरीर लगा पल में अब बायु न नासिका भीतर जाई ।
मानौं तड़ाग में पानी न होइ औ पंकज जइसे परा मुरझाई ।
जर्जरीभूत भई सब चेतना मूर्छना कूप गिरा सोइ जाई ।।३

काल गये कछु चेतना जागी सरीर मनौ निज साथ लखाई ।
देखा जुरे कुल औ परिवार सबै मिलि पिण्ड क्रिया करवाई ।
दूतन संग गये जमलोग तो राजन सों कहे गुप्त बुझाई ।
पुण्य बड़े हैं किये नृप ने बर दीन्ह सरस्वती ने हरषाई ।।४

फूल ढकी है परी महि देह मिला बरदान है ताहि में जाना ।
मुक्ति मिली यमराज से सादर हर्षित हो नृप कीन्ह पयाना ।
संगहि संग चलीं दोउ देबि न राजहिं रंच रहा कछु भाना ।
तीनहु लांघि बिदूरथ मण्डप पद्म के मण्डप में भया आना ।।५

मेघ उड़ै जस पौन प्रवाह तेही बिधि तीनउँ सत्वर आये ।
बासना नष्ट भई न मरेउ पर ताहि ते गेह न सोइ भुलाये ।
जीव चिदाणु में भ्रान्ति स्वरूप संसार असार प्रत्यक्ष जनाये ।
ज्यों बट बीजहि बृक्ष अनन्त है त्यों अणु में जग कोटि समाये ।।६

जो अपने ही बसै उर अन्तर ताहि भला न लखै किमि कोई ।
जीव जिवत्व को देखत जा बिधि तइसै त्रिलोकी चिदाणु में गोई ।
चाह सदेह हो चाहे बिदेह स्वभाव सरूपहिं कल्पना जोई ।
चित्तहि माहिं दृढ़ाइ जो पिण्ड देखात है सोइ जो भावना होई ।।७

दौ०—गुरु बोले हे राम सुनु देस काल प्रिय जोइ ।
क्रिया द्रव्य संपदा ते सकल भावना होइ ।।७४।।

भावना सिद्ध तस होई । क्रिया बली करि जीतइ सोई ।।
परिवार बासना रूपा । धर्म बासना फल अनुरूपा ।।
हि ते तात हरष प्रकटाई । पुण्य कर्म करि सुभ गति पाई ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जोइ बासना बलवती होई। राम बिजय पावत जग सोई॥
येहि ते जौ चाहौ कल्याना। सुभ साधन कर करहु बिधाना॥

सो०-कारन सेष न कोइ महाप्रलय के भये गुरु।
जीवहिं कइसे होइ तब अद्वैत जगत भ्रम॥७५॥

कहेउ बसिष्ठ राम धरु ध्याना। येहि कर पाछे कहेउँ बिधाना॥
नाना उक्ति सुनहुगे आगे। अब तोहि कहउँ नृपति जब जागे॥
दोउ देवी तेहि मन्दिर गईं। ऋतु बसन्त तहँ देखत भईं॥
प्रात काल कर मोहक सोभा। ताहि बिलोकत दोउ मन लोभा॥
मंगल कलस दीप अगियारी। सान्त कक्ष सब बन्द केवारी॥
नीद मगन सब बोलत साँसा। दिब्य झरोखन मन्द बतासा॥
भब्य गवाक्ष पूर्ण जनु चन्दा। इन्द्रलोक कर लजत अनन्दा॥
लीला लखी पूर्व सोइ लीला। चन्द्र बदनि पंकज जनु पीला॥
गाल धरे कर एक सुहाये। दूजे कर लेइ चँवर डोलाये॥
सोइ लीला येहि देखि न पावा। सतसंकलपहि जो प्रकटावा॥

दो०-येहि लीला कर रूप तुम नाथ बतायेउ नाहिं।
गुरु बोले निर्बपु जोई रूप कहाँ लखि जाहिं॥७६॥

अरुन्धती मन भ्रान्ति जगाई। सो सरूप कोउ काह लखाई॥
सत्य ज्ञान जब ते नहिं जागत। जग भ्रम सकल साँच जनु लागत॥
आतमा मँह अज्ञान जगाई। नाना कल्पित रूप लखाई॥
यह आकास रूप जग सारा। ज्यों सपना मँह बिबिध पसारा॥
टूटे सपन न कछु रहि जाई। ज्ञान भये तिमि जग न लखाई॥
योगी निज बहु रूप गहाहीं। ब्रह्मलोक पर्यन्त फिराहीं॥
किमि तिन्ह कर सरीर दरसाई। यह रहस्य गुरु कहहु बुझाई॥
कहेउ बसिष्ठ राम सुनु सोई। अन्तावाहक बपु इमि होई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाग्रत पूर्व तात लखि सपना । लागत स्वप्न सरीर कलपना ॥
भौतिक आधि बोध ते नासत । सरद काल जिमि चन्द्र प्रकासत ॥

दो०–अदृस रूप योगीन बपु गगन सदृस भासन्त ।
आतम ज्ञान जागे बिना होत न येहिकर अन्त ॥७७॥

जिमि रजु ज्ञान न अहि दरसाये । तत्व बोध ते देह नसाये ॥
आवाहक सब जग होई । भौतिक आधि नाहि प्रिय कोई ॥
र अनेक तोहि समुझावा । राम अबहिं लगि बोध न आवा ॥
बिद आदि सँबेदन भासा । जीव सँकल्प सरीर प्रकासा ॥
भौतिक आधि अभ्यास दृढ़ाये । लक्षण त्रय तेहि मँह प्रकटाये ॥
दृढ देह अरु भाव कठोरा । सिथिल होत पर अहं न थोरा ॥
बोध भये नभ रूप लखाई । स्वप्न माहिं जिमि सपना भाई ॥
व संकल्प रूप सोइ भासत । ब्रह्म ज्ञान तिमि भौतिक नासत ॥
नहु बिदूरथ नृप कर बाता । येहि मिस तोहि समुझावहुँ ताता ॥
उ जब तेहि अन्तःपुर गईं । लीला चकित कहत अस भई ॥
हुत काल गये लागि समाधी । ध्यान बिदूरथ सृष्टिहिं साधी ॥
है हमार कहाँ सोइ गईं । तब देबी अस बरनत भई ॥

दो०–एकतिस दिन लीला भये जब समाधि तुम लीन ।
तब सरीर पाषाण वत लागेउ प्रान बिहीन ॥७८॥ क

घृत चन्दन कर लेप करि कुल जन दीन्ह जराइ ।
अब जागेउ तोहिं बोध सुनु तन बासना नसाइ ॥७८॥ ख

है बासना केर परिनामा । सोइ सरीर धारी तुम बामा ॥
स कहि देबि ताहि समुझावा । येहि ते तुम निर्वान न पावा ॥
त संकल्प रूप अब धारी । तस अनुभव जस चाह तुम्हारी ॥
लीला जोइ बासना होई । सोइ रूप पावै जग सोइ ॥
ाहि आधि भौतिकता भासत । ताहि सबहि भ्रम रूप प्रकासत ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्ताबाहृक लिंग सरीरा। दोउ संकल्प मात्र मतिधीरा॥
मन संकल्प लिंग जोइ देहा। सोइ अभिमानहि प्रवल सनेहा॥
भौतिक आधि नाहिं अभिमाना। अन्ताबाहृक तक कर भाना॥
अन्ताबाहृक तुमहुँ दृढ़ावा। तेहि ते सोइ रूप होइ आवा॥
भौतिक बुद्धि पुत्रि बिनसानी। थूल देह तेहि ते भहरानी॥
फूल न गन्ध मेघ बिनु पानी। तइसइ तोर देह प्रकटानी॥

दो०—सत संकल्प भई तुम सुनहु सुता धरि ध्यान।
चिन्तन होई तोर जस प्रकटी सोइ निदान॥७९॥

पति ढिग लीला राजत जोई। लखि नहिं सकत ताहि अब कोई॥
सबहि नीद मँह मोहित कीन्हीं। मोहि देखे बिनु येहि नहिं चीन्हीं॥
सोइ लीला तब नैन उघारा। देखी जगमग जोति अपारा॥
दोउ देबिहिं बिलोकि हरषाई। जोरि पानि निज सीस झुकाई॥
कही देवि तव कृपा अपारा। मोहिं पर मातु कीन्ह उपकारा॥
घायल रन मँह देखि नृपाला। मूर्छित भई कहौं का हाला॥
मरी न तबहुँ चेतना आई। देखा सोइ सरीर मैं पाई॥
नभ पथ उड़ी देबि एक पावा। दया कीन्ह पति ढिग पहुँचावा॥
सोवत देबि मोर मन बोधा। मिली नाहिं तुम पथ बहु सोधा॥

दो०—गुरु बोलेउ हे राम तब देबि बताई ताहि।
लीला देखहु नृपति अब उठिहिं चेतना पाइ॥८०॥

उठि बइठे राजा छन माहीं। सयन करत जिमि कोउ जगाहीं॥
दोउ लीलहि लखि प्रस्न चलावा। तुम कहु कौन समुझि नहिं पावा॥
लीला प्रथम कही कर जोरी। पट रानी लीला मैं तोरी॥
जब परलोक देह तजि गयऊ। मम सरूप तोहि भासत भयऊ॥
यहं सरस्वती देबि सुनु राजा। कृपा सरूप कीन्ह सब काजा॥
तोहि परलोकहि ते लेइ आई। अउर काह तोहि कहउँ बुझाई॥
असु सुनि हरष नृपति मन आवा। देबी के चरनन सिर नावा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छन्द

बोलेउ कर जोरी अस्तुति तोरी करउँ जगत हितकारिनि ।
तुम कीन्ह अनुग्रह काटेउ भवग्रह संकट सकल निवारिनि ।
हे करुना सरिता सबगुन भरिता देहु मोहि बरदाना ।
पावौं सब भोगा होइ न रोगा बढ़ै चतुर्दिक माना ।।१

धन धान्य अपारा वैभव सारा बाढ़ै राज पसारा ।
आयू मम बाढ़ै दुःख न गाढ़ै सुखमय जीवन सारा ।
पालउँ येहि धरनी बिधि जस बरनी नाहि धर्म बिसरावउँ ।
उपजइ अस ज्ञाना मुक्ति निदाना अन्तकाल सोइ पावउँ ।।२

करुना आगारा देबि उदारा नृप अधिकारी चीन्हा ।
जेहि मँह अनुरागा जोइ जोइ मागा तात सोइ तोहि दीन्हा ।
पइहौ आनन्दा परमानन्दा प्रजा सदा सुख पाई ।
अस देइ बरदाना अन्तर्धाना भई देबि न लखाई ।।३

दो०–राम बिगत निसि प्रात जब गगन चढ़े दिनमान ।
बिगसित पंकज सम मुदित लागे सकल जहान ।।८१।।

ाउ लीलहिं नृप कण्ठ लगावा । अचरज भयउ हरष मन छावा ।।
न्दिर भयउ अनन्द अपारा । नृत्य गान बहु बजे नगारा ।।
द्ध देव बिद्याधर नाना । बरसत सुमन होत स्वर गाना ।।
नि रहस्य सब अचरज माना । लीला कीन्हीं स्वर्ग पयाना ।।
ति सँग दूसरि लीला लाई । चकित होहिं यह जाहि सुनाई ।।
त्यु भई पुनि जीवन पावा । जानि नृपति बिचार मन आवा ।।
ापन कीन्ह पुनः अभिषेका । उतसव भये एक ते एका ।।
ा पालि सब रीति निभाई । दृस्य भ्रमहि न कबहुँ भरमाई ।।
हस वर्ष निज राज चलावा । पद निर्वाण अन्त सोइ पावा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—आकासज लीला कथा बिस्तृत बरनी जाहि ।
जाते पावउ बोध तुम दृस्य दोष बिनसाहिं ॥८२॥ क
दृस्यहि दृढ़ता त्याग हित सुनहु राम धरि ध्यान ।
येहि दूनउ अख्यान कर थोरेहिं कहहुँ निदान ॥८२॥ ख

तात सकल जग तुमहिं जो भासत । असत रूप कछु नहिं उपराजत ॥
असत निबृत्ति जतन नहिं कोई । ज्ञानी नभ सम जानत सोई ॥
सत्ता ब्रह्म जो आदि फुरावा । ब्रह्म रूप होइ सोइ प्रकटावा ॥
जेहि मँह भुइं भूतादिक नाहीं । तेहि ते किमि यह जग उपजाहीं ॥
जेहि होइ जाइ आत्मपद ज्ञाना । दृस्य अभाव भाव सोइ जाना ॥
एक जीव अणु सुचि चिद्‌कासा । तेहि मँह सकल जगत यह भासा ॥
काह कहौं अब नीति बासना । जागे झूठ होत जिमि सपना ॥
संवेदन अन्तर्मुख जाये । जब लगि आत्मज्ञान नहिं आये ॥
तब लगि श्रवन मनन निदिध्यासन । दृढ़ अभ्यास अटूट चलइ क्रम ॥
सब जग माया रूपहिं होई । मायउ ब्रह्म अपर नहिं कोई ॥

दो०—अचरज भारी नाथ यह कहेउ आप समुझाइ ।
ज्ञात ज्ञेय अब भयेउँ मैं गूढ़ ज्ञान प्रभु पाइ ॥८३॥

पंच बिकल्प आइ मन मोरे । गुरु उपदेस अनुग्रह तोरे ॥
जग मिथ्या न सरूप कहाई । आत्माभास स्वभाव जनाई ॥
उपजत सदा पाइ अज्ञाना । यह अनादि अज्ञान प्रमाना ॥
गुरु यह सास्त्र पृथक दरसावा । बचनामृत नहिं श्रवन अघावा ॥
अब मम संक मिटावहु नाथा । अस कहि बिनय कीन्ह रघुनाथा ॥
सोइ बसिष्ठ नृप पद्‌म बिदूरथ । बरनेउ जेहि बिधि नाथ काल पथ ॥
लीला पूर्व स्वामि किमि जाना । दिवस मास कहुँ बरस बिताना ॥
येहि व्यतिक्रम कर करहु निदाना । जेहि ते होइ मोर दृढ़ ज्ञाना ॥
सुनहु राम बरनउं तोहिं सोई । सब कर निज निंज संबिद होई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भासत संबेदन अनुरूपा । कोउ हित छाँह कोउ हित धूपा ।।
कहुँ पल माहिं कल्प सत बीतत । कहूँ कल्प मँह पल नहिं रीतत ।।
जेहि बिष भाव अमृत कर होई । तेहि हित अमृत भासत सोई ।।
अरिहिं मित्र करि मानत कोई । मित्रहु कहँ अरि जानत कोई ।।
जस चेतन तस सिद्धिउ पाई । जस संबित तस रूप लखाई ।।

दो०—राम छनहिं के सपन में बीतत बहुतक काल ।
मिति न होइ येहि कर सुनहु अइसइ भ्रम कर हाल ।।८४।। क

संबेदन स्थित भये भासत नहिं दिन रात ।
देह गेह कछु नहिं रहे आतम तत्व दरसात ।।८४।। ख

जग सब मनकर फुरन सरूपा । जस जस होत फुरन तस रूपा ।।
जिन सपन बहु रूप लखाई । जस फुरना तस तस प्रकटाई ।।
स्वामी बिदूरथ नृप कर हाला । जस चेतेउ प्रकटा ततकाला ।।
जग भ्रम जेहि तेहि जगत लखाई । ब्रह्म रूप जिमि हमहिं जनाई ।।
है जग मात्र गगन सम सारा । बिनु प्रकेत ब्यापक बिस्तारा ।।
आतम संबेदन कर सब रचना । पर सच इहै तात कछु सचना ।।
तेहि अनेक बार समुझावा । ब्योम रूप जग सकल बनावा ।।
ज्ञान भये जग होत अभावा । अज्ञानिहिं प्रत्यक्ष जनावा ।।
तरन मँह द्रवता जिमि होई । ताप बिना प्रकटत नहिं सोई ।।
आतमा मँह भेद न कोई । आतम सँबेदन ते जग होई ।।
महाप्रलय चिन्मात्र रहाई । चिदाकास जग रूप गहाई ।।
रहिउ बिदेहमुक्त होइ जाई । येहि ते स्मृति कारन न कहाई ।।
जेहि राम कहेउ गुरु देवा । समुझि न पायेउँ मैं यह भेवा ।।

दो०—नृपति पद्म के सचिव गन सेवक कुल परिवार ।
पाइ बिदूरथ किमि मिले रहेउ कवन आधार ।।८५।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तब बसिष्ठ बोले अस बाता। सब कर आपन संबित ताता॥
तेहि मँह जस संबेदन फुरई। राम रूप तइसइ सोइ धरई॥
मरत नृपति बासना जगाई। मन्त्री दास दासि सोइ पाई॥
संबेदन जस दृढइ भावना। तात रूप सोइ होत पावना॥
तीब्र सँबेग भावना जाही। चेतन मुकुर सोइ दरसाई॥
बेगवान नद सिन्धु समाई। किन्तु अपर सोइ गति नहिं पाई॥
बहु बासना तीब्रता जागे। तेंहि के हाथ बिजय प्रिय लागे॥
जिमि सागर बहु उठत तरंगा। तिमि मंत्री सेवक बहु अंगा॥
प्रति चिदाणु इमि सृष्टि अपारा। किन्तु न रूप केर आधारा॥

सो०—राम ज्ञान जेंहि होत त्रिपुटी लगइ अजन्म पद।
अज्ञानिहिं यह श्रोत द्वैत रूप भासत सदा॥८६॥ क
बोध रूप येहि जानु मैं तुम आदिक जगत सब।
निर्मल सत्ता मानु जेहि मँह द्वैत अभाव प्रिय॥८६॥ ख

पुनि राघव अस प्रस्न उठावा। गुरु यह बात समुझि नहिं आवा॥
मैं तुम दृस्य भ्रान्ति सब कारन। होइ ईस बिनु किमि अवतारन॥
गुरु बसिष्ठ बोले समुझाई। परमातमहिं ते सब प्रकटाई॥
सोइ संबेदन सब यह भासेउ। अस बताइ इमि तत्व प्रकासेउ॥
अज रूपा सर्वातमा रामा। स्थित आप माहिं अबिरामा॥
सर्व सब्द अरु अर्थ जो होई। ब्रह्म रूप जानहु सब सोई॥
कछु नहि भिन्न ब्रह्म ते ताता। सब्द अर्थ ते ताहि न नाता॥
पृथक तरंग न जल ते होई। तिमि नहिं ब्रह्म रहित जग कोई॥
ईस आतमा सोइ जग रूपा। अलंकार सब स्वर्ण सरूपा॥
भूषण सब्द अर्थ जिमि कंचन। कल्पित मात्र जदपि कछु साँच न॥
आत्म संबेदन ते प्रकटाहीं। पुनि पुनि नाना रूप लखाहीं॥

दो०—सिला माहिं जिमि रूप बहु शिल्पी करइ प्रकास।
सोइ सब पाथर होइ प्रिय जद्यपि नाना भास॥८७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिमि जल माहिं तरंग लखाई । आतमा महँ तिमि जग दरसाईं ।।
लहर सब्द अरु अर्थ न पानी । ब्रह्म माहिं तिमि जगत कहानी ।।
जगत ब्रह्म कछु भेद न भाई । ब्रह्म संबेदन जगत लखाई ।।
लहर वारि दोउ जानु समाना । स्पन्द ते लहर जगत प्रकटाना ।।
ज्ञानिहिं जग अंबर सम भासत । अज्ञानिहि बहु रूप प्रकासत ।।
महत तत्व तन्मात्र पसारा । चित संबेदन रूपहि धारा ।।
इन्द्रिय मन बिषय जो होई । असत रूप सब जानहु सोई ।।
आत्म अतीत इन्हहिं ते । भासत बिस्व समस्त जाहि ते ।।
जथा सरूप मृत्तिका बर्तन । मरु मरीचिका स्वर्णहि भूषण ।।
सत सबहि पर सत होइ भासत । तिमि आत्मा महँ जगत प्रकासत ।।
बीज माहिं तरु क्षीर मधुरता । सिन्धु तरंग स्वर्ण मँह द्रवता ।।
अग्नि उष्णता मिर्च तिताई । निर्बपु आत्महिं सृष्टि सुहाई ।।

दो०–ब्रह्म रतन कर किंचन तात सकल संसार ।
जोइ जोइ होइ सोइ भासत संबेदन आधार ।।८८।।

जिमि पुरुषार्थ संबेदन मेटइ । जेहि ते राम न जग तम भेंटइ ।।
जहँ परमाणु चैत्यता जोई । सृष्टि भास तेहि ते बहु होई ।।
जिहि महँ जो परमाणु बिराजत । सृष्टि अनन्त ताहि महँ राजत ।।
जब लगि द्वैत संग संबेदन । तब लगि राम सृष्टि कर अन्त न ।।
जग बृत्ति जागइ नहिं जबहीं । जानु आत्मपद पायेउ तबहीं ।।
जस जस मिटइ ममत्व अपारा । होइ बन्ध ते तस छुटकारा ।।
जहँ भाव निर्वानिहि पाई । जन्म जन्म संपदा नसाई ।।
थावर जंगम जगत पसारा । आत्म रूप लागत यह सारा ।।

सवैया

सुद्ध जो आतम सत्ता बिराजत तामे फुराइ संबेदन जोई ।
भावना कीन्हीं संकल्प अनेकन सृष्टि समग्र ये ताहि ते होई ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ध्यान से ध्यान गहौं 'जगदीश' जो आपको जानत ब्रह्म है सोई।
जानत सोइ असत्य सबै पल में युग है युग में पल सोइ ॥१

दो०—चिद् परमाणु निमेष मँह कल्प अनेक फुराहिं।
ताहि सृष्टि परमाणु में नाना रूप लखाहिं ॥८९॥ क
तिमि आत्मा भ्रम रूप होइ उपजत सृष्टि लखात।
मरु मरीचिका सम जगत आत्मा माहिं जनात ॥८९॥ ख

कथा-अर्थ जिमि मर्नहि प्रकासत। तिमि असत्य जग सत होइ भासत।
कहेउ राम उपजा जेहि ज्ञाना। नाथ आतमपद जे पहिचाना।
तेहि निज संग देह किमि भासत। सोइ कस रहत भ्रमहि जो नासत।
गुरु बोलेउ प्रिय बरनउँ सोई। आदि ब्रह्म संबेदन जोई।
ताकर नाम नीति बतरावा। रूप आदि सोइ नियम बनावा।
कल्प कल्प तइसइ सोइ होई। चेतन महा सत्य प्रिय सोई।
महासक्ति सोइ महा कृपाला। महा अदृष्ट महा सोइ काला।
नाम अनेकन धारेउ सोई। बिरची नीति ताहि बिधि होई।
स्थावर जंगम सकल पसारा। जस बिरचेउ तस स्थित सारा।
ब्रह्मा ते लघु तृन पर्यन्ता। सदा सदा सोइ रूप गहन्ता।

दो०—ज्ञानिहिं भासत सृष्टि सब ब्रह्म सरूप सुजान।
किन्तु अज्ञानिहि नीति यह दरसत आनहिं आन ॥९०॥

इहै नीति सुत दैव कहाई। तेहि आदेस कोउ कछु पाई।
आदिहि ते अस निस्चय धारा। साधन रूप मिलत फल सारा।
पुरुषारथ कर फल जो होई। तात दैव कहलावत सोई।
पुरुष जो दैव परायण होई। ताहि आस करि बइठइ जोई।
अपर भोग हित कर्म जो करई। तेहि अनुसार बृत्ति सोइ बरई।
तात दोउ जग नीति कहाई। मोक्ष प्रजन्त जगत भरमाई।
जस भवतब्य इहौ जग नीति। ब्रह्मा बिष्णु सकहिं नहि जीति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वारथ बिनु फल नहिं पावत । राम इहौ जग नीति कहावत ।।
लक्ष्य लागि बासना लीना । कछु नहिं लहत रहत होइ दीना ।।
लक्ष्य हीन देव मन धारत । चित्तबृत्ति करि सून्य सँवारत ।।
जग सदा सफलता पाई । तात इहौ दोउ नीति कहाई ।।

दो०—ब्रह्म तत्व हित होइ जब राम तीव्र अभ्यास ।
ताहि परम पद मिलत है वृथा न जाइ प्रयास ।।९१।।

नीति जो कहेउँ पसारा । सोइ जानउ भ्रम रूपहिं सारा ।।
ब्रह्म रूप सब भाई । तृन समूह होइ पुहुप लखाई ।।
इ नीति आदि जस सारा । एक मात्र सुनु ब्रह्म पसारा ।।
त सक्ति आतमा मँह जागत । तेहि ते सकल जगत यह भासत ।।
ा रूप होत संसारा । जस अभ्यास रूप तस धारा ।।
मा सर्व सक्ति सब रूपा । होइ तात फुरना अनुरूपा ।।
ल सक्ति जो बरनेउँ तोहीं । आतमा ते कछु भिन्न न होहीं ।।
मा माहिं बिकल्प न होई । प्रबुध बोध हित बरने सोई ।।
आतमा भेद न कोऊ । संबित संबेदन क्रम दोऊ ।।

दो०—साँचहि संबित कल्पना तात सँबेदन होइ ।
जल जिमि उठत तरंग है जदपि नाहिं कछु सोई ।।९२।।

सर्वगत देव महेस्वर । परमातमा कहत जेहि ईस्वर ।।
ानन्द स्वच्छ अबिछीना । आदि अन्त ते होत जो हीना ।।
ते प्रथम जीव होइ आवा । जीव ते चित चित जग उपरावा ।।
ब्रह्म अद्वैतहिं जोई । तेहि ते तुच्छ जीव किमि होई ।।
जबहि अस संक उठावा । गुरु बसिष्ठ तब कहि समुझावा ।।
भास सोइ ब्रह्म बिसाला । सर्ववस्तु सब दिसि सब काला ।।
परम न कोउ आकारा । ज्ञानी कथहिं अलक्ष अपारा ।।
ससि अगिन पवन जल सोई । जेहि भय निज मरजाद न खोई ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अबिनासी सोइ परमानन्दा । सुद्ध अचिन्त्य पूर्ण स्वच्छन्दा ।
छोभ रहित चिन्मात्र कहाई । बाणी ते सोइ नहिं कहि जाई ।
ब्रह्म आत्म सत्ता जोइ भावा । ताकर नाउँ जीव कहलावा ।

दो०—तेहि के अनुभव मुकुर मँह तात जो बिंब फुराइ ।
सोइ चिदात्मा सान्ति तजि जीव रूप प्रकटाइ ॥९३॥ क
ब्रह्म जीव संबन्ध यह जल तरंग सम होइ ।
स्पन्द सान्त दोउ रूप मँह भेद करै किमि कोइ ॥९३॥ ख

दो०—आत्म तत्व चित रूपहिं माया बिरचित जोइ ।
जीव फुरन के जोर ते ब्यापक बिस्तृत होइ ॥९४॥

छन्द

इंधन पाइ बढ़ै जिमि आगि ज्यों जीव फुरे जग द्वैत लखाई ।
पौन प्रभाव ते सागर सान्त तरंगित चंचल रूप गहाई ।
आतम सक्ति संबेदन जागत आपुहिं जीव के रूप बनाई ।
चेतनता ते अहं मन बुद्धि औ माया चितादिक नाउँ धराई ॥१

सोइ जीव संकल्प प्रणेता । पंचभूत तन्मात्रहिं चेता ।
तेहि अकार अणु रूप गहाई । अनउपजे उपजे की नाईं ।
स्थित होइ सोइ भासन लागा । चित संबेदन ते जग जागा ।
बीजहिं ते जिमि तरु प्रकटाई । संबित भये जगत बिकसाई ।
प्रथमहिं अण्ड रूप सोइ धारा । फूटत होत जगत बिस्तारा ।
स्थावर जंगम आदि कल्पना । पंचभूत सृष्टी कर रचना ।

दो०—आदि ब्रह्म ते फुरेउ जो प्रथम जीव होइ राम ।
जातरूप स्थित सोई तेहि कर ब्रह्मा नाम ॥९५॥

तेहि ते क्रमहिं जगत सब भयऊ । जस चेतेउ तस प्रकटत गयऊ ।
चित स्वभाव ते जीव जगाहीं । जिमि सागर मँह लहर लखाहीं ।
भाव अनात्म प्रमादहिं आये । कर्म फन्द सोइ जीव बँधाये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्म बीज संकल्प कहाई । सोइ जीव ते तात फुराई ॥
चेतना भाव के जाये । तब जीवत्व भाव तेहि आये ॥
र्म होत संकल्प कल्पना । जन्म मरण बहु दोष धारना ॥
जस कर्म जीव यह करई । अधः ऊर्ध्वः संसृति मँह परई ॥
कर फुरन कर्म कहि जाई । सोइ चित्त सोइ दैव कहाई ॥
सुभासुभ तेहि ते पावत । आदि हेतु प्रिय ब्रह्म कहावत ॥

०–बीज ते अंकुर जगत पुनि पत्र फूल फल होइ ।
तिमि ब्रह्मा ते मन जगे प्रकटत जग सब सोइ ॥९६॥ क
मन मनत्व के भाव ते आत्मा माहि बसाइ ।
तेहि ते भाव अभाव मय सकल जगत कल्पाइ ॥९६॥ ख

त्मा माहिं न द्वैत बिचारा । सकल जगत मन केर पसारा ॥
जीव मायादिक जोई । भेद सबहि यह मन कर होई ॥
मि तरंग सागर मँह जागत । तिमि चित सिन्धु जगत उपराजत ॥
विचार करि देखहु दोऊ । जगत तरंग साँच नहिं कोऊ ॥
यह दीर्घ काल कर सपना । मन भ्रम भासत सकल कलपना ॥
हिं भूत लगइ परछाहीं । द्वैत कलिप इमि जगत डराहीं ॥
अज्ञान जब लगि नहिं होई । भव भय मेटि सकइ नहिं कोई ॥
हिं अहं भावना आई । चित्त फुरइ इन्द्रिय प्रकटाई ॥
ते जागत देह भावना । नरक स्वर्ग अरु मृत्यु कल्पना ॥
कर्म बिच भेद न कोऊ । ब्रह्म अउर चित तइसइ दोऊ ॥
जीव एकहि करि जानहु । राम देह चित पृथक न मानहु ॥

०–जथा देह अरु कर्म बिच तात भेद नहिं होइ ।
ईस जीव अरु आतमा तिमि अन्तर नहिं कोइ ॥९७॥

जो नाना रूप लखाई । ब्रह्म स्वरूप सबहि यह भाई ॥
भाव बहु रूपहि भासत । एक जोति बहु दीप प्रकासत ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्मतत्व समुझत जब भेदा । नासत अहं मिटत सब खेदा ॥
चित्त नसे जग भ्रमउ नसाई । सान्त भये जग सान्त जनाई ॥
कदली खंभ सार नहिं कोई । तिमि जग मात्र भ्रमहि यह होई ॥
चित ते होइ तात भ्रम सारा । समुझउ मन कर नृत्य पसारा ॥
जिमि पिक थिरइ घोर घन बरसे । घन चेतन लहि जीवहु हरषे ॥
रहइ मौन अथवा कछु करई । अन्तर सान्त भाव सोइ बरई ॥
ब्रह्म चेतना ते भ्रम जाई । तब सब जगत ब्रह्म दरसाई ॥

दो०–सर्व बासना त्यागि जब अन्तर्मुख चित होइ ।
सान्ति मुक्ति सम मिलइ तब मानु न संसय कोइ ॥९८॥

येहि ते राम तजउ अभिलाषा । खलु पइहौ तुम मुक्ति प्रकासा ॥
त्याग बृत्ति कछु कठिन न माना । तृन सम त्यागहिं प्रान सुजाना ॥
तजत याहि तोहिं का कठिनाई । पट समान आत्मा पर छाई ॥
जिमि घन छटे सूर्य दरसाई । याहि त्यागि आत्मा प्रकटाई ॥
जोइ अभिलाष जगइ तुम त्यागहु । तात आत्मपद मँह अनुरागहु ॥
प्रकृत अचार देह तुम धारहु । आपन इन्द्रिय बेग सम्हारहु ॥
दृस्य चाह चित ते जब जाई । तात आत्मपद प्रकट लखाई ॥
भासइ आत्मरूप जग ताही । तत्व बोध आवा प्रिय जाही ॥
बोध भये सब बन्धन जाई । सुनहु इहै जग मोक्ष कहाई ॥
राम प्रस्न कीन्हेउ गुरु पाहीं । नाथ कहउ मन किमि उपजाहीं ॥
ब्रह्म अनादि सक्ति प्रिय जोई । येहि मँह नाना किंचन होई ॥
जँह जँह जस जस सक्ति फुराई । तँह तँह तस तस रूप गहाई ॥

सो०–अहं अस्मि इमि मान सत्ता सुद्ध फुराइ जब ।
जीव जगत प्रकटान कारण चित संकल्प कर ॥९९॥

अस सुनि राम कहेउ गुरु पाहीं । कहहु नाथ के देव कहाहीं ॥
कर्म काह कारण का होई । मोहि बुझाइ कहउ गुरु सोई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फुरना अनफुरना सुत जोई । सत्ता कर स्वभाव यह होई ।।
जेहि स्वभाव पवन कर होई । स्थिर भये सान्त रह सोइ ।।
पुनि चिन्मात्र चैत्यता जागे । अहं अस्मि के भावहि पागे ।।
जत फुरे भासत जग नाना । अफुर भये जग भ्रम अवसाना ।।
जे कर्म कारण प्रिय जेते । चित स्पन्द कर नामहिं तेते ।।
भव रूप सकल दरसाये । बीज सोइ स्पन्द कहाये ।।
स्पन्द ते दृस्य प्रकासत । चिदाभास तन अहं बिकासत ।।

दो०-स्थित होइ सोइ देह महं चित्त संवेदन तास ।
आपहि अहं प्रतीति ते दृस्य ओर अगरास ।।१००।।

संसार दुइ बिधि होई । बिसद अल्प कहि बरनत सोई ।।
कोउ बहुतक जन्म बितावैं । एकहि जन्म कोउ कोउ पावैं ।।
दि होइ जे फुरहि स्वरूपा । प्रथम जन्म पावहिं सुत भूपा ।।
दि उपजि प्रमाद जे लावहिं । फुरन भये दृस्यन प्रति धावहिं ।।
फिरन कर इहइ प्रभावा । तात अनेक जनम सोइ पावा ।।
पाप कर होत निदाना । सरग नरक भोगत तिमि नाना ।।
बिधि दृस्य भ्रमहि भरमाहीं । परि अग्यान बंधनहि बँधाहीं ।।
ज्ञान अनुभव अपवर्गा । येहि ते परहि बृहद संसर्गा ।।
हि जन्म आतमपद होई । अल्प संसरन जानहु सोई ।।
अज्ञान जीव कर अपना । फुरत जाहि प्रिय अहं कल्पना ।।
ते सतत जगत भ्रम देखत । मन के भ्रमहिं तात सब पेखत ।।

०-परम तत्व चिन्मात्र सिव जब चेतन मुख होइ ।
अहं अस्मि के भाव ते जीव कहावत सोइ ।।१०१।। क

जल में द्रवता भये ते चक्र तरंग जगाहिं ।
मत्स बारि महं जीव चित उपजहिं अरु विनसाहिं ।।१०१।। ख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीव माँहि संकल्प फुराई। तात तबहिं सोइ मन कहि जाई॥
निस्चय रूप होइ संकल्पा। जानउ तब येहि बुद्धि बिकल्पा॥
अहंभाव प्रतिकार कहाई। तन्मात्रा कल्पना गहाई॥
छिति जल पावक पवन अकासा। सूक्ष्म भूत इमि करत बिकासा॥
राम असत चितकर संसरना। भासत जगत रूप कर रचना॥
आत्मा सुद्ध सान्त नित जोई। तृप्त आप मँह स्थित सोई॥
चित संबेदन जगत रचावा। भ्रम बस साँच सोइ दरसावा॥
स्वप्न सृष्टि जइसे प्रकटाई। तइमइ जग सुत साँच जनाई॥
मन संसरन जाग्रत जानहु। अहंकार सोइ सपना मानहु॥
चित्त सुषुप्ति जो चेतन हारा। औ चिन्मात्र तुरीय प्रचारा॥
होइ चिन्मात्र परम परिणामा। तुर्यातीत ताहि कर नामा॥

दो०—तुर्यातीत भये प्रिय सोक न जानत सोइ।
ताहि माँहि हे राम सुनु उदित अस्त सब होइ॥१०२॥
किंतु न कोउ उपजत कतहुँ नाँहि कोउ बिनसात।
चित्त फुरन ते भ्रम भये जनमत मरत लखात॥१०२॥

निज सत्ता तरु बीज प्रसारा। गगन देत अवकास उदारा॥
सबहिं ठौर तिमि आत्मा देई। जद्यपि जग कछु साँच न होई॥
ज्ञानवान सब एकहि जानत। मूरख नाना भेद बखानत॥
अस पुनि राम संक प्रकटावा। यह अचरज गुरु समुझि न पावा॥
असत जगत बिस्तृत होइ भासत। ज्ञानी जन बहु तत्व प्रकासत॥
फुरन अबिद्या कर यह जोई। अन्तर्मुख कहु कइसे होई॥
गुरु बसिष्ठ तब कहि समुझावा। होइ प्रबल जब दृस्य अभावा॥
जाग अनभये फुरन ते भासत। तात भांति बहु रूप बिकासत॥
असत जीव सोइ सत की नाईं। ब्रह्म रूप होइ भिन्न लखाईं॥
जागइ जीव जबहिं संकल्पा। तात होइ मन रूप बिकल्पा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्मृति ते चित्त बुद्धि दृढ़ पाये । अहंकार होइ सोइ प्रकटाये ।।
विद् अणु मँह तन्मात्र फुराई । इन्द्रिय बिबिध तबहिं प्रकटाई ।।
दो०—सब्द सुनन हित श्रवन भे देखन के हित नैन ।
गंध ग्रहन हित नासिका मुख बोलन हित बैन ।।१०३।।
इन्द्रिय सकल याहि बिधि जागत । जद्यपि असत साँच सब लागत ।।
हि बिधि आदि जीव प्रकटाये । अन्तबाह तब तन होइ आये ।।
सत चल पर अचलहि रूपा । तात ब्रह्म कर खेल अनूपा ।।
इ प्रमाण प्रिय सोइ प्रमाता । ब्रह्म प्रमेय सकल रंग राता ।।
हिं संबेदन रूप अनेका । भासत राम एक ते एका ।।
तन दृस्य जगहिं बहु भांती । अन्तर्मुखहिं ब्रह्म सोइ थाती ।।
दृश्य कतहुँ नहिं कछु उपजाई । आतमा आपहिं स्थित भाई ।।
दृश्य असंभव जब होइ जाये । बन्धन मोक्ष बिचार न आये ।।
राम प्रस्न मन तव जो जागे । समाधान करिहौं सोइ आगे ।।
उचित समय कहिहौं समुझाई । जेहि ते तात बोध तोहि आई ।।
दो०—चैत्योन्मुखता धारि प्रिय आदि जीव होइ जात ।
जिमि सपना देखइ कोऊ तइसइ ब्रह्म लखात ।।१०४।।
ब्रह्मा कीन्ह ॐ उच्चारण । सब्द ते चतुर्वेद अवतारण ।।
मनोराज तब सृष्टि रचावा । असत रूप होइ सत्य जनावा ।।
ब्रह्म सदृस उपजे सब जीवा । कीट पतंग आदि नहिं सींवा ।।
बेदन भ्रम जगत जनाई । निज निस्चय सोइ सक्ति जगाई ।।
ज चींटी लगि सक्ति प्रसारा । अनुभव निज बासनानुसारा ।।
थे बिचार न कछू दरसाई । जागे जिमि सपना मिटि जाई ।।
स के सीस शृंग नहिं होई । तिमि आतमहिं द्वैत नहिं कोई ।।
ह ब्रह्माण्ड भावना होई । जेहि सच लाग बँधेउ प्रिय सोई ।।
न्धन आप हेतु बँधि मकरी । बुनइ जाल फँसि फँसि सोइ मरी ।।
ग सच मानि आतम अभिमाना । तात बन्धकर कारन माना ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—राम जगत सब झूठ है मिथ्या प्रगति बिकास।
नित्य अद्वैत अखण्ड कर कहाँ जन्म जहँ नास ॥१०५॥ क
गुरु बोलेउ तोहि बोध हित कहौं तात इतिहास।
नाम कर्कटी राक्षसी हिमगिरि करत निबास ॥१०५॥ ख

कज्जल गिरि समान बिकराला। बिद्युत सम निकसत दृग ज्वाला॥
नख बिसाल जिह्वा लपकावत। ज्यों बड़वागि तृप्ति नहिं पावत॥
छुधा पीर अति ब्याकुल होई। जंबू दीप खाइ चह सोई॥
येहि हित करन लागि तप सोई। ठाढ़ि कन्दरहिं एकपद होई॥
मुख उठाइ दृष्टी नभ डारी। मेघ गहन जनु भुजा पसारी॥
प्रान सरीर मूर्त भे दोऊ। उष्ण सीत ते छोभ न कोऊ॥
वर्ष सहस्र बीति इमि गयऊ। हर्षित बिधि तब प्रकटत भयऊ॥
ब्रह्म बिलोकि ताहि मद आवा। अनमन होइ निज सीस नवावा॥
बिधि बोलेउ हे पुत्रि सयानी। केहि हित कहहु कठिन तप ठानी॥
मागु देउँ बर जो मन भावा। तब कर्कटी चाह बतरावा॥

दो०—लौह सूचिका सदृस प्रभु देह मोर होइ जाइ।
जीवहिं के उर जाहि ते सोइ सहजहिं प्रबिसाइ ॥१०६॥

बिधि बोले दीन्हा तोहिं सोई। बिसूचिका तव नामउँ होई॥
दुष्टन के उर प्रबिसहु जाई। गुनवाननहिं सदा बरकाई॥
ऊँ मंत्र जे जपहिं सुजाना। तव निवृत्ति हित करिहिं बिधाना॥
तेहि के उर प्रबेस नहिं होई। ससि जे लखिहिं न ब्यापेहु सोई॥
अस कहि ब्रह्म गगन पथ गयऊ। इन्द्रहिं सिद्ध मंत्र अस दयऊ॥
सिद्ध देव जब मंत्र दृढ़ावा। तब कर्कटी सूक्ष्म तन पावा॥
घटि पहार ते तरु सम भई। घटत घटत सोइ घटतै गई॥
सूक्ष्म सूचिका सम बपु पावा। प्रकटा बिधि बरदान प्रभावा॥
राम मूढ़ इमि करहिं प्रयासा। होइ अनर्थ लहहिं जन त्रासा॥
जिमि कर्कटी मूढ़ अबिचारी। परि अज्ञान लहेउ दुःख भारी॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०-बालमीकि तब कहेउ अस देखि दिवस अवसान ।
सभा सहित गुरु उठे पुनि सन्ध्या करन बिधान ॥१०७॥

त होत सब जुरे बहोरी । रघुपति गुरु बन्दे कर जोरी ॥
बसिष्ठ सोइ कथा चलाई । जब कर्कटी सूक्ष्म तन पाई ॥
अनेक बीति इमि गयऊ । लघु तन देखि दुखित मन भयऊ ॥
सन नाहक अस बर मागा । यह तन पाइ कवन सुख पागा ॥
सदृस बपु रहेउ बिसाला । बड़वानल जिह्वा बिकराला ॥
र मन्दराचल सम भारी । ढाकत रही सूर्य उजियारी ॥
तामणि तजि कांच बटोरा । सुख पायेउँ नहिं कवनिउं ओरा ॥
क बून महँ जाउँ अघाई । तृषित सदा जग फिरौं ललाई ॥
तन छूटै तबै सुख होई । मागे मृत्यु न पावइ कोई ॥
मन ठानि पुनः बन जाई । सोइ करकटी तपहिं चितलाई ॥
सहस्त्र कठिन तप बीते । जगेउ बिराग राग मन रीते ॥
संकल्प त्यागि जब दीन्हा । जागा ज्ञान परम पद लीन्हा ॥
न प्रकास उदित होइ आवा । परब्रह्म कर दरसन पावा ॥

दो०-सातहुँ लोक भये जब तेहि तप ते तपमान ।
इन्द्र देव देवर्षि ते प्रकटेउ भय अनुमान ॥१०८॥

रद तब सब कथा सुनाई । इन्द्रहि दरस चाह मन आई ॥
पवन हिम सैल पठावा । तेहि बिलोकि मन अचरज आवा ॥
हेउ प्रस्न नाहिं कछु बोली । तप रत घोर रंच नहि डोली ॥
सक्र ढिग आइ बहोरी । कहा बृतान्त भई मति भोरी ॥
तप कर महिमा अस जागी । हिमगिरि कर सीतलता भागी ॥
देवगन जुरि सब साथा । बिधि पँह जाइ नवाये माथा ॥
ब्रह्म सबहि अभिलाषा । पहुँचे आपु जाइ तेहि पासा ॥
धीर मन अचरज भारी । तन सुमेरु सम धीरज धारी ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिमि दुपहर कर दिनकर तापत । तप कर्कटी केर तस भासत ॥
ब्रह्म बिचार कीन्ह मन माहीं । येहि कर जग भ्रम सान्त लखाही ॥

दो०–हर्षित बोले ब्रह्म तब मागु पुत्रि बरदान ।
बन्दनीय अब भई तुम जगभ्रम तोर नसान ॥१०९॥

तव बिसूचिका बचन उचारा । जानन जोग सो जानी सारा ॥
अब मैं सान्त रूप यह पावा । मन कर संसय सबहि नसावा ॥
मोहि बरदान काहि हित चाही । निज संकल्प सबहि उपजाही ॥
रूप प्रमादहिं मैं भटकानी । अब नहिं चाह मोर मन आनी ॥
लाभ हानि इच्छा सब गई । प्रभु मैं निर्विकार अब भई ॥
कहेउ ब्रह्म हे पुत्रि सुजाना । तदपि मागु तुम कछु बरदाना ॥
कछुक काल भू पर भरमइहौ । तबहिं बिदेह मुक्त होइ जइहौ ॥
जीवनमुक्त बिचरु तुम जाई । निस्चय नीति न पुत्रि लंघाई ॥
तुम तप काल पूर्व तन चाही । सोइ संकल पुत्रि निरबाही ॥
समय पाइ अंकुर तरु होई । अब तोहि देह मिलिहि खलु सोई ॥

दो०–जीवन्मुक्त बिचरु तुम निसाचरी तन माहिं ।
परम सान्त रहिहौ सदा जन्म तोर अब नाहिं ॥११०॥

वहिर्मुखी जब बृत्ति फुराई । आतमरूप सब जगत लखाई ॥
तोहि ब्यवहारहि मिली समाधी । ताहू मँह समाधि निरबाधी ॥
न्याय बान्धव नाम तुम्हारा । पापिन कर करिहौ आहारा ॥
भये ब्रह्म कहि अन्तर्धाना । सूची पूर्व रूप प्रकटाना ॥
धारत अहि नहि केचुर त्यागी । तिमि नहि ताहि देंह रुचि जागी ॥
गिरि सम ठाढ़ि रही षट् मासा । पद्मासन पुनि वैठि सुपासा ॥
निर्विकल्प पद मँह तब पागी । बाहर बृत्ति छुधा तब जागी ॥
कीन्ह बिचार मरन भल मोरा । गहन अभोज्य पाप नहिं थोरा ॥
जन्म मरण कर इच्छा नाहीं । बैठी मौन सोचि मन माहीं ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूर्य तबहि नभगिरा सुनाई। हरहु छुधा निज दुष्टन खाई ॥
करहिं सन्त जन मूढ़ उधारा। पुत्रि इहै सुचि पंथ तुम्हारा ॥
अस सुनि सोइ सैल ते उतरी। पसुन संग बहुतक दिन बिचरी ॥
मेन सचिव संग नृपति किराती। बिचरत सोइ देखी एक राती ॥
लागि बिचार करन मन माहीं। परखन हेतु गई तेहि पाहीं ॥
घन सम गर्जन कीन्ह अपारा। नृप संयत होइ बचन उचारा ॥

दो०–भय न मोहि कछु तोर सुनु सबद सुनावत काहि।
आपन हेतु बताउ मोहि देउँ तुमहिं जो चाहि ॥१११॥

सोइ पुनि ताहि बहुत डरपावा। बिज्जु जगी अंबर थहरावा ॥
डरे रंच नहिं मंत्री राजा। पुनि पूछे प्रकटउ निज काजा ॥
बुध जन करहिं स्वस्थ ब्यवहारा। आदि नीति यह आदि पसारा ॥
मागु मागु जो तोहि मन भावा। जाचक हित नहिं कोउ दुरावा ॥
कीन्ह बिचार सुनत अस सोई। नृपति उदार परम यह कोई ॥
ज्ञानवान धीरज मन भारी। इन्ह ते उचित न छल बल रारी ॥
कीन्हि प्रस्न नृप कहि समुझावा। नीति धर्म गुन कर्म बतावा ॥
तदपि तोष मन ताहि न आवा। निसिचरि कहि अस प्रस्न चलावा ॥
समाधान जौ होइ न मोरा। करिहौं मैं अहार नृप तोरा ॥
अस कहि कीन्हीं प्रस्न अनेका। उत्तर दीन्ह नृपति सबिबेका ॥
कहहु एक अणु कौन कहाई। नाम अनेक जाहि कहि जाई ॥
कौन होइ अणु सूछम अंडा। लीन होत जेहि मँह ब्रह्मण्डा ॥

दो०–जिमि सागर बुदबुद बहुत उपजि लीन होइ जाइ।
कौन ब्योम जहँ पौन नहि अणु जहँ अहं फुराइ ॥११२॥

मैं तुम कौन एक करि जानइ। तिष्ठ अतिष्ठ सरूप समानइ ॥
बिरचत चित्र गगन महँ जोई। जाकर रूप सिला सम होई ॥
कौन अग्नि नहिं दाहकताई। कौन आगि जेहि ते उपजाई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रबि ससि तेज रहित अणु जोई। जेहिकर नास कबहुँ नहिं होई॥
कौन प्रकास जोति उपजावत। जेहिं दृग ते कोउ देखि न पावत॥
तरु फल फूल बेलि सब भासत। कौन जोति जो सबहिं प्रकासत॥
गगनादिक सब भूत जगाहीं। यह ब्रह्मण्ड रतन उपजाहीं॥
स्वयं प्रकासमान जो होई। जोति अन्हार सम्हारत जोई॥
सत अरु असत एक संग राजत। दूर होइ पर पास बिराजत॥
गिरि सुमेरु जेहि माहिं समाये। निमिष कल्प सोइ निमिष जनाये॥
दृस्य अदृस्य प्रकट अरु गोपा। वायु अवायु रूप होइ लोपा॥
रूप असब्द होत निष्किंचन। मिलइ जतन कीन्हें बहु जनमन॥

दो०—मिले जाहि अस लगत है मिला नाहिं कछु होइ।
सब कछु पावत जाहि लहि कहहु कौन नृप सोइ॥११३॥

तृण सम भुवन सुमेरु लखाहीं। जाहि बिलोकत जगत फुराहीं॥
अति लघु जोइ बिसाल अपारा। जेहि मँह होइ सकल बिस्तारा॥
जँह अन उदित भये सब भासत। बिन कृत भये कृतित्व प्रकासत॥
दृस्यउ नसे अखण्ड रहाई। द्रष्टा दर्सन दृस्य समाई॥
जेहि ते भिन्न नाहि कछु कोई। देस काल अरु बस्तु न होई॥
कौन अद्वैत द्वैत रह संगा। जिमि सागर महँ उठत तरंगा॥
भ्रम अनन्त जग जेहि महँ राजत। जो अग जग के मध्य बिराजत॥
सोइ अणु कौन नृपति समुझावहु। निज मुख ते मम संक मिटावहु॥
जेहि ते संसय दूरि न होई। नृपति नाहिं सोइ पंडित कोई॥
उतरु देइ नहिं संक निवारा। तुम दोउन कर करउँ अहारा॥

दो०—मंत्री कहेउ बुझाइ तब हे निसचरी सुजान।
प्रस्न सबहि परमात्म हित क्रम ते करउँ निदान॥११४॥

अगम अचिन्त्य अग्राह्य कहाई। सोइ सत्ता चिन्मात्र रहाई॥
सूक्ष्म कहाइ सूक्ष्मता कारण। अणु अस नाउँ करइ सोइ धारण॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह सत असत सकल जग जोई । तेहि अणु माहिं बिराजत सोई ।।
तेहि चिदाणु संवेदन जागत । सत्य असत्य जगत सब भासत ।।
ताही ते सोइ चित्त कहाई । सृष्टि पूर्व जहँ कछु न रहाई ।।
तेहि महँ सबहि आत्मा होई । भोक्ता पुरुष अनन्तहि सोई ।।
कृ अभास रूप बहु भासत । बहु भूषण जिमि स्वर्ण प्रकासत ।।
माकास रूप रह सोई । अकथनीय अति सूछम जोई ।।
न्धु फुरन ते लहर जगाई । पुनि तेहि माहिं लीन होइ जाई ।।
मि चिदाणु ते जगत अपारा । उपजि मिटत सोइ बारहि बारा ।।
न्द्रियतीन सून येहि कारन । होइ असून जोति निज धारन ।।

दो०–अहं मोर तोहिं आतमा राकसि एकहि जोइ ।
सुनु चिदाणु के बोध ते ब्रह्म रूप होइ सोइ ।।११५।। क

होइ लीन तेहि बोध सब अथवा आपुहिं होइ ।
त्रिपुटि रूप भी सोइ है संबिद रूपहिं जोइ ।।११५।। ख

र सच कोउ नहिं आवइ जाई । व्योम कोष सब सदा रहाई ।।
गत आत्मा माहिं बसाई । समुझउ सोइ कहाँ तब जाई ।।
ह संग सोइ चलत जनाई । जिमि घट संग अकासहु जाई ।।
टाकास पर कतहुँ न जाई । आत्मा तिमि न कतउँ भटकाई ।।
न्मात्रा परमात्मा सोई । संबेदन स्वरूप जग होई ।।
इ चिदाणु पावक की नाईं । ताप रहित ज्ञानाग्नि जगाई ।।
गिनिउँ ताही ते उपजाई । सोइ सर्वगत होइ रहाई ।।
कल द्रव्य सुनु सोइ पचावत । पुष्कल घन न जाहि ढकि पावत ।।
न रूप सोइ सदा प्रकासा । तेहि महँ सबहिं मिलइ अबकासा ।।
र्यादिकहिं जोति सोइ देई । अनुभव रूप प्रकासत सोई ।।

दो०–मन इन्द्रिय कर बिषय नहिं तरु तृन करत प्रकास ।
सत्ता सब कहँ देइ सोइ सबहि माहिं आभास ।।११६।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वामी कर्त्ता पिता भोक्ता। सोइ अकर्त्ता हर्ता भर्त्ता॥
भिन्न नाहिं तेहि ते कछु कोई। धारत जग किंचन होइ सोई॥
मातृ मान जोइ मेय प्रकासत। किंचन पाइ जगत सम भासत॥
दूरि अज्ञानहिं ज्ञान ते पासा। जग संबेदन रूप प्रकासा॥
कोउ पदार्थ जग उपजत नाहीं। फुरन रूप आकार लखाहीं॥
कतहुँ निमेष कल्प कहुँ बीतत। जगत बिलास छनहि महँ रीतत॥
जिमि लघु मुकुर समाइ पसारा। तिमि निमेष महँ जग बिस्तारा॥
छन के सपन माहिं बहु काला। दुःख के छन कर अइसइ हाला॥
सुख कर दिन बीतइ पल माहीं। पर सच निमिष कल्पकछु नाही॥
अइसइ दूरि पास नहीं कोई। चिद अणु भास मात्र यह होई॥

दो०—तम प्रकास यह नाहिं कछु दृढ़ सद्भाव प्रभाव।
भूषण बुद्धि मिटे बिना जगइ न कंचन भाव॥११७॥

द्रष्टा भास न दृस्यहिं भावा। आत्मज्ञान सत्ता दरसावा॥
सघन सून नभ नील लखाई। दृढ़ चेतना जगत दरसाई॥

सवैया

ग्रीषम में रबि तेज तपै मृगबारि लगै पर बारि न सोई।
तइसै लखाइ परै जग जाल पै साँच में सून अकास है जोई।
स्वर्ण प्रतीत परै कबौं धूरि औ रज्जु कबौं लगै साँप है कोई।
दीरघ स्वप्न सबै जग होत पै जानत है सोइ ज्ञानी जो होई॥१

ब्रह्म से लेइ तृण लौं जो संबेदन कल्पना कै दृढ़ होत पसारा।
चेतना की घनता चिद्कास गहात सबै जग रूप अकारा।
बीजहिं वृक्ष कै भाव भरा सुनु तइसइ ब्रह्म सरूप है सारा।
सत्ता सोई अज एक अद्वैत अदोत उदोतसरूप है धारा॥२

दो०—गुरु बोलेउ परमार्थ कहि सचिव भये जब मौन।
निसाचरी के बोध हित नृप प्रकटे तब बैन॥११८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेटं प्रतीति जबै जग भास की चैत्य सँकल्पहि नास जो होई।
आतमा देखि परै तबहीं जब जाइ संबेदन सृष्टि न कोई।
जाहि में रूप जगात बेदान्त बखानत बाणी से गम्य न जोई।
है त्रिपुटी अनुभूति जोई 'जगदीश' कहौ परमातमा सोई ॥१
दसंन द्रष्टा औ दृस्य सोई तेहि माहिं प्रकासत लीला अपारा।
सोइ तन्मात्र कहावत ब्रह्म चिदाणु सँबेदन पौन पसारा।
सब्द फुरे सोइ भासत सब्द है मैं तुम आदिक नाहिं अधारा।
सोइ अकिंचन सक्ति स्वरूप प्रकास करै प्रतिभा अनुसारा ॥२
नाना उपाय भये जो मिलै सुनु आतम सक्ति कहावत सोई।
पाया अपाया लगै जोइ आप न पाये पै चाह रहै नहिं कोई।
बाढ़े अग्यान की बेलि तबै लगि जौं लौं सुबोध कै खड्ग न होई।
ग्यान बखानिय ताहि को जन्म की बेलि है राकसि काटत जोई।३
दृस्य में बाढ़त प्रीति चिदाणु संबेदन कै अस होत प्रभावा।
जइसे दिवाकर के तप तेज बिलोकि के जागत बारि को भावा।
तइसे सुमेरु समेत निसाचरि तीनहु लोक कै सारा बनावा।
माया कै जानहु खेल सबै नहिं साँच कछू भ्रम कै उपराबा ॥४
दो०—सक्ति रूप आतमा महँ सृष्टि फुरी जो आदि।
सोइ रूप भासन लगे निज सँकल्प निरबाधि ॥११९॥
मात्र संकल्प जानु जग सारा। संबित जोइ सरूप सोइ धारा ॥
सुनु परमाणु परम लघु जोई। चिद अणु तेहि ते सूक्ष्म होई ॥
तेहि ते पूर्ण सकल जग भयऊ। आतमा माहिं सोइ निरमयऊ ॥
राकसि चित्त बिलोकत जइसे। तृन सुमेरु लगि नाचत तइसे ॥
देस काल बस्तू परिछेदा। सत्ता आतम रहत करि भेदा ॥
येहि ते महा थूल सोइ होई। तेहि सन्मुख गिरि तृन जनु कोई ॥
जदपि कला माया कर लघुतम। होत चिदाणु ताहु ते सूछम ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भीतर बाहर सोइ प्रकासत। दिनकर चन्द्र ताहि ते भासत॥
होत प्रकास चाहु इन्ह माहीं। याही ते तम रूप कहाहीं॥

दो०–सुक्ल प्रकास कहात है कृष्ण होत तम रूप।
रंग भेद दोउ जानियत कोउ छाया कोउ धूप॥१२०॥

घन तुषार स्यामलता भासत। हिम तुषार होइ धवल प्रकासत॥
तम प्रकास तिमि एक समाना। तेहि सत्ता ते दोउ प्रकटाना॥
निसा दिवस बाहर अरु भीतर। नदी पहार फुरन सत्ता कर॥
रबि ते सिद्ध होत दिन राती। तम प्रकास जानहु येहि भांती॥
आत्म प्रकास अस्त नहिं होई। उदित न भयउ प्रकट नित जोई॥
तेहि बिनु सिद्ध होइ कछु नाहीं। सब मँह तेहि कर जोति जगाहीं॥
ताहि मांहि अनुभव अणु राजत। जिमि बसन्त फल फूल विराजत॥
बीज रूप चिद्अणु होइ भासत। अनुभव अणु जहँ वहुत प्रकासत॥

दो०–बीते अनगिन प्रकट बहु होइहैं अबहिं अनेक।
उदासीन आसीन होइ रहत सदा सोइ एक॥१२१॥

कर्त्ता सोइ भोक्ता सोई। ताकर कबहुँ परस नहिं होई॥
जगत साँच ई तेहिते लागत। येहि कारन कर्त्ता होइ राजत॥
सब कर आपन आपहि होई। येहि ते होइ भोक्ता सोई॥
उपजा नाहिं नाहिं कछु नासा। सत्ता आप माहिं परकासा॥
सोइ अखण्ड सोइ सूक्ष्म रहावा। जाते कोउ परस नहिं पावा॥
राकसि जो कछु जगत लखाई। आत्म रूप होइ सोइ रहाई॥
आत्मा जगत भेद नहिं कोई। सबहिं एक आत्मा महँ होई॥
जगत आतमा कर बिस्तारा। चित सत्ता सरूप निज धारा॥
बोध हेतु यह बात चलाई। चिदाकास नहिं कछु उपजाई॥
द्रष्टा दृश्य रूप जब होई। आपु देखि पावै नहिं सोई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—भोक्ता बिनु जिमि भोग नहिं द्रष्टा बिना न दृस्य ।
पिता बिना तिमि पुत्र नहिं गुरु के बिना न सिष्य ॥१२२॥ क

एक बिना तिमि द्वैत नहिं द्वैत बिना नहिं एक ।
दृस्य न द्रष्टा जनि सकै प्रकटत दृस्य अनेक ॥१२२॥ क

भूषण रूप होइ बहु कंचन । पर न बनइ कंचन आभूषण ॥
दृस्यउ ते द्रष्टा नहिं होई । जड़ स्वरूप होइ राजत जोई ॥
स्वर्ण बुद्धि भूषण नहिं भासत । भूषण बुद्धि न स्वर्ण प्रकासत ॥
सत्ता एक सधइ नहिं दोऊ । रज्ज सर्प संग लखइ न कोऊ ॥
बोध भये नहिं दृस्य लखाई । सत्ता परम मात्र दरसाई ॥
द्रष्टा नाउँ न तब रहि जाई । दृस्य मिटे सोइ आप मिटाई ॥
संबित मात्र रहइ पद सेषा । बाणी कर तहँ नाहिं प्रबेसा ॥
दीप पदार्थ प्रकासत जइसे । द्रष्टा दर्सन दृष्यहिं तइसे ॥
बोध ते मातृ मेय अरु माना । त्रिपुटि होइ तब अन्तर्धाना ॥

दो०—स्वादहीन परमाणु ते उपजत है सब स्वाद ।
चिद अणु होइ अधार सोइ येहि महँ नाहिं बिवाद ॥१२३॥

आतमभाव ते सबहि सम्हारत । सबहि देत रस स्वयं न धारत ॥
जेहि के बिना सिद्ध कछु नाहीं । भये अभाव न कछु दरसाहीं ॥
ज्योति रूप होइ राजत जोई । मूरख समझि न पावत सोई ॥
अनुभव रूप सदा सोइ होई । तेहि ते जीवित जग यह जोई ॥
छन के सपन काल बहु बीतत । आयु अवस्था कल्पउ रीतत ॥
आपन मरन प्रत्यक्ष लखाई । जानु याहि भ्रम की प्रभुताई ॥
प्रकसि सब आकार प्रसारा । भ्रान्ति रूप प्रकटत सोइ सारा ॥
नील गगन यह भासत जइसे । आतमा माहि विस्व सब तइसे ॥
सब अनुभवइ सर्वगत जोई । जानउ सोइ आतमा होई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—तेहि मँह ब्यापक ब्याप्य कर भाव नाहिं कछु कोई।
सर्व आत्मा सर्व सोइ द्वैत कहाँ तब होइ ॥१२४॥

सुचि चित संबित फुरइ संबेदन। पृथक पृथक दरसइ जड़ चेतन॥
इच्छित बस्तु मिलइ जब कोई। ब्यापक व्याप्य भाव तब होई॥
इच्छा जोइ पदारथ सोई। जल तरंग बुद बुद जिमि होई॥
तिमि पदार्थ आतमा एक रूपा। भिन्न नाहिं सूरज अरु धूपा॥
देस काल परिछेद बिहीना। जानहु सत्ता मात्र प्रवीना॥
द्वैत होइ तब एक जनाई। आतमा जगत एक कहि जाई॥
सम्यक बोध होइ जब नाहीं। द्वैत अद्वैत रूप प्रकटाहीं॥
द्वैत कल्पना मात्र अग्याना। नभ सूनता भेद नहिं आना॥
द्वैत अद्वैत भाव दुःख कारन। मेटे होत परम पद धारण॥
द्रष्टा रूप जगत यह जोई। चिद् परमाणुहिं स्थित सोई॥

दो०—राकसि अचरज परम यह परइ नाहिं कछु जान।
माया चिद् परमाणु मँह रचित त्रिलोक बिधान ॥१२५॥

याहि ते मायामय सब होई। लगइ असंभव रूपहिं सोई॥
बीज माहिं स्थित तरु जइसे। सुनु चिदाणु मँह जग यह तइसे॥
साखा पत्र फूल फल जोई। बीज स्वभाव कहावत सोई॥
तिमि चिदाणु मँह जग बिस्तारा। सोइ अखण्ड स्वभाव सम्हारा॥
तदपि द्वैत अद्वैत न कोई। अस्ति नास्ति सम असम न होई॥
जगत अजगत ताहि नहिं जानहु। चिदानन्द सत्ता पहिचानहु॥
यह अन उदित उदित संबेदन। बीज बृक्ष महँ जइसे भेद न॥
एक आतमा बहुत लखाई। उदित न होइ न कबहु मिटाई॥
राकसि आत्मबोध जब जागइ। जगत सुषुप्ति सदृस तब लागइ॥

दो०—सत्ता आत्म अद्वैत है सोइ रहित परिणाम।
मुक्त पुरुष स्थित सदा ब्रह्म रूप जग नाम ॥१२६॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निशाचरी अस बचन सुनि पाई मन बिश्राम।
मेघ देखि सिखि मुदित जिमि पंकज रबि सुखधाम॥१२६॥

कही नृपति सुनि पावन बानी। बोध भयउ सीतलता आनी॥
राग द्वेष आदिक मन रीते। बिमल बचन कहि तुम मन जीते॥
जगत बिवेकी पूजित होई। येहि मँह नाहि संक कछु कोई॥

सवैया

चन्द्र को देखि चकोरी खुसी नलिनी रबि पाइ सदा मुसुकावै।
पौन सुगन्धित पुष्प प्रभाव ते सन्त की संगति बुद्धि जुड़ावै।
राजन मूरख जानौ सोई कर दीपक धारि जे गर्त में जावै।
पाइ सुसंगति दुःख जे भोगत जानौं ते जीवन ब्यर्थ गँवावै॥१

निसाचरी पूछी नृप पाहीं। केहि कारन बन आप फिराहीं॥
नृप बोले का कहौं कहानी। मम पुर कोउ राकसि प्रकटानी॥
सोइ सबहि दुःख देत अपारा। आयेउँ तेहिकर करन संहारा॥
तुमहि होउ जउ राकसि सोई। हिंसा तजु न दुःखी कोउ होई॥
कही कर्कटी नृप मैं सोई। पर अब हिंसा भाव न कोई॥
नृपति संक अस कीन्ह बहोरी। जीव अहार बृत्ति जब तोरी॥
बिनु अहार किमि प्रान रहाई। तब निसिचरी नृपहिं समुझाई॥

दो०—गिरि कन्दर मैं जाइ नृप लेइहौं अचल समाधि।
उतरें पुनि तन त्यागिहौं नहि अहार कोउ ब्याधि॥१२७॥

सुनु नृप तोहिं कहौं समुझाई। जेहि कारन हिंसा हिय आई॥
छुधा पीर जब पीड़ित भई। हिमगिरि सिखर बिकल होइ गई॥
स्वर्ण सिला ढिग मूर्ति समाना। दृढ़ होइ तप कर कीन्ह बिधाना॥
जीव नास हित निज मन ठाना। बिधि दीन्हेउ मोहि सोइ बरदाना॥
नृप दुइ देह मैं पाई। एक कराल सूर्य की नाईं॥
केसरि भई निसाचरि ताता। सोइ बिसूचिका जग दुःख दाता॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीवन्ह के भीतर प्रबिसाई । भोजन हित मन रुचि अधिकाई ॥
बिधि अस बोलेउ मोहि बुझाई । गुनवानन्ह नहि सकिहौ खाई ॥
करिहैं ॐ मन्त्र जे जापा । तिन्ह पर तोर न चलिहि प्रतापा ॥

दो०–सोइ उपदेस नृपाल अब तुमहुँ करहु स्वीकार ।
जेहि के जाप प्रभाव ते मेटहि सकल बिकार ॥१२८॥ क

हे नृप सरि तट जाइ तुम धारहु सोइ उपदेस ।
जेहि के जाप प्रभाव ते सुखी होइ सब देस ॥१२८॥ ख

कहहु प्रजाजन धारहि सोई । बिधि कर बचन कलेस न होई ॥

सवैया

बोले बसिष्ठ सुनौ प्रिय राम निसीथ में राकसि नीति जताई ।
मंत्री नरेस समेत भई सुचि पार्सहि में सरिता तट जाई ।
मंगल कारन दुःख निवारन हेतु तिन्हैं सोइ मंत्र बताई ।
ताकर साधु स्वभाव बिलोकि नरेस कहे मन प्रीत जगाई ॥

दिव्य नारि कर रूप बनावहु । कछु दिन रहि मम पुर सुख पावहु ॥
बोली उचित कहत तुम भूपा । किंचित धरउँ नारि कर रूपा ॥
तदपि न देइ पइहौ आहारा । होत निसाचरि क्षुधा अपारा ॥
राकसि कर सरूप जो पावा । सृष्टि प्रजन्त न मिटइ स्वभावा ॥
नृप तब कहेउ सुनहु कल्यानी । मम पुर रहे तोर नहिं हानी ॥
पापी चोर नगर जे अइहैं । ते सब तव अहार बनि जइहैं ॥
पाप न हिंसा होइ धरम हित । नहिं गलानि लावहु अपने चित ॥
दया दुष्ट कर दलन कहाई । अन्त भये जग पाप नसाई ॥
तब कर्कटी बोलि मृदु बानी । नीति बचन नृप केर बखानी ॥

दो०–मंत्री नृप के संग सोइ कीन्ही भवन प्रवेस ।
अन्तःपुर आदर सहित रही नारि के भेष ॥१२९॥ क

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

येहि बिधि बीते षट दिवस नृपति कीन्ह उपचार।
तृशत चोर अरपेउ तेही मुदित कीन्ह आहार ॥१२९॥ ख

दुइ दिन गाढ़ नीद तब सोई। पाई सुख पुनि जागृत होई॥
पाँच बरिस समाधि तब लागी। नृप के सुचि सनेह रस पागी॥
पुनि समाधि पुनि नीद अहारा। अस क्रम लीन्हीं बारहिं बारा॥
येहि बिधि बीति गये बहु काला। होइ गये जीवनमुक्त नृपाला॥
तेहि मण्डल जोइ राजा आवा। राकसि के हित मान जनावा॥
लीन्ही पुनि समाधि एक बारा। नृप समीप नहिं गई दुबारा॥
बरिस बरिस बहु दिन चलि गयऊ। तब नृप के मन बिस्मय भयऊ॥
दुख निवृत्ति भावना जगाई। निसिचरि कर दुइ मूर्ति लगाई॥
नाउँ मंगला देबि कन्दरा। सोचि बिचारि नृपति तब धरा॥
प्रतिमा माहिं देबि कर बासा। पूजइ जोइ करि मन विस्वासा॥

दो०—दुःख नासइ संकट टरै होइ सदा कल्यान।
येहिं बिधि सारे राज मँह जागा पूजा मान ॥१३०॥ क
गुरु बोले ओहि देस में अबहूँ दोउ पुजात।
श्रद्धा करि साधत जोई फल पावत सोइ तात ॥१३०॥ ख

अस सुनि प्रस्न कीन्ह रघुनन्दन। कहउ बुझाइ भगत उर चन्दन॥
भयउ वर्ण तेहिकर किमि कारा। नाउँ कर्कटी केहि हित धारा॥
बोले तब बसिष्ठ सुनु ताता। निसिचर कुल कन्या सोइ जाता॥
तिन्ह मँह स्याम शुक्ल दोउ होई। रक्त पीत बपु धारै कोई॥
बारि कीट कर्कटि एक होई। स्याम वर्ण बपु धारत जोई॥
तेहि सम कर्कट भयउ निसाचर। यह कर्कटी पुत्रि ताही कर॥
राम नाहिं कछु अउर प्रयोजन। कथा कहेउँ तोहि मात्र प्रबोधन॥
चेतन सुद्ध निरूपन कारन। सुत कीन्हेउँ राकसि कर वर्णन॥
तात देखु यह अचरज कैसा। लागत झूठ सत्य के जइसा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सोइ सत एक अनादि अनन्ता । सत्ता आतम स्वमाहिं बसन्ता ॥
तेहि महँ भाव रूप जग भासत । जल जिमि प्रकट तरंग प्रकासत ॥

दो०—जग आतमा तिमि द्वैत नहिं सत्ता आतम स्वतंत्र ।
जस जस चित स्पन्दन तस तस जागत तंत्र ॥१३१॥

कपि बटोरि जिमि रेतहिं तापत । अग्नि भाव ते सीत बिनासत ॥
तिमि आतमा मँह जगत फुराई । तात बिबिध्र तब रूप लखाई ॥
बीज माहिं अंकुर फल नाना । ब्रह्म माहिं बहु रूप जहाना ॥
अबिचारहिं ते भेद जनाई । भये बिचार ग्रन्थि छुटि जाई ॥
सब्द अर्थ कर जोइ कल्पना । नष्ट होइ सुनि मम दृढ़ बचना ॥
अनरथ चित्त जगत उपजाई । सुनि मम वचन सान्त होइ जाई ॥
येहि महँ नहिं संसय कछु कोई । जगत ब्रह्म मय जानहु होई ॥
ज्ञान माहिं जाग्रत जे होई । तथ्य तात जानइ तब सोई ॥
घट माटी भूषण जिमि सोना । ब्रह्म रूप तिमि जग कर होना ॥
भाव बिकार अविद्या विद्या । सुख दुःख भिन्न कल्पना मिथ्या ॥

दो०—सब अज्ञान कर रूप यह भेद कल्पना होइ ।
ज्ञान योग सधि जाइ तब द्वैत न भासइ कोइ ॥१३२॥ क
आदि मध्य अरु अन्त ते रहित अखण्ड सरूप ।
सत्ता स्थित आप मँह सोइ जानउ सुत भूप ॥१३२॥ ख

महावाक्य मंह निष्ठा लावहु । मन कर भ्रम सुनि बचन मिटावहु ॥
मन गंधर्व नगर सम होई । जस देखउँ तस बरनउँ सोई ॥
जेहि जाने जग भ्रान्ति जनाई । मिटत बासना मन प्रकटाई ॥
मन अस रोग विवेक दवाई । तेहि के बिना सान्ति नहिं आई ॥
सब जग चित्त कल्पना होई । देह आदि कछु नहिं प्रिय कोई ॥
चित्त रूप जग स्वप्न समाना । राग द्वेष संकल्पित नाना ॥
इन्हहिं त्यागि भव होइय पारा । चित्त सुद्धि सुभ गुन के द्वारा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करि बिचार भोजन व्यवहारा। चेष्टा करहु सास्त्र अनुसारा ।।
अस अभ्यास राम जब होई। खलु तोहिं ज्ञान मिलइ तब सोई ।।
जेहि ते सब कल्पना नसाई। स्थित आत्म ताहि कहि जाई ।।

दो०—मन ही मन बिरचेउ जगत चित्त सकल यह तात।
काल पाइ सिखि अंड सम नाना रूप लखात ।।१३३।।

जड़ चेतन मन दूनउ होई। जस देखत तस प्रकटत सोई ।।
प्रकट लखाइ स्वप्न संसार। आदिहिं तिमि बिधि प्रकटनहारा ।।
जड़ संवेदन ते गिरि पागे। चेतन ते जंगम सब जागे ।।
दीर्घ वेदना जगत पसारा। तथ्य रूप यह सूनहिं सारा ।।
आत्मा कर सरीर नहिं कोई। दृस्य रूप मन जानहु सोई ।।
जलाभास रबि कर महँ जइसे। मनाभास आत्मा कर तइसे ।।
जग पिसाच मूरख मन देखइ। ज्ञान भये परमात्महिं पेखइ ।।
जब चैत्यता आत्मा होई। द्वैत रूप भासइ जग सोई ।।
ताहि निबृत हित कहौं कहानी। बोध होइ सुनि सीतल बानी ।।

दो०—गुरु बोले प्रिय राम सुनु बिधि जोइ कहेउ बुझाइ।
सोइ बृत्तान्त भ्रम हरन हित तोहि कहउँ समुझाइ ।।१३४।।

एक बार बिधि ढिग मैं जाई। बिनय कीन्ह अस प्रस्न चलाई ।।
नाथ जगत गण कँह ते आये। मोहिं कहौ किमि उतपति पाये ।।
बाम्हन इन्द्र केर अख्याना। बिधि संछेपहिं मोहिं बखाना ।।
एक दिवस पूरेउ मुनि मोरा। नासी सृष्टि अन्हार न थोरा ।।
येहि बिधि राति गई जब मोरी। प्रातहि देखेउँ नभ की ओरी ।।
तम प्रकास दूनउँ तहँ नाहीं। सून्य इतर ते रहित सुहाहीं ।।
चिदाकास महँ चित्त मिलाई। सर्गोत्पति हित चाह जगाई ।।
तब बिसुद्ध सूछम चिद्काासा। देखेउँ बिस्तृत सृष्टि प्रकासा ।।
दृष्ट अदृष्ट रूप तेहि माहीं। ब्रह्मा बिष्णु महेस लखाहीं ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—सुर नर किन्नर मेरु लगि हिम गिरि आदि पहार ।
नदी नार सागर सहित धरती बहु बिस्तार ॥१३५॥ क
दसक सृष्टि मँह ब्रह्म दस सबहिं मोर अनुहार ।
राजहंस आरूढ़ सब बरनि को पावै पार ॥१३५॥ ख

भिन्न भिन्न रचना सब केरी । सूरज चान लगावत फेरी ॥
वायु अपार प्रखर जल धारा । पावत देव स्वर्ग सुख सारा ॥
मनुज धरा पर मुदित फिराहीं । अतल पताल दैत्य बिचराहीं ॥
काल चक्र इमि चलत अनूपा । षट् ऋतु सीत ताप अनुरूपा ॥
द्वादस मास कील सम जाहीं । जन अचार सुभ असुभ कराहीं ॥
स्वर्ग नरक कर पावत भोगा । कतहुँ मोक्ष कर वनत संजोगा ॥
सप्त दींप प्रति सृष्टि लखाहीं । उतपति प्रलय कल्प इमि जाहीं ॥
गंग लगइ जग कर उपवीता । कतहुँ छाँह कतहूँ अति धूपा ॥
बिज्जु सदृस सब उपजि नसाई । तरु फल फूल पत्र की नाईं ॥
ऊमर फर समान ब्रह्मण्डा । देखेउँ चलत प्रवाह प्रचण्डा ॥

दो०—छन लव दिन करि वर्ष बहु जिमि प्रवाह चलि जाइ ।
आत्मा मँह इमि काल कर तात अभाव लखाइ ॥१३६॥ क
अन्तवाह निज दृष्टि ते हे मुनि सकल लखाइ ।
चर्म चक्षु देखन चहौं कछु नाहीं दरसाइ ॥१३६॥ ख

देखेउँ अस चरित्र चिरकाला । चित भ्रम कर अदभुत यह हाला ॥
एक सृष्टि के रबिहि बोलावा । बिनय सहित अस बचन सुनावा ॥
कौन नाथ तुम मोहिं सुनावहुँ । कहँ ते उपजी सृष्टि बतावहु ॥
जगत अनेक मोहिं दरसाई । जानत जोइ तुम कहौ बुझाई ॥
सोइ त्रिकाल द्रष्टा दिनमाना । मोहि प्रणाम करि कीन्ह बखाना ॥
प्रकट पिसाच नाथ यह जोई । आपहि प्रकटत कारन होई ॥
बात तुम्हारि सकल मुनि जानी । पूछत मोहि ते बनि अज्ञानी ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लीला रूप जो जानन चहऊ। भयउ नाथ जेहि बिधि सोइ कहऊँ॥
यह सत असत युक्त व्यवहारा। मन कर फुरन सकल संसारा॥
कल्प दिवस जो गयउ तुम्हारा। जंबू दीप हिमाद्रि पहारा॥
गिरि कन्दरा कुटी बिचराई। तव सुवर्ण सुत एक रहाई॥

दो०—कस्यप कुल उत्पन्न एक बाम्हन इन्द्र महान।
सान्त रूप होइ बसत तहँ नारि संग मतिमान॥१३७॥

मानत प्रियहिं प्रान सम जोई। दुःखी भयउ कोउ सुत नहिं होई॥
गिरि कैलास कुंज एक जाई। सुत हित तरु चढ़ि ध्यान लगाई॥
दम्पति तपहिं माहिं अनुरागे। मात्र लेस जल भोजन त्यागे॥
येहि बिधि त्रेता द्वापर गयऊ। उमा संग सिव परगट भयऊ॥
प्रभुहिं देखि सीतल मन आना। जोरि हाथ दोउ कीन्ह प्रनामा॥
मनहु अकास धरनि धरि रूपा। दरस दीन्ह तेहि होइ अनुरूपा॥
मागु मागु बर सिव जब बोले। हर्षित होइ बिप्र उर खोले॥
बुद्धिमान कल्यान सरूपा। दस सुत देहु मोर अनुरूपा॥
एवमस्तु हर्षित सिव भाखा। दम्पति सोइ सरूप उर राखा॥
भवन आइ मन धीरज लावा। समय भये दसहूँ सुत पावा॥

दो०—ज्ञानवान गुणवान सब संस्कार संपन्न।
होनहार सुत पाइ अस दंपति भये प्रसंन्न॥१३८॥

सप्त वर्ष सुखमय इमि गयेऊ। दम्पति दोउ दिवंगत भयेऊ॥
दसहुँ त्यागि गृह हिमगिरि गये। आपुहिं बैठि बिचारत भये॥
कौन ईस परमेस्वर होई। जेहि पाये पुनि दुःख नहिं कोई॥
मण्डलेस्वरहि एक बखाना। जेहि कर सब पर चलइ बिधाना॥
दूसर राजहिं प्रमुख बतावा। तीसर चक्रवर्ति गुन गावा॥
यम महान चौथे कर बानी। पंचम इन्द्रहिं कीर्ति बखानी॥
तब कहि श्रेष्ठ बन्धु समुझावा। ब्रह्म कल्प महँ सब बिनसावा॥
नहिं कोउ श्रेष्ठ बिरंचि समाना। अस कहि बिधि बर्चस्व बखाना॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साधु साधु कहि तेहि सनमानी । बन्धु बिनत बोले मृदु बानी ॥
सब दुःख हरन ब्रह्म पद सोई । कहहु बुझाइ प्राप्त किमि होई ॥

दो०–अस सुनि भ्रातन्ह के बचन ज्ञान चाह जिय जानि ।
परम ज्ञान के बोध हित अग्रज कहेउ बखानि ॥१३९॥

कहेउ बन्धु निस्चय मन ठानहु । आपुहिं को ब्रह्मा तुम जानहु ॥
मानहु पद्मासन तुम राजत । सर्व श्रेष्ठ होइ आप बिराजत ॥
स्रष्टा पालक नासक आपहिं । सकल सृष्टि मम अंग प्रकासहि ॥
जगज्जाल कछु नाहि हमारा । अस दृढ़ाइ मन माहिं बिचारा ॥
जानहु तबहिं ब्रह्म पद होई । येहि महँ नहिं संसय कछु कोई ॥
अग्रज के मुख सुनि अस नीती । बाढ़ी अनुजन्ह के मन प्रीती ॥
तात कहेउ तुम जोइ समुझाई । करब सोइ हम ध्यान लगाई ॥
अस कहि सबहि ध्यान अनुरागे । अहं ब्रह्म अस चिन्तन पागे ॥
जगत कर्म सब रचे अपारा । सम्मुख बेद आदि बपु धारा ॥
लोकप सिद्ध आपु को माना । मण्डलेस होइ राजत नाना ॥
स्वर्ग धरा पाताल पहारा । सागर ताल सरित सर सारा ॥
जोइ लखात सब मोर रचावा । यज्ञ भोक्ता इन्द्र बनावा ॥
रबि तप मम अनुसासन पाई । जगत सकल मरजाद रहाई ॥
लोकपाल अज्ञा सिर धारी । पालत लोक करत रखवारी ॥
उपजत जगत मोहिं ते सारा । छन दिन मास काल बिस्तारा ॥
दिन उपजावत रात समेटत । सब में रहत काहु नहिं भेटत ॥
सदा आत्म पद स्थित जोई । परम पूर्ण परमेस्वर होई ॥

दो०–हे बिधि येहि बिधि बन्धु सब बिधि भावना दृढ़ाइ ।
बइठे ध्यान निमग्न होइ तन मन गये भुलाइ ॥१४०॥

बनचर देह खींचि सब खाये । येहि बिधि चारिउ युग बिनसाये ॥
बीतन लगे कल्प दिन तोरा । द्वादस सूर्य तपे घनघोरा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेघ गरजि बरसै जल धारा। धरा प्रकंपित पवन अपारा ॥
सागर हले जलहिं जल भयऊ। महा बिनास न कछु रहि गयऊ ॥
भये आतमपद जब सब नासा। तिन्ह के बपु कर भयउ बिनासा ॥
नभ सरूप होइ बिधि निज भावा। दसहु सृष्टि दस बिधि प्रकटावा ॥
लेइ दस बिप्र चित्त आकासा। जानहु सोइ सब सृष्टि प्रकासा ॥
तेहि मँह एक हमहुँ रबि भये। मोहि ते छन दिन युग प्रकटये ॥
याही हित प्रभु मोहिं लगावा। सोइ संक्षेपहि तोहिं बतावा ॥
मनोमात्र यह सब जग होई। अब जोइ चाहि करौ तुम सोई ॥

दो०–भिन्न भिन्न जग कल्पना इन्द्रजाल सम जोइ।
साँच न कछु सब चित्त के भ्रम ते भासित होइ ॥१४१॥ क

ब्रह्मा बोले बिप्रवर अस कहि रबि भये मौन।
तब मैं पूछी बात एक सृष्टि रचउँ अब कौन ॥१४१॥ ख

यह दस सृष्टि दसउ बिधि जोई। मम कृति कहउ सिद्ध का होई ॥
रबि बोले निरीह प्रभु आपू। तोहि हित सृष्टि बिनोद प्रतापू ॥
जिमि जल माहिं दिवाकर छाहीं। जल के बिनु कल्पना न ताही ॥
तिमि संबेदन ते सब होई। स्रष्टा तुम कह मूरख जोई ॥
आतमरूप तुम निष्क्रिय होई। प्राप्ति त्याग मँह द्वेष न कोई ॥
तव कल्पना न उतपति नासा। लीलामय यह सृष्टि प्रकासा ॥
रबिहिं उये दिन अथये राती। पर नहिं होइ सोइ संघाती ॥
तिमि तोहि माहिं सृष्टि लय होई। पर तोहि माहिं भाव नहिं कोई ॥
इन्द्रिय कर्म भले बिनसाई। किन्तु न मन कर निस्चय जाई ॥

दो०–हे प्रभु निस्चय होत जो सोइ पुरुष कर रूप।
ताहि न मेटि सकइ कोऊ अस चित चरित अनूप ॥१४२॥ क

बोले रबि देवेस तोहिं कहौं पूर्व इतिहास।
जबहिं इन्द्रद्रुम नृपति उर जागेउ ज्ञान उजास ॥१४२॥ ख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रही अहल्या सुन्दरि रानी । बरनउँ तेहिकर नाथ कहानी ॥
तेहि पुर सुघर बिप्र सुत रहई । नाउँ इन्द्र तेहिकर सब कहई ॥
रानिहिं देखि कहहिं पुर नारी । देबि अहल्या कर अनुहारी ॥
रानी अस सुनि मन अनुरागी । इन्द्र सरूप नेह रस पागी ॥
किन्तु न मिला इन्द्र जब ताही । दूबरि देह भई दुःख माहीं ॥
नृपति बहुत उपचार करावा । तदपि लाभ नाहीं कछु पावा ॥
भोग न रुचै नीद नहिं आवै । इन्द्र बियोग नाहिं सहि पावै ॥
लोक लाज सोइ त्यागी सारी । इन्द्र इन्द्र दिन रैन पुकारी ॥
सखी एक तब कीन्ह प्रयासा । इन्द्र बोलि लाई तेहि पासा ॥
दोउ मिलि प्रेम पालने झूले । देह गेह मन सरबस भूले ॥
सुनेउ नृपति अस निन्द्य अचारा । दण्ड देन हित कीन्ह बिचारा ॥
अग्नि ताप करि पद तल राखा । तबउ नाहिं तिन्ह दुःख कछु माखा ॥

दो०—दोउ न मानेउ कष्ट कोउ जदपि नृपति बहु दीन्ह ।
समुझि न आव रहस्य यह प्रस्न चकित होइ कीन्ह ॥१४३॥

रानी कही न दुःख मोहिं कोई । मोहि जग इन्द्र भास यह होई ॥
इन्द्र कहेउ नृप सन अस बानी । नाथ लखाइ मोहि बस रानी ॥
हे नृप जो कछु जग बिस्तारा । एक मात्र मन केर पसारा ॥
जस मन पुरुष रूप तस होई । जोइ दृढ़ाइ होइ प्रकटत सोई ॥
मम मन बसइ अहल्या मूरति । तेहि के उर राजत मम सूरति ॥
भासइ अपर त दुःख कछु होई । लोह कोट प्रबिसइ किमि कोई ॥
इन्द्र अहल्या मन कर नामा । सोइ बिरचेउ यह जगत ललामा ॥
जस दृढ़ाइ तइसइ होइ भासत । गिरि सुमेरु सम थिरइ न नासत ॥
बीज नसइ तब तरु बिनसाई । डार पात काटे किमि जाई ॥
तइसइ मन कर निस्चय होई । बिनु पलटे परिणाम न कोई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सवैया

एक सरीर के नासत जीव बिराजत दूसरि देह में जाई।
याते अधीनता जात कहाँ मन कै निहचै तबहूँ न नसाई।
कारण नीर बनै फल फूल पदारथ कै मन तइसे कहाई।
तइसै जहां लगि जात है चित्त नृपाल हमैं बस रानी लखाई ।।

दो०—कहेउ दिवाकर जब कही इन्द्र बिप्र अस बात।
नृप बोले ऋषि भरत ते पापी ढीठ लखात ।।१४४।।

देहु श्राप करनी अनुसारा। दण्ड न्याय हित धर्म हमारा ।।
ऋषि तब कहेउ तिन्हहिं मृत होहू। बोले इन्द्र उचित नहिं कोहू ।।
साप प्रभाव देह मिटि जाई। तदपि न मन बिनास यह पाई ।।
मन प्रभाव दूसर तन होई। जन्म मरण कर चक्कर सोई ।।
अस कहि दोउ तरु सम भहराने। सद्यः मृग सरूप प्रकटाने ।।
नेह युक्त सोउ जनम गँवावा। ताहि त्यागि पक्षी तन पावा ।।
अब दोउ बाम्हन दम्पति रूपा। मोरि सृष्टि तप करत अनूपा ।।
भरत साप कर देखु प्रभावा। तन बिनसे पर मन न नसावा ।।
पावा जहँइ देह दोउ जाई। अकृतिम प्रेम रहे लपटाई ।।
येहि ते कतहुँ अनन्द न पाये। मरि मरि जनमि जनमि भटकाये ।।

दो०—बोले रबि हे प्रभु सुनहु मन निहचय जस होइ।
जुग जुग लगि तइसै चलै रोकि सके नहिं कोइ ।।१४५।।

मनहिं जगत कर कर्त्ता होई। सोइ पुरुष दूसर नहिं कोई ।।
मन निहचय कर नाहिं दवाई। दर्पण जिमि प्रतिबिम्ब लखाई ।।
सृष्टि सृष्टि कर भ्रम चित रहई। पलटे बिना काज नहिं सरई ।।
हे बिधि सृष्टि करहु चिदकासा। जेहि ते होइ सकल भ्रम नासा ।।
रूप अनन्त नाथ यह होई। इच्छित सृष्टि रचउ चह जोई ।।
इन्द्र सुतन्ह न तोर कछु लीन्हा। नित्य कर्म चाहिय तोहि कीन्हा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—बिधि बोले ऋषिबर सुनहु सुनि रबि कर अस नीति।
नित्य कर्म हित मनहिं मम जागी सहजहिं प्रीति ॥१४६॥ क
तुम मम सृष्टि प्रजापति मनु हे प्रिय दिनमान।
निज इच्छा अनुरूप अब बिचरउ सृष्टि सुजान ॥१४६॥ ख

अस आदेस मोर जब पावा। दिनकर निज दुइ रूप बनावा॥
रबि स्वायंभुव मनु होइ जोई। कीन्हि सृष्टि कर रचना सोई॥
येहि ते कहेउँ जगत मन रचना। मन कर निहचय सकल कलपना॥
हे मुनि देह भले बिनसाई। तदपि न मनकर निहचय जाई॥
चित्त माहिं निहचय सोइ जागइ। आतमा कर किंचन चित पागइ॥
प्रकटत तसहिं फुरित जस होई। सृष्टि इन्द्र कर जानहु सोई॥
संबित सुद्ध प्रथम उत्थाना। अन्ताबाहक तन होइ आना॥
तेहि मँह दृढ़ अभ्यास प्रमादा। भौतिक आधि देह मर्यादा॥
तेहि मँह जागेउ जब अभिमाना। नामी जीव रूप प्रकटाना॥
नाना भाँति बासना होई। घटी यंत्र सम भटकत सोई॥

दो०—आत्म बोध पाये बिना दृस्य सान्त नहिं होइ।
हे मुनि यह सब भ्रम जगत उपजा नहिं कछु कोइ ॥१४७॥ क
नहिं कछु माया नहिं जगत नहिं कछु सृष्टि प्रसार।
जो कछु दृस्य लखाइ जग मन कर मात्र बिकार ॥१४७॥ ख

दुइ रूप येहि मन कर होईं। जड़ चेतन करि जानत सोई॥
चेतन ब्रह्म दृस्य जड़ जोई। जदपि सबहि जग चेतन होई॥
जोइ भासइ परमातम सरूपा। येहि ते सब चेतन कर रूपा॥
ब्रह्म माहिं जड़ चेतन नाहीं। दोष प्रमाद पाइ प्रकटाहीं॥
ब्रह्म माहिं चैत्यता जो आई। हे मुनि सोई मन कहि जाई॥
चेतन भाग जोइ मन माहीं। सोइ प्रबुद्ध ब्रह्म कहि जाहीं॥
जड़ अबोध भाग जोइ मन कर। तेहि मँह दर्सन होत जगत कर॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सब परतीति ब्रह्म मँह होई । सोइ परम पद दुःख नहिं कोई ।।
जग भ्रम चित्त माहिं सब होई । आतम बोध ते नासत सोई ।।

दो०—देह भाव दृढ़ होइ जेहि तेहि हित करत उपाय ।
बहुत काल दुःख लहइ सोइ संसृति चक्र भ्रमाय ।।१४८।। क

गुरु बोले प्रिय राम जब बिधि अस कहेउ निचोरि ।
संक निवारन हेतु मैं कीन्हीं प्रस्न बहोरि ।।१४८।। ख

साप माहिं भारी बल होई । ताहि मेटि पावै नहिं कोई ।।
हमहुँ लखेउँ प्रभु साप प्रभावा । मन बुधि इन्द्रिय जड़हि बनावा ।।
किन्तु भला अइसे किमि होई । देह गलइ मन ह्रास न कोई ।।
होइ असत्य रूप मन देहा । स्पन्द पवन सम जानहु येहा ।।
देह कर्म मन पर नहि लागे । अस सुनि नाथ संक मन जागे ।।
बिधि तब कहेउ मोहिं समुझाई । पुरुषारथ ते सब प्रकटाई ।।
जग महँ नाहिं पदारथ कोई । पुरुषारथ ते लहइ न जोई ।।
ब्रह्मा ते चींटी पर्यन्ता । सबहि भावना रूप लखन्ता ।।
दुइ सरीर सब जग के होई । मन अरु भौतिक जानहु सोई ।।
भौतिक निष्फल जेहिकर काजा । चेष्टा मनकर सफल बिराजा ।।

दो०—हे मुनि मांसल देह मँह अहमिति जागइ जाहि ।
आधि व्याधि सापादि सुनु निहचय लागइ ताहि ।।१४९।। क

चंचल चित्त सरीर यह बान्हि न पावै कोइ ।
सोइ निज बस तेहि करि सकइ दृढ़ बिराग जेहि होइ ।।१४९।।ख

जग राजत चंचल मन माहीं । जस धारत तस तस प्रकटाहीं ।।
मुनिवर चित जे आतमपद होई । आगि परे दुःख होत न कोई ।।
देह भाव ते ग्रहण न करहीं । आतमा मइँ स्थित होइ रहहीं ।।
दृढ़ीभूत मन करि जे रहहीं । कष्ट साप मँह ते नहिं परहीं ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बीचहिं होइ बिपर्यय जोई। जानउ दृढ़ करि लाग न सोई॥
जौ अभ्यास सिथिलता पावै। तबहिं जानु अस संकट आवै॥
नहिं पदार्थ अस क्षमता होई। मन तीव्रता डिगावै जोई॥
येहि ते मन मन माहिं रमावहु। राम चित्त पदमाहिं लगावहु॥
जब चित आत्मा माहिं दृढ़ाई। जगत पदार्थ नाहिं भरमाई॥
सूली चढ़े खेद नहिं भयऊ। ऋषि मण्डव्य आत्मपद लयऊ॥

दो०—इन्द्र बिप्र कर हाल सोइ दुःख नहिं कोऊ जान।
मुनिवर दीर्घतपा कर का अब करौं बखान॥१५०॥

गिरे अन्ध कूपहिं सोइ जाई। मनहिं दृढ़ाइ यज्ञ रुचि लाई॥
मनहिं दृढ़ाइ इन्द्रपुर गयऊ। दिब्य स्वर्ग सुख भोगत भयऊ॥
इन्द्र सुतन्ह महिमा नहिं गोई। दस के दस ब्रह्मा सम होई॥
सृष्टि रची आपनि रुचि जोई। हमहूँ ते खण्डित नहिं होई॥
दृढ़ अभ्यास तात होइ जोई। तेहि कर नास कबहुँ नहिं होई॥
देव महाऋषि धीरज बाना। जेहिकर कबहुँ न बृत्ति चलाना॥
आधि ब्याधि नहिं ब्यापत कोई। साप ताप दुःख क्षोभ न होई॥
आधि व्याधि दुःख पावत सोई। जेहि परमार्थ बोध नहिं होई॥
राम करहु पुरुषारथ सोई। जेहि ते जग भ्रम तोहिं न होई॥

दो०—तात प्रथम बिधि जो कहेउ तोहि सुनावउँ सोइ।
प्रकटत केहि बिधि जगत यह सुनहु नास किमि होइ॥१५१॥
सागर उठत तरंग पुनि ताहीं माहिं बिलाइ।
ब्रह्म माहिं जग उपजि तिमि ताहि माहिं मिलि जाइ॥१५२॥

सुद्ध आत्मसत्ता प्रिय जोई। सोइ मन सोई ब्रह्मा होई॥
बिचरेउ सोइ बिस्तृत जग सारा। सर्व चित्त सोइ सक्ति पसारा॥
चित्त फुरे नानात्व जनाई। जीवहि सत्ता आत्म बसाई॥
कर्म प्रभाव जीव भटकाई। अधः ऊर्ध्व होइ जन्म गहाई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बिनु पुरुषार्थ बिना सतसंगा । जन्म मरण कर जाइ न संगा ॥
सब दुःख हेतु बासना होई । नाना भ्रम उपजावत सोई ॥
भये बिना नहिं सम्यक ज्ञाना । नाहि बासना कर अवसाना ॥
गुरु बोले सुनु राम सुजाना । सकल जीव बिधि ते प्रकटाना ॥
जिमि तरंग बुदबुद जल होई । जीव सबहिं ब्रह्मा तिमि सोई ॥

सवैया

ज्यो रबि जोति लखात है बारि औ आगि ते ज्यों प्रकटै चिनगारी ।
कल्पलता ते कढ़ै बहु मंजरी चन्द्र ते होत प्रभा सुखकारी ।
पत्र प्रसून फलादि ज्यों वृक्ष ते स्वर्ण ते भूषण की छबि न्यारी ।
तइसइ ब्रह्म ते होत हैं जीव संबेदन रूप है कल्पना सारी ॥

दो०—जल द्रवता ते लहर बनि जइसे भासित होइ ।
जगत रूप भासत तिमिहि ब्रह्म संबेदन सोइ ॥१५२॥ क
द्रष्टा दर्सन दृस्य सब ब्रह्महि ते उपजाहिं ।
रबि आतम मृगबारि कर जइसे सरित लखाहिं ॥१५२॥ ख

किन्तु न त्रिपुटि कल्पना कोई । रबि प्रकास जिमि भेद न होई ॥
उठि तरंग सागरहिं समाई । ब्रह्महि माहिं जीव मिलि जाई ॥
सहस जन्म कहुँ अल्पहि काला । छूटत राम तबहिं जग जाला ॥
ईस्वर इच्छा तें जग होई । चाहै जोइ करावै सोई ॥
आपहि होइ ब्यवहार प्रकासत । येहि बिधि सोइ जगत बनि भासत ॥
कर्त्ता कर्म भिन्न नहिं कोई । फूल सुगन्ध एक जिमि होई ॥
सब संकल्प कल्पना त्यागत । जीव ब्रह्म होइ बिमल बिराजत ॥
भासत जगत नीलिमा जइसे । जग कल्पना आतमहिं तइसे ॥
तदपि आतमा द्वैत न भाई । अज्ञानिहिं अस कहौं बुझाई ॥
जीव ब्रह्म ते उतपति पाये । सात्विक राजस तमस जनाये ॥
ज्ञानिहिं हेतु उचित नहिं सोई । तदपि बोध हित भाव न कोई ॥
दोउ माहिं कछु अन्तर नाहीं । एक संग बिधि ते प्रकटाहीं ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—सत्ता माहिं न कल्पना स्थित आत्म स्वभाव ।
ज्ञानी प्रकट लखहिं अस मूढ़हिं दूर जनाव ।।१५३।।

सवैया

मूढ़हिं भासत आतमा जीव में मेरु औ मन्दर अन्तर भारी ।
चित्त फुरे उपजै सब जीव बसन्त में जइसे फुले फुलवारी ।
भेद कछु नहिं है मन कर्म में फूल सुगन्धहिं की अनुहारी ।
आतमा ते उपजात सबै मिलिजात है अन्तहिं ताहि मझारी ।।

द्वैत्य नाम नर देव प्रजन्ता । किन्नर आदिक जीव अनन्ता ॥
सबहि आतमा ते उपजाहीं । तेहि मँह समय पाइ मिलि जाहीं ॥
आतमज्ञान जब लगि नहिं होई । जग भ्रम तब लगि छूट न सोई ॥
बीचहिं रघुपति संक उठाई । बिनत होइ गुरुवरहि सुनाई ॥
सास्त्र बिहित जे करहिं अचारा । सुभ गति पावहिं तेहि अनुसारा ॥
लोकहुँ गुरु प्रचलित मत येहा । कर्म अधार जीव धर देहा ॥
अंकुर होइ बीज अनुसारा । गति तिमि मिलइ कर्म आधारा ॥

दो०—कर्त्ता बिना करम नहिं भिन्न परस्पर नाहिं ।
मन अरु कर्म कहेउ तुम एक संग प्रकटाहिं ।।१५४।।
सधत न लोक न सास्त्र मत समुझि परत नहिं मोहिं ।
कहहु बुझाइ कृपानिधि बिनय करत हौं तोहिं ।।१५४।।

तब बसिष्ठ अस कहि अमुझावा । राम प्रस्न तुम उचित उठावा ॥
आतम तत्व महँ फुरेउ सँबेदन । कर्म बीज सोइ प्रकटत होइ मन ॥
कर्म रूप सबकर मन सोई । जाहि बीज ते सब फल होई ॥
मन अरु कर्म भेद नहिं कोई । पुष्प सुगन्ध एक जिमि होई ॥
होइ जवहिं मन महँ संकल्पा । प्रकटत अंकुर कर्म बिकल्पा ॥
पूर्व देह मन ही यह होई । जेहि ते कर्म करइ सब कोई ॥
क्रिया कर्म मन फुरनहिं जानहु । तेहि ते सिद्ध होइ सब मानहु ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अस गिरि गगन लोक कोउ नाहीं । पावत जाहि कर्म छुटि जाहीं ।।
मन महँ जोइ संकल्प जगाहीं । सिद्ध होइ कोउ संसय नाहीं ।।
होत प्रयत्न पूर्व पुरुषारथ । जाइ नाहिं सोइ कबहुँ अकारथ ।।

दो०—ब्रह्म माहिं जो चैत्यता कर्म रूप मन सोइ ।
सबहि लोक कर बीज सोइ येहिते भिन्न न होइ ।।१५५।।

कतहुँ करन कोउ चहइ पयाना । यात्रा हित सँकल्प तब ठाना ।।
सोइ संकल्प ताहि लेइ जाई । येहि ते चलना कर्म कहाई ।।
कर्म होइ तिमि फूर्त सरूपा । मन कर तात होत सोइ रूपा ।।
करउ न तात संक मन माहीं । मन अरु कर्म भेद कछु नाहीं ।।
ब्रह्म रूप सागर बिनु क्षोभा । द्रवता रूप चैत्यता सोभा ।।
जीव चैत्यता रूपहिं सोई । ताकर नाम राम मन होई ।।
कर्म रूप मन जस जस फुरई । सिद्ध होइ कारज जो करई ।।
भिन्न भिन्न जो भासित होई । मात्र कल्पना जानहु सोई ।।
मन अरु कर्म संग प्रकटावा । बार अनेक तोहि समुझावा ।।

दो०—दर्पण नियर पदार्थ जिमि ताहि माहिं दरसाइ ।
आतमा रूपी मुकुर तिमि मन कर कर्म लखाइ ।।१५६।।

सीतलता बिनु हिम न कहाई । कर्म बिना तिमि चित नहिं भाई ।।
जब स्पन्द चित्त कर नासइ । चित्त तात नाहीं तब भासइ ।।
चित्त नसे कर्मउ बिनसाई । कर्म बिना मन नाहिं रहाई ।।
मन ते मुक्ति जबइ कोउ पावै । तात तबइ सोइ मुक्त कहावै ।।
एक नसे दूनउ बिनसाई । आगि नसे तिमि ताप मिटाई ।।
ताप जो नाहिं अग्नि कहँ होई । मन के नसे कर्म नहिं कोई ।।
कर्म रूप चित चित जिमि करमा । दोउ अभेद परस्पर धरमा ।।
गुरु बसिष्ठ अस कहेउ बुझाई । मन भावना मात्र सुनु भाई ।।
क्रिया कहावत फुरन भावना । जेहि ते सब फल होत पावना ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जब बसिष्ठ अस कहि समुझावा । राघव दूसर प्रस्न उठावा ॥
मन जड़ अजड़ रूप जो होई । मोहिं बिस्तार सुनावहु सोई ॥

दो०—गुरु बोले यह आतमा अन्तहीन जो होइ ।
तेहि महँ फुरइ सँकल्प जब मन कहलावै सोइ ॥१५७॥ क
जड़ अजड़हि के मध्य प्रिय रहि जो होत डोलाय ।
तेहि अति मिश्रित रूप कर संज्ञा मन कहि जाय ॥१५७॥ ख
भाव पदारथ मध्य जेहि साँच झूठ कर भान ।
राम कहाँ लगि कहउँ तोहि ताहि नाउँ मन मान ॥१५७॥ ग

बिनु कल्पना होत मन नाहीं । ताप बिना नहि अग्नि रहाहीं ॥
मन के बिना कर्म नहि होई । मन आतमा भेद नहि कोई ॥
मनहि बीज सँकल्प फल पाती । नाना देह जगत कर थाती ॥
जस बासना जगइ मन माहीं । तस तस होइ फल फूल लखाहीं ॥
कर्म बीज मन फुरनहि होई । भिन्न क्रिया नाना फल सोई ॥
जेहि हित निहचय मन कर होई । कर्मेन्द्रियां कइइं मिलि सोई ॥
कर्महि रूप जानु मन होई । नाम अनेक पुकारत सोई ॥
मन बुधि अहंकार स्मृति सोई । कर्म कल्पना माया जोई ॥
प्रकृति अविद्या सोइ बासना । जग कर कारण जानु कल्पना ॥

दो०—कहेउ राम अद्वैत जो संबित परमाकास ।
कलना येती भई किमि दृढ़ अति अर्थाभास ॥१५८॥

गुरु बोले प्रिय सोइ बतावहुँ । अति संक्षेपहि तोहि सुनावहुँ ॥
मन कर वृत्ति पदारथ ज्ञाना । ताकर नाम बुद्धि तव जाना ॥
आतमभाव अभिमानहिं आये । अहंकार तब सोइ कहाये ॥
कारन जग बन्धन कर सोई । तोरत जोरत नाता जोई ॥
सिसुवत बिनु बिचार बिचराई । तात चित्त सोई कहि जाई ॥
बृति कर धर्म कहावत फुरना । फल आरोपि चहै सोइ गहना ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्व कृत्य जब त्यागइ सारा। संस्कार चित माहिं जो धारा ॥
सोइ अनुभव स्मृति जानहु भाइ। दृढ़ जो होइ बासना कहाईं ॥
आत्मतत्व अद्वैतहिं जोईं। द्वैत रूप तहँ भासित होईं ॥

दो०—सोइ अविद्या स्पन्द ते हेतु नास कर होइ।
आतना माहिं बिकल्प जोइ मूल अविद्या सोइ ॥१५९॥ क
सब्द परस रस गंध औं रूप लखावन हार।
परमातभा अद्वैत सोइ आत्महिं रचेउ अधार ॥१५९॥ ख

सोइ स्पन्द प्रकृति कहि जाईं। भ्रमइ जोइ माया सोइ भाईं ॥
कर्ता कारन कारज सोईं। सब्द रूप रस प्रकटत जोईं ॥
सब्दादिक अनुभव सोइ करमा। चेतन सुद्ध लगइ जो कलना ॥
होत बिपर्यय फुरना सोईं। राम न कछु तोहिं राखौं गोईं ॥
जब संकल्प जाल हटि जाईं। तात सोइ तब जीव कहाईं ॥
चित मन बन्ध याहि कर नामा। चैत्य संयोग होत सब रामा ॥
कहेउ राम एकहि कहु सोई। मन जड़ अथवा चेतन होई ॥
गुरु बोले रामहिं समुझाई। मन जड़ चेतन रूप न भाई ॥
दोउन ग्रंथि मध्य जोइ राजत। कल्पित रूप बिकल्प बिराजत ॥
ताही ते यह जग सब भयऊ। जड़ चेतन दोउ भाव जगयऊ ॥

दो०—कबहुँ रहइ जड़ होइ सोइ चेतन कबहुँ जनाइ।
सुद्ध चेतना में फुरइ मन सोइ नाउँ कहाइ ॥१६०॥

मन जोइ अहंकार बुधि होई। चित्त जीव आदिक सुनु सोई ॥
नट जिमि स्वाँग रूप जोइ धारत। ताहि नाम ते लोग पुकारत ॥
तिमि संकल्प रूप मन होई। संज्ञा नाना पावत सोई ॥
कोउ जड़ कहइ भिन्न कह कोई। मिथ्या सकल कल्पना होई ॥
नैयायिक अस कहत बुझाई। सूक्ष्म तत्व ते सृष्टि जगाई ॥
प्रलय होत तब थूल बिनासत। तेहिकर अणु बिसाल होइ भासत ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पंचतत्व ते सृष्टि सुहाई । येहि बिधि जगत पुनः प्रकटाई ॥
सांख्य कहइ कछु अउरइ भाई । माया प्रकृति सृष्टि बिरचाई ॥
छिति जल पावक पवन मिलाई । कोउ कह मोहक सृष्टि सुहाई ॥

दो०—चारिउ तत्वन के मिले कहत सृष्टि प्रकटाइ ।
जब ये बिछुरत तात हैं तबहिं प्रलय होइ जाइ ॥१६१॥

मत अनेक बहु भाँति बखाना । मंजिल एकहिं पथ जिमि नाना ॥
जब सब पथ चलि पावत सोई । तब सिद्धान्त भेद किमि होई ॥
भिन्न रूप येहि मन कर होई । नाना भाँति लखत जग सोई ॥
दानी तपी छात्र जिमि होई । क्रिया रूप संज्ञा तिमि सोई ॥
तइसइ मन बहु नाम धराई । जीव बासना कर्म कहाई ॥
चित के फुरे भयउ जग सारा । मन के फुरे जनात अपारा ॥
चित कर फुरन लुप्त जब होई । तात नाहिं दरसइ कछु कोई ॥
इन्द्रिय बिषय हरष दुःख होई । निहचय जीव कहावत सोई ॥
मन तें सिद्ध होइ सब काजा । सब कर कारण मनहिं बिराजा ॥

सो०—पुरुष मुक्त तब होइ तात चेत्यता छुटइ जब ।
रहेउ संजोगहि जोइ जानहु बन्धन महँ बंधेउ ॥१६२॥

जड़ मानहिं केवल मन जोई । जानहु सोइ अधिक जड़ होई ॥
तइसइ मात्र जे चेतन मानहिं । प्रबुध तिन्हहिं जड़ रूपहिं जानहिं ॥
मन जौ एकहि रूप रहाई । सुख दुःख द्वन्द्व कहाँ तब आई ॥
चेतन मात्र आतमा होइ । जहँ कर्तृत्व भाव नहिं कोई ॥
जड़उ भये कारण न कहाई । पाहन ते नहिं कछु उपजाई ॥
मन जड़ चेतन बीच रहाई । जेहि ते सकल जगत प्रकटाई ॥
भासत चैत्य चित्त जब होई । अचित भये दरसत नहिं सोई ॥
मन सबकर कारन होइ राजत । सर्व सक्ति ईस्वर कर छाजत ॥
ताही ते सब जगत फुराई । जड़ होइ ताहि माहिं मिलि जाई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—मकरी जाल बुनइ जिमि आपुहिं लेइ मिलाइ।
परमात्मा ते प्रगटि जग ताहि माँहि मिलिजाइ ॥१६३॥

ब्रह्म सुद्ध नित बोध सरूपा। प्रकृत भाव पावत सुतभूपा ॥
तात अबिद्या के बस होई। बिबिध भाँति जग धारत सोई ॥
जीव चित्त बुध्दि आदिक जोई। मलिन चित्त कर संज्ञा होई ॥
मतवादी बहु कीन्ह कल्पना। येहिते कवन प्रयोजन अपना ॥
अस सुनि राम कीन्ह अनुरोधा। हे गुरुवर तुम ज्ञान पुरोधा ॥
कहेउ नाथ जस जानेउँ सोई। जग आडंबर मन ते होई ॥
सब मन रूप कर्म मन जाना। अनुभव कर किमि होइ बिधाना ॥
गुरु बसिष्ठ तब कहेउ बुझाई। मन भावना मात्र यह भाई ॥
जिमि मरु सूर्य किरन जल भासत। तिमि आतमा भास मन लागत ॥
मन ते यह जग जोइ लखाई। सब मन रूप जानु तुम भाई ॥
कतहुँ देव कतहूँ गन्धर्वा। पंछी, दैत्य नाग इमिसर्वा ॥
भाँति भाँति दरसत जग सारा। सब जानउ तुम मन बिस्तारा ॥
पत्र दारु सम मानहु होई। जगत बिचार बिनासत सोई ॥

दो०—मन नासत परमातमा मात्र सेष रहि जाइ।
सब कर आश्रय ब्याप्त सोइ साक्षी भूत कहाइ ॥१६४॥ क
तेहि ते तात प्रमाद ते मन ते जगत रचाइ।
याही ते मन कर्म दोउ एक रूप कहि जाइ ॥१६४॥ ख

जनम मरन कर सकल पसारा। मन ही ते भासत यह सारा ॥
होत बिचार लीन मन होई। कर्मादिक भ्रम रहइ न कोई ॥
भ्रम जेहि नाहिं मुक्त सोइ होई। संसृति चक्र न भरमइ सोई ॥
राम प्रस्न पुनि बीच उठावा। त्रिगुण रूप प्रभु जीव बतावा ॥
सत्य असत्य कहेउ जो कारन। नाथ संक मम करहु निवारन ॥
मन असुद्ध जब गुरु उपजाई। बिस्तृत जगत कहहु किमि पाई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुरु बोले सुनु राम सुजाना। तीनि रूप यह गगन बखाना॥
चिदाकास अरु चित्ताकासा। तीसर जानहु भूताकासा॥
भाव समान आप त्रय राजत। निज निज सत्ता माहिं बिराजत॥

दो०—स्थित चेतन मात्र के बाहर भीतर जोइ।
चित्ताकास कहात सोइ नित्य प्राप्त जो होइ॥१६५॥

बोध रूप अनुमाता जोई। सर्वभूत महँ ब्यापित होई॥
चिदाकास तेहि जानहु भाई। चित्ताकास सोइ कहि जाई॥
सर्व भूत कर कारन जोई। जेहि ते जग यह बिस्तृत होई॥
दसहु दिसा बिस्तारत जोई। बपु प्रच्छेद न जाकर होई॥
सून्य रूप पवनादि सम्हारइ। भूताकास नाँउ सोइ धारइ॥
भूता चित्ताकासहु जोऊ। चिदाकास ते प्रकटत दोऊ॥
जिमि दिन ते सब कारज होई। तात चित्त तुम जानहु सोई॥
चित जड़ चेतन दूनउ नाहीं। ताही ते यह नभ प्रकटाहीं॥
राम होहिं नहिं तीनि आकासा। बोध हेतु बुध करहिं प्रकासा॥
ज्ञानिहि एक ब्रह्म दरसाई। द्वैत अद्वैत नाहिं कछु भाई॥
जब लगि तोहि प्रबोध न होई। तीनि अकास बतावौं सोई॥
जिमि दावाग्नि लगत बन माहीं। तरु तृन छार सबहि होइ जाहीं॥
ज्ञान अग्नि ते नभ तिमि नासत। तात मात्र तब सून्य प्रकासत॥

दो०—चेतन मलिन जो चैत्यता पावत राम सुजान।
ताकर देखु प्रभाउ अस दरसत सकल जहान॥१६६॥

जगत माहिं जो कछु दरसाई। राम चित्त ते सब उपजाई॥
चित्त आतमपद माहिं लगावहु। आपन जग भ्रम तात मिटावहु॥
पूर्व भयउ जो चित्ताख्याना। बोध हेतु तोहि करौं बखाना॥
महा सून बन निर्जन जहवाँ। यह आकास बिराजत तहँवा॥
तेहि बन बसत पुरुष बिकराला। सहस नयन बहु भुजा बिसाला॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चलत चलत जब सोइ थकि जाई। कूप माहि बिरमत तब जाई ।।
कबहुँ कंज बन भटकत जाई। दुःख पावै जब काँट चुभाई ।।
जँह जँह जाइ तहँइ दुःख पावै। पुनि पुनि पलटि कूप सोइ आवै ।।
एक दिवस भटकत तेहि पावा। पकरि ताहि मैं प्रस्न चलावा ।।
कहउ कौन तुम मोहिं बुझाई। मिथ्या जग भटकत किमि भाई ।।

दो०—कहेउ सोइ मैं नाहि कछु नाहिं करौं कछु काम।
सत्रु रूप तोहिं लखें ते अन्त मोर परिनाम ।।१६७।।

अस कहि सोइ निज अंगन देखा। रूदन कीन्ह करि जाइ न लेखा ।।
अंग अंग करि बपु सब नासा। सीस भुजा उर सबहि विनासा ।।
नीति सक्ति मैं कीन्ह बिचारा। कछुक दूरि आगे पग धारा ।।
अपर पुरुष तइसइ पुनि देखा। दुःखी सोउ पूर्वहिं कर लेखा ।।
निज सरीर पै करत प्रहारा। येहि बिधि पावत कष्ट अपारा ।।
मोहि बिलोकि सोइ हर्षित भयऊ। होइ तब चकित पास मैं गयऊ ।।
पूर्वहि भाँति प्रस्न जब कीन्हा। सोइ निज देह त्यागि तब दीन्हा ।।
पुनि आगे जब कीन्ह पयाना। तइसइ तीसर पुरुष लखाना ।।
सोउ निज कर करि आप प्रहारा। अन्ध कूप परि लेइ सहारा ।।
बहुत काल देखेउँ येहि रूपा। बाहर कबहु कबहु रह कूपा ।।
एक दिवस जब बाहर आवा। जानन हित मैं प्रस्न चलावा ।।
किन्तु मूढ़ सुनि तुरतहिं भागा। पूर्व कर्म महँ पुनि सोइ लागा ।।

दो०—बहुत समय तेहि बन रहेउँ देखेउँ दुःखी अनेक।
दुःख निवारण होइ किमि निकट न आवा एक ।।१६८।।

तुमहू राम सोइ बन देखा। पर तिन्ह सम तुम्हार नहिं लेखा ।।
तुम बालक नहिं सोइ बन जोगू। भय पूरित जहँ बहु दुःख भोगू ।।
राम प्रस्न तब बीच उठावा। सोइ बन नाथ कहाँ मैं पावा ।।
गुरु बोले हे राम सुजाना। तेहि बन रहि अबहूँ नहिं जाना ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह संसार तात बन सोई। दुःख बिकार ते पूरित जोई॥
सिद्ध आत्मा ते यह होई। दीखत पुरुष तात मन सोई॥
ज्ञान रूप मैं करत प्रयासा। मुक्त होहिं आवहिं जे पासा॥
तिन्ह के अंगन कर प्रतिमाना। कहउँ तोहि सुनु राम सुजाना॥
कर प्रहार सोइ कर्म सकामा। प्रथमहिं कहेउँ तोहि जस रामा॥
अन्धकूप जहँ नाहि बिवेका। कदली वन सुख स्वर्ग अनेका॥
नारि सुतादि कंज बन सोई। सुत कर चाह कंटकहि जोई॥
सुत दारादि बिपिन दुःखदायी। नर बिनास हित अरुझत जाई॥
तिन्ह महँ जोइ बिवेक ढिग जाहीं। मिलिहहिं अवसि परम पद ताहीं॥
जे नहि करहिं बिवेक बिचारा। ते दुःख परि भटकहि संसारा॥
तप रत होहि भोग हित जोई। उत्तम बपु धरि आवत सोई॥
सत्रु समान हमहि जे जानहि। त्यागत भोग परम दुःख मानहि॥
मूरख चित्त होहि ते प्रानी। जे बिवेक लखि मानत हानी॥
होत बिवेक तजे अज्ञाना। तुष्टिमान मन अति हरषाना॥

दो०—तुमहुं बासना त्यागि सुत धारहु चित्त बिवेक।
जाते मिलइ परम पद दुःख नहि भेंटइ एक॥१६९॥

रूप बिवेक तात मैं सोई। सुनहु मिले मोहि जन पथ जोई॥
सहस नयन सहसहि कर सोहा। जानहु सोइ अभिलाषा मोहा॥
दुर्वासना त्यागि अभिमाना। अंग सहित सोइ तब बिनसाना॥
बन्धन जाइ बासना जोई। तब निर्वाण परम पद होई॥
बालक विनु बिचार जिमि भ्रमई। सहजहि सोइ नाना दुःख परई॥
कुसवरि कीट रचइ जिमि छेदा। तेहि फँसि मरत पाइ बहु खेदा॥
तइसइ तात बासना होई। जेहि परि मनुज बचइ नहि कोई॥
कपि समान अज्ञानी होई। मुक्ति प्रयास फाँस बस जोई॥
मूरख करइ न पूर्व बिचारा। येहि ते परत जाइ सोइ कारा॥
चलु तुम सास्त्र संत पथ जोई। जेहिते तुमहि सोक नहि होई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—चित्त आत्मपद होइ जब रागद्वेष सब जाइ।
देहादिक परिछिन्न प्रिय अहंकार बिनसाइ ॥१७०॥

आत्मज्ञान जब लगि नहिं होई। करहु अचार सास्त्र कह जोई ॥
आत्मतत्व कर रहे प्रमादा। दूर होइ नहिं दुःख बिषादा ॥
गुरु बोले रामहिं समुझाई। परब्रह्म ते चित उपजाई ॥
आत्म अनात्म रूप दोउ मानहु। सिन्धु तरंग समानहि जानहु ॥
ज्ञानी जानहिं ब्रह्म सरूपा। द्वैत न तिन्हहिं कतहुँ सुत भूपा ॥
होत राम जल कर जेहि ज्ञाना। लहरउ लागत ताहि समाना ॥
भिन्न भिन्न जग भासत ताही। जानहु तात ज्ञान जेहि नाहीं ॥
मन आदिक जो भासित होई। ब्रह्म ते भिन्न नाहिं कछु कोई ॥
नित्य चतुर्दिक पूर्ण अनन्ता। ब्रह्म रूप आतमा भासन्ता ॥
जस रुचि होइ प्रकट तस होई। नाना रूप प्रकासत सोई ॥

सवैया

जीव में चेतन ज्ञान सोई प्रिय पौन में कंपन होत है सोई।
पाहन में जड़ता जल में द्रवता अरु अग्नि में तेज समोई।
ब्योम में सून्यता स्वर्ग में भाव औ काल में नाम बिराजत जोई।
सोक में सोक खुसी में अनन्द सुनौ 'जगदीश' न और है कोई ॥

सर्ग के सर्जन में उत्पत्ति औ कल्प के अन्त में नासक जोई।
भाव अभाव जहाँ लगि भासत ताहि की ताग सी सक्ति पिरोई।
पत्र प्रसून लता तरु साखन में जिमि बीज बिकासक होई।
तइसइ ब्रह्म सुनौ 'जगदीश' बिचारि लखौ महिमा नहिं गोई ॥

दो०—जीव चित्त मन सबहि जिमि स्थित ब्रह्महि माहि।
भांति भांति फल-फूल तिमि एकहिं रस बिकसाहिं ॥१७१॥ क

गगन ब्रह्म प्रिय एकही चैत्य ते बिबिध जनाइ।
नहि बैचित्र न भेद कछु सोइ सब होइ दरसाइ ॥१७१॥ ख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सोइ सर्वज्ञ नित्य सोइ भासत। बृहद रूप होइ सोइ प्रकासत।
कलना मनन जो मन कहि जाई। सोइ ब्रह्म कर सक्ति सुहाई।
ब्रह्म ते भिन्न नाहिं मन होई। सोइ उत्थान रूप मन जोई।
जड़ अरु अजड़ मनहिं ते भाई। सकल जगत जेहि ते प्रगटाई।
प्रतियोगी ब्यवच्छेदक दोऊ। मन कल्पना नाहिं कछु कोऊ।
द्रवता सिन्धु लहर दरसाई। जीव फुरन ते जग प्रकटाई।
स्थित ब्रह्म सिन्धु तिमि सोई। जग तरंग बिनसे रह जोई।
कारन कर्ता कर्म अपारा। जन्म मरन कर सकल पसारा।
ब्रह्म रूप जानहु सब होई। आतमा सुद्ध रूप रह सोई।
लोभ मोह तृष्ना नहिं भाई। सोइ सर्ब आतमा कहाई।
स्वर्ण ते भूषित भूषण नाना। ब्रह्म ते तइसइ जग प्रकटाना।

दो०—प्रश्न कीन्ह तब राम अस गुरुवर कहहु बुझाइ।
मन महँ बन्ध जगाइ जो साँच न सोइ लखाइ ॥१७२॥

गुरु बसिष्ठ बोले मृदु बानी। बन्ध कल्पना करहि न ज्ञानी।
बन्ध न मोक्ष तात कछू कोई। ज्ञानहीन अस संसय होई।
रज्जु ज्ञान ते अहि नहिं भासत। ज्ञानी आतम स्वरूप प्रकासत।
परमात्मा ते मन उपजावा। बंध मोक्ष सोइ भाव जगावा।
दृश्य प्रपंच रचेउ पुनि सोई। सब कल्पना मात्र यह होई।
बाल कथा मूरख रुचि जागत। हीन बिचार जगत सब लागत।
राम कहेउ हे गुरुवर ज्ञानी। कहहु नाथ सोइ बाल कहानी।
सुनहु राम तोहिं कहौं बखानी। रहेउ एक बालक अज्ञानी।
कहेउ सेविका सन इमि सोई। कहहु अपूर्व कथा तुम कोई।
बुद्धिमती धात्री सुनु जोई। कथा अरंभ कीन्ह अस सोई।

दो०—सून नगर जहँ नृपति के तेजवान सुत तीन।
दुइ उपजे नहिं तात सुनु एक गर्भ नहिं लीन ॥१७३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भ आचरन प्रीति अधिकाई । कृति कर्त्ता धन हित मन लाई ।।
तन अर्थ चले इमि सोई । बुद्ध सुक्र सनि एकजुट होई ।।
त नगर ते बाहर आये । नगर निमार्ग रूप नियराये ।।
मल अंग थके पथ माहीं । तपत दिवाकर सीमा नाहीं ।।
कंटक मुख कमल सुखाने । लखि तरु तीनि छाँह बिरमाने ।।
नहु तरु कर अजब बखाना । दुइ नहिं जमे न एक रोपाना ।।
एक बृक्ष छाँह बिरमाने । जनु सचि यम सुरतरु सुखमाने ।।
ये फल कीन्हे रस पाना । पुष्प हार धारे मन माना ।।
र विश्राम चले जब आगे । दुपहर सूर्य तपन तब लागे ।।
नि तरंगिनि तिन्हहिं लखाई । जल बिहीन दुइ एक सुखाई ।।

दो०—क्रीड़ा करि अति सुख लहे बहुरि कीन्ह जलपान ।
दिन डूबत आगे चले भविष्यत् नगर लखान ।।१७४।।

मानिक सुवर्ण अधिकाई । मनहु सुमेरु सिखर दरसाई ।।
राकार मन्दिर एक भारी । मानिक हीरक जड़ित केवारी ।।
सि लखे आँगन बिस्तारा । मन बिचार अस रचउँ भँडारा ।।
हउँ रुचिर रसोई आई । बोलि बिप्रगन देउँ जेंवाई ।।
न भाँड़ सम्हारि चढ़ावा । सोरह सेर अनाज पकावा ।।
बिदेह बिमुख ऋषि खाये । सकल बिप्र जुरि भोग लगाये ।।
हिं जेंवाइ आप पुनि खाये । अजहूँ लगि तेहि पुर बिरमाये ।।
रमणीय कथा मैं गाई । समुझइ जे पंडित होइ जाई ।।
बाल सोइ साँचइ जाना । धात्री कर सुनि सकल बखाना ।।

दो०—जिमि न भिन्न संकल्प ते धात्रि सुनाई जोइ ।
तिमि अग्यान उर थिरत प्रिय जग दरसत तस होइ ।।१७५।।

बस जगत आस्था होई । बन्ध मोक्ष कल्पित यह जोई ।।
पवन नभ सरि देसादिक । भौतिक सृष्टि सँकल्प प्रमादिक ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नगर भविष्यत् बाल कहानी। सब संकल्प मात्र प्रकटानी।।
जिमि द्रवता होइ लहर लखाई। किन्तु होत जल ही जल भाई।।
तिमि आतमा मात्र सब होई। जग संकल्प रूप यह जोई।।
मल संकल्प त्यागि सब देहू। आत्म तत्व कर आश्रय लेहू।।
दृढ़ प्रयास महिमा नहिं गोई। परम सान्ति येहिते तोहि होई।।
रामहिं कहेउ बसिष्ठ बुझाई। नहिं पंडितहिं मोह भरमाई।।
करि कल्पना मूढ़ दुःख पावत। परछाहीं बालहिं भरमावत।।

सो०—राम प्रस्न तब कीन्ह का संकल्प कहाइ गुरु।
ऋषिवर उत्तर दीन छाया सहित बुझाइ इमि ।।१७६।।

राम पंच भौतिक यह देहा। परछाहीं सम जानहु येहा।।
रूप पिसाच अहंता जोई। नाना खेद जगावत सोई।।
राम एक परमात्मा जोई। राजत सबहि माहिं सुनु सोई।
रूप अभेद सोइ बिचराई। अहंकार भ्रम भाव जगाई।
मिथ्या ज्ञान होत बस कारन। सम्यक होइ तुम करहु निवारन
जल मँह द्रवता चक्र तरंगा। सबहि बारि कर रूप अभंगा।
यह नानात्व भाव सब मेटहु। प्रिय आनन्द रूप तुम भेंटहु।
सुद्ध बुद्धि करि मोह निवारहु। असतहि त्यागि सत्य तुम धारहु।
महिमा देखु मोह कर भाई। नासवान तन प्रीति जगाई।
मन सरीर नासे कल्याना। जेहि पोषण हित करत बहाना।
मिथ्या भ्रम ते मोह दृढ़ावा। आत्मतत्व मँह नहिं अस भावा।

सो०—तात मात्र भ्रम होइ नाना रूप लखात जो।
बन्ध मोक्ष कहँ कोइ ब्रह्म जीव नहिं भिन्न कछु ।।१७७।।

कतहुँ न द्वैत कल्पना कोई। सत्ता ब्रह्म बिराजत सोई।
जीवहिं होत आत्म अभिमाना। सोइ परिछिन्न कल्पना जाना।
देह अछेद रूप जे जानी। पावत दुःख सदा सोइ प्रानी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आतमा माँहि बिकार न कोई । बन्धन मोक्ष तहाँ नहिं होई ॥
नहिं आकार न द्वैत न छेदा । सोइ अनन्त अबिकार अखेदा ॥
देह नसे आतमा न नासत । पुष्प नसत नहिं गंध बिनासत ॥
सब कर देह तात मन होई । सक्ति होइ आतमा कर जोई ॥
तेहि मँह देह जगत बिरचाई । मन नासे बिनु जग न नसाई ॥
नसे सरीर नास तव नाहीं । होत सोक नाहक मन माहीं ॥

दो०—नित्य सुद्ध सोइ आतमा सदा रहत सुनु तात ।
मेघ छीन जिमि होत है किन्तु न पवन नसात ॥१७८॥

जिमि रबि बिम्ब कुण्ड मँह होई । बारि नसे नहिं नासत सोई ॥
कुण्ड बारि कतहूँ जौ जाई । रबि प्रतिबिंबउ चलत लखाई ॥
तन आतमा दोउ तिमि भाई । तन संग लागत सोउ चलाई ॥
घटाकास घट के बिनसाये । महाकास मँह जाइ समाये ॥
तिमि आतमा देह के नासत । पदहिं निरामय होइ प्रकासत ॥
वस्तु काल कर होइ अभावा । मूर्छा नाँउ मृत्यु बतरावा ॥
जग भ्रम रचनहार मन जोई । ज्ञान अग्नि ते नासत सोई ॥
नित्य सुद्ध अबिनासी रूपा । सोक न करहु कबहुँ सुत भूपा ॥
जन्म मरण संकल्प बासना । त्याग बिना न होइ हित अपना ॥
चिदाकास मँह तात बिराजहु । मिथ्या भ्रान्ति सबहि तुम त्यागहु ॥

दो०—तात अविद्या भाव ते बन्धन दुःख जनाइ ।
दृढ़ बिचार जागे बिना जग बन्धन नहिं जाइ ॥१७९॥

जगत अविद्या कर बिस्तारा । येहि जानहु हिमकर दीवारा ॥
ज्ञान अग्नि बिनु निवृति न होई । तात भ्रांन्ति त्यागहु तुम सोई ॥
जग भावना मात्र बस जानहु । कछु उपजा नहिं येतनहिं मानहु ॥
जस जस चित्त फुरइ यह भाई । तस तस जगत रूप दरसाई ॥
परि प्रमाद मन करइ प्रयासा । जिमि घुरान चेष्टा निज नासा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चित संकल्प बिकल्प भुलाई । आतमहि पलटि बिलोकत जाई ॥
तबहि नास ताकर सुनु होई । जो जग रोपि सदा दुःख देई ॥
यह संकल्प आवरन मेटहु । आतमतत्व दुति ते प्रिय भेंटहु ॥
मन किसान जग विपिन रचावा । सुख दुःख तरु मन सर्प बसावा ॥
जिन्हहिं विवेक होत नहिं भाई । मन अहि पकरि तिन्हहिं नित खाई ॥
खड्ग बिराग रूप तुम धारहु । करि अभ्यास तात येहि मारहु ॥

दो०—ऋषि बोले गुरु कहेउ अस डूबि चलेउ दिनमान ।
सबहि निसा विश्राम करि आये होत बिहान ॥१८०॥

तब मुनि नाथ प्रसंग चलावा । ब्रह्म ते सबहि चित्र प्रकटावा ॥
मन कर रचना जग यह जोई । लघु करि दीर्घ दीर्घ लघु सोई ॥
सबहि होत येहि मन कर रूपा । भांति भांति दरसत सुत भूपा ॥
स्वप्न सहस मन भ्रान्ति जगावै । निकट दूर पुनि पास दिखावै ॥
लवनिमेष जग रचत बिनासत । स्थावर जंगम होइ सब भासत ॥
देस काल कृति सक्ति अनेका । रूप विपर्यय एक ते एका ॥
भाव अभाव झूठ अरु साँचा । फुरन रूप मन नट जग नाचा ॥
चंचल मन जस निस्चय होई । इन्द्रिय नाच नचावत सोई ॥
मन बिनु देह चेष्टा नाहीं । बीज रूप होइ फल प्रकटाहीं ॥

दो०—माटीकर बहु रूप जिमि केवल माटी होइ ।
आत्मा में कल्पित जगत जानु आतमहिं सोइ ॥१८१॥

तीव्र संवेग मनहिं जो होई । बिनु विलंब प्रकटत तिमि सोई ॥
डार पात फल फूल पसारा । सबहि होत तरु रूपहिं सारा ॥
सिन्धु तरंग बारि जिमि होई । मनहि रूप तिमि उतपति सोई ॥
कर्ता कर्म क्रिया बिस्तारा । द्रष्टा दर्सन दृस्य अपारा ॥
मनहि रूप जानहु सब सोई । कंचन जिमि सब भूषण होई ॥
आतम प्रमाद बिनासत जबहीं । जगत द्वैत भ्रम भागत तबहीं ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन्द्रजाल सम जग दरसाई । अस कहि गुरु एक कथा सुनाई ।।
उत्तर पाद देस एक सोहत । बन बिसाल तहँ जन मन मोहत ।।
वृक्ष फूल फल ताल मनोहर । गुंज भृंग कूजत बिहंग बर ।।
सिद्ध देव विद्याधर बिहरत । मन्द पवन किन्नर स्वर लहरत ।।

दो०–महाकल्प तरु आदि ते पूरित सारा देस ।
लवण नाम हरिचन्द्र कुल उपजे एक नरेस ।।१८२।।

महा तेज तप जस जग छावा । देवादिक जाकर गुन गावा ।।
बुद्धिमान नृप परम उदारा । लोभ कुटिलता मन नहिं धारा ।।
निज दरबार एक दिन साजा । सिंहासन सुचि नृपति बिराजा ।।
बाजन बाजत बिबिध बिधाना । नृत्य करत जुरि सुन्दरि नाना ।।
बाजीगर तहवाँ एक आवा । अनुमति पाइ खेल दरसावा ।।
पुच्छ मयूर घुमावा जबहीं । बिबिध दृस्य देखेउ नृप तबहीं ।।
मानहु हरि माया अस ब्यापी । नृपहि लखानि मनोहर झाँकी ।।
तेहि छन मण्डलेस कर दूता । अस्व संग करि बिनय बहूता ।।
कहा नाथ यह हय बलवाना । जानहु उच्चैश्रवा समाना ।।
नृपति नाथ तोहिं हेतु पठावा । बड़ उपहार बड़हिं को भावा ।।

दो०–बाजीगर बोला तबहिं नृपति आप येहि जोग ।
येहि पर नाथ सवार होइ मुदित करहु सुख भोग ।।१८३।।

अस्वहिं नृपति बिलोकेउ जबहीं । मूर्छा आइ गिरे महि तबहीं ।।
भय बस सचिवहु नाहिं जगावा । हाथ पाँव नहिं हिले हिलावा ।।
मनहु पंक परि कमल न डोले । चारण भाट मौन नहिं बोले ।।
सेवक सचिव सोच मन कीन्हा । हे बिधि नृपहिं कौन दुःख दीन्हा ।।
कहेउ बसिष्ठ राम सुनु आगे । उभय घरी बीतत नृप जागे ।।
दिवकर कुपित राहु जिमि देखत । अहि करि कोप नेवलहिं पेखत ।।
जादूगरहि बिलोकेउ राजा । तोहिं अस करत न आई लाजा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नृप सन कृत्य उचित नहिं सोई । मोहिं सन तुम कीन्हेउ यह जोई ॥
मीन दुःखी जिमि बारि बिहीना । तइसइ दुष्ट मोहिं दुःख दीन्हा ॥
बिधि कर जग अनन्त गति होई । नाना रूप लखावत जोई ॥
उभय मुहूर्त लखा मैं जोई । काह कहौं बरनउँ का सोई ॥

दो०—ग्यानी होइ परि मोह मैं जेहि बिधि भयेउ बेहाल ।
प्राकृत जन किमि सहि सकइं महाजाल भूचाल ॥१८४॥

संबर दैत्य मनहु यह होई । नाना देस घुमावा जोई ॥
दुइ मुहूर्त अस दृस्य पसारा । मनहु सृष्टि सब भरी पिटारा ॥
पृथ्वी कर मैं बिदित नरेसा । पालत सबहि मोर आदेसा ॥
इन्द्र समान सिंहासन सोहत । देव सहस मंत्री मुख जोहत ॥
परम उदार न जाकर लेखा । तदपि आजु भारी भ्रम देखा ॥
जादूगर निज खोलि पिटारा । मोर पुच्छ बाहरहिं निसारा ॥
सम्मुख करि जब ताहि घुमावा । रवि प्रकास सम मोहिं दरसावा ॥
इन्द्र चाप जनु जगेउ अकासा । घोटक ठाढ़ लखेउँ निज पासा ॥
होइ सवार मैं डोर उठावा । अस्व मोहिं बहु दूरि घुमावा ॥
पहुँचे जाइ बिजन एक देसा । अपर ब्योग सत सिंधु असेषा ॥

दो०—लांघि भयानक देस बहु पहुँचावा सोइ ठाँव ।
घास बृक्ष तरु ताल नहिं जीव जन्तु नहिं गाँव ॥१८५॥

पावा कष्ट दीन होइ भारी । परि उजार तँह रात गुजारी ॥
प्रात होत दिनकर जब जागे । पाइ प्रकास चलेउँ तब आगे ॥
खग कलरव तरु देखेउँ नाना । तउ न अहार मिला एक दाना ॥
तरु बिलोकि मन हर्षित भयऊ । जनु रोगी कर प्रान न गयऊ ॥
जंबु बृक्ष तर बैठेउँ जाई । प्रलय सिंधु ऋषि बट जिमि पाई ॥
मोहिं तजि अस्व उहां ते गयऊ । निपट अकेल मोहिं दुःख भयऊ ॥
भोजन बारि नाहिं कछु पावा । कल्प रूप सोइ राति बितावा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाला एक मिली पथ जाता। कर धारे जंबू रस भाता ॥
कहेउ देबि मोहिं देहु अहारा। भूख हरे फल होत अपारा ॥
सोइ कही खल नृप तुम कोई। भूषन बसन बतावत सोई ॥

दो०—पिता हेतु लेइ जाउँ मैं नृपति मसान अहार।
तुमहि तबहिं देइहौं जब बनहु मोर भर्तार ॥१८६॥

दुर्दिन केहि नहिं काह करावा। छुधा पीर नहिं कोउ सहि पावा ॥
बोलेउँ देबी देहु अहारा। बनिहौ अवसि तोर भर्तारा ॥
भात सहित जंबू रस पावा। उदर डारि निज भूख मिटावा ॥
तब निज पितहिं पास लेइ गई। मोहि लखाइ सब बरनत भई ॥
नीक कीन्ह कहि पितु सुख माना। तेहि के गृह संग कीन्ह पयाना ॥
अस्थि रुधिर बगरा बहु मासा। देखेउँ मैं गृह के चहुँ पासा ॥
गर्दभ हस्ति स्वान कर खाला। परी तहाँ अजबइ सब हाला ॥
जस जमदूत नरक लेइ जाहीं। तइसइ मोहिं सब दृस्य लखाहीं ॥
गई संग लेइ ढिग निज माता। कही बिलोकु तोर जामाता ॥
उचित कीन्ह कहि सोइ सुख मानी। कीन्हेउँ मैं तहँ भोजन पानी ॥

दो०—ब्याह भयउ चण्डाल जुरि नृत्य कीन्ह हरषाइ।
मनहु मोर बहु जन्म के पाप प्रकट भये आइ ॥१८७॥

काह कहौं विवाह कर हाला। मैं प्रकटेउँ तहँ होइ चण्डाला ॥
आठ मास बीते येहि भाँती। गर्भवती तब भई अराती ॥
कन्या त्रय सुत पुनि दुइ बाला। क्रम ते जन्म लीन्ह तेहि काला ॥
जाल परे पक्षी की नाईं। बिबस होइ बिचरेउँ मैं भाई ॥
पायेउँ तहँ मैं कष्ट अपारा। बन्दी भोगत परि जिमि कारा ॥
असुचि अहार रुधिर कर पाना। सब बिधि पायेउँ दुःख निदाना ॥
येहि बिधि बहुत काल जब बीते। बान्धव लागे प्रान पिरीते ॥
पावस सरि सम तृष्णा बाढ़ी। जागी प्रीति हृदय अस गाढ़ी ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कछु दिन बीतत परा अकाला । तेहि कर काह बतावौं हाला ॥
द्वादस सूर्य झरत जनु आगी । जनु दावाग्नि बिपिन महँ लागी ॥

दो०—दुःखी होइ बन जीव अति तँह ते कीन्ह पयान ।
महाउपद्रव भयउ जिमि प्रलय काल प्रकटान ॥१८८॥

येहि बिधि बहुतक मरे बिलाये । सन्तति संग हमहुँ दुःख पाये ॥
घर दर त्यागि सबहि तब भागे । लगी डोर पाछे अरु आगे ॥
किन्तु न कतहुँ अन्न जल पावा । नेह गेह संबंध भुलावा ॥
तलफत सब कहि आपू आपू । भाइ बन्धु कँह माई बापू ॥
बीति गये इमि काल बहूता । खीन भये तन रहा न बूता ॥
नृपति सभहिं अस कहेउ बुझाई । दुसह दसा नहिं कछु कहि जाई ॥
भूलेउ मोहिं नृपति अभिमाना । मन चण्डाल भाव दृढ़ आना ॥
कष्ट असह्य होन जब लागे । कुल कलत्र केतिक तजि भागे ॥
सहि नहिं सके बिपति अपमाना । गिरि ते कूदि तजे बहु प्राना ॥
बाज करइ जिमि खग अहारा । हिंसक पसु बहुतक जन मारा ॥
बिरमेउँ जाइ देखि तरु छाहीं । लघु सुत आइ कहा मोहिं पाहीं ॥
तात देहु मोहिं माँस अहारा । छुधा कष्ट नहिं जाइ सम्हारा ॥
सुतहि छुधित लखि मैं दुःख पावा । बिवस होइ अस बचन सुनावा ॥
काह देउँ सुत कछू नहिं पासा । लेउ खाउ चाहउ मम माँसा ॥

दो०—अस कहि लकरी जोरि मैं दीन्ही आगि लगाइ ।
सिद्ध होइ मम मास तब छुधित पुत्र सोइ खाइ ॥१८९॥

सुत कर दुःख जब देखि न पावा । आतम दाह कर कीन्ह बनावा ॥
अग्नि प्रवेस कीन्ह मैं जबहीं । तेज लपट लागी मोहिं तबहीं ॥
कंपित तन सचेत मैं भयऊ । तुरिया बजी सपन जिमि गयऊ ॥
प्रलय छोभ देखेउँ ऋषि जइसे । आपन व्यथा कही मैं तइसे ॥
एहि बिधि ज्ञान मोहि जिमि आवा । जो कछु भयउ ताहि बतरावा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुरु बोले सुनि नृपति बखाना। सांबरीक भा अन्तर्धाना ॥
मंत्री सभा बुद्धि चकरानी। ईस्वर कर गति जाइ न जानी ॥
हमहूँ तात लखेउ सब हाला। मोह ग्रसित जब भये नृपाला ॥
मोह अविद्या अणु मन होई। फुरि बहु रूप लखावै सोई ॥
उपसम होइ राम मन जबहीं। भला जीव कर जानहु तबहीं ॥
येहि ते मनहि कल्पना त्यागहु। तात आत्मपद माहिं बिराजहु ॥

सो०—कहेउ बसिष्ठ बुझाइ चित संवेदन फुरेउ जोइ।
कलना रूप रह्याइ तेहि ते दृस्य जनाइ सत ॥१९०॥

आत्म प्रमाद मोह सोइ पावा। चित्त फुरन ते जगत लुभावा ॥
मन असत्य जोइ जग प्रकटावत। जेहि ते नाना दुःख सब पावत ॥
सोइ मन जगत बासना त्यागी। होत आत्मपद कर अनुरागी ॥
तब रबि किरन तमस जस मेटत। दुःख बिनसाइ तात सुख भेंटत ॥
नहि जग अस पदार्थ सुत कोई। दृढ़ अभ्यास मिलइ नहिं जोई ॥
मूरख आत्मपदहि भय पावत। झूठ जगत मँह प्रीति लगावत ॥
परि बासना मलिन मन जोई। नाना भ्रम जग जानत सोई ॥
जस मनकर सुनु निस्चय होई। ताहि भांति प्रगटत होइ सोई ॥
मोह जगत कर कारन भाई। जेहि परि जीव सतत भरमाई ॥
ग्यान कुठार बासनहि काटहु। जोइ आवरण आत्मपद छाँटहु ॥

सो०—मानव हरिन फंसाइ तात बासना जाल मँह।
जगत बिपिन भटकाइ जेहि कर ओर न छोर कहुँ ॥१९१॥

जोइ बिचारि बासना नसावा। सोइ परमात्म जोति तब पावा ॥
मेघ रहित नभ जिमि रबि भासत। चित्त बासना हीन प्रकासत ॥
मनहि राम यह मानव होई। देह जड़हि जानइ का कोई ॥
देह कृत्य जानहु मन करनी। मनहि रूप सारी यह धरनी ॥
गिरि नभ पवन अग्नि जल जोई। सूर्यादिक मन भासित होई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नाना भांति बासना जोई। नाना रूप धरत मन सोई॥
नट समान बहु स्वांग रचावत। दीरघ लघु लघू दीर्घ बनावत॥
मनहि बृत्ति जेहि भांति दृढ़ाई। सोइ सत्य होइ भासत भाई॥
गये राति महँ बारह साला। नृप हरिचन्द केर अस हाला॥

दो०—इन्द्रहि एक मुहूर्त महँ भयउ एक युग भान।
मन दृढ़ निस्चय होत अस केहि बिधि करउँ बखान॥१९२॥

बिप्र इन्द्र के सुत दस जोई। ब्रह्मा पद पाये इमि सोई॥
सुखी मनहिं चिन्ता जब जागत। रौरब नरक सहस तब लागत॥
दुःख परे मन सान्त जो होई। तात लगत दुःख हू सुख सोई॥
इन्द्रिय बिचरत मन अनुसारा। मन टूटे नहिं मिलइ सहारा॥
ताग टुटे बिखरत जस माला। इन्द्रिय कर जानउ सोइ हाला॥
स्वच्छ सूक्ष्म सम भावहि जोई। आतमातव साक्षी यह होई॥
निर्विकार होइ नित्य रहाई। सब पदार्थ कर ज्ञाता भाई॥
तन ते सूक्ष्म अहं ते हीना। मन फुरि जगत रूप सोइ लीना॥
जगत सकल आतमा कर चिंतन। सक्ति बिराजत सब महँ चेतन॥

दो०—पवनहिं स्पन्दन सूर्य औ अग्नि आदि महँ जोत।
जल में द्रवता गगन में सून्य रूप सोइ होत॥१९३॥

सकल पदारथ जोइ जग होई। चेतन सक्ति बिराजत सोई॥
नहि अनेकता तेहि महँ कोई। तात मनहिं ते भासित होई॥
मनहिं पदारथ ज्ञान करावै। जिह्वा ते नाना रस पावै॥
मन अन्यत्र होइ जौ भाई। भोजन कर कोउ स्वाद न आई॥
तइसइ नेत्र आदि सब होई। मन के बिना सिद्धि नहि कोई॥
इन्द्रिय ते नहि मन उपजाई। तउ मन ते सोइ उतपति पाई॥
इन्द्रिय बिषय जगत सब जानहु। सब कर मन ते उतपति मानहु॥
जे महान मन बस करि डारा। तिन्हहिं अनेक प्रणाम हमारा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुन्दर रूप मृतक तेहि लागत । तात आत्मपद मँह जोइ जागत ।।
इष्ट अनिष्ट राग नहि द्वेषा । रंच होत नहिं मोह कलेसा ।।

दो०–बीतराग एक बिप्र बन बैठेउ ध्यान लगाइ ।
तोरि गये क जंलु कोउ किन्तु न सोइ जनाइ ।।१९४।।

मन कर गति अस अदभुत होई । सुखहिं दुःख दुख सुख करि जोई ।।
कथा सुनत सोचइ मन आना । तात अर्थ सोइ का तब जाना ।।
जस फुरना तस तस होइ भासत । नासत सोइ सोइ दृस्य प्रकासत ।।
अन्तःकरण सृष्टि जोइ होई । मनकर भ्रम प्रिय भासत सोई ।।
जल तरंग जिमि तरु फल पाता । मन तिमि जागत स्वप्न बराता ।।
जल तरंग नट स्वांग सँवारत । मन बासना रूप बहु धारत ।।
लवण नृपति भ्रम मिली पिसाची । घटना सबहि लागि जिमि साँची ।।
तइसइ चित भ्रम जग दरसाई । मूरख सोइ जेहि साँच जनाई ।।
जन्म मरन मन फुरनहि होई । सुत होइ जनक जनक सुत सोई ।।
निराकार जोइ जीव कहाई । मन प्रभाव सोइ रूप गहाई ।।

दो०–मनहिं मनन जोइ मूढ़ता पवच बासना जोइ ।
भटकत जीव संकल्प परि तेहि ते दुःख सुख होइ ।।१९५।।

तेल कढ़इ तिल कोल्हू पाये । मन पदार्थ सुख दुःख प्रगटाये ।।
देस काल मन माहिं बसाई । काल क्रिया संकल्प दृढ़ाई ।।
राम आत्म पद स्थित जोई । क्षोभ लखे नहि दुःख कछु होई ।।
वीर अस्व रन माहिं नचावत । तइसइ ताहि क्षोभ नहि आवत ।।
बिनु बिराग मन सान्त न होई । येहि मँह तात न संसय कोई ।।
मन करि अचल आत्मपद ध्यावत । बंधन मेटि मोक्ष पद पावत ।।
मन ते मनन दूरि बिन जाये । जीवहि कबहुँ सान्ति नहिं आये ।।
जग बिष बेलि बीज सम भोगा । तेहि परि कष्ट होत बहु रोगा ।।
परि जल भँवर भ्रमत तृन जइसे । मूढ़ चित्त भरमत सुनु तइसे ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—महा ब्याधि येहि चित्तकर निबृति कइसे होइ।
　　औषध उत्तम तात यह करहु बतावौं सोइ ॥१९६॥

यत्न साध्य औषध पुरुषारथ। सिद्ध होइ पावइ सहजहिं पथ॥
तात चित्त बैताल बिनासहु। रस संयुक्त पदारथ त्यागहु॥
होत वांछित कर प्रिय त्यागा। जगइ अचल पद मँह अनुरागा॥
लोहा ते लोहा कटिजाई। मन ते मनहिं बिनासहु भाई॥
सुभ गुन धारि अवस्तुहिं त्यागहु। आत्मतत्व हित चित अनुरागहु॥
लेइ सतकर्म सुद्धता जोई। चेतन संबित हित रुचि होई॥
सब बासना त्याग करि राखहु। होइ एकाग्र परम पद चाखहु॥
इच्छा त्यागि सकइ नहिं जोई। जानहु बिषम कीट सोइ होई॥
मूढ़ असुभ को सुभ करि जानहिं। प्रबुध सुभासुभ दोउ पहिचानहिं॥
तात सुभासुभ दो बलवाना। जोइ जीतइ सोइ होइ महाना॥

दो०—येहि ते सत्वर जतन करि चित्तहिं जीतहु तात।
　　अचित भये ते आत्मपद बिनु प्रयास मिलि जात ॥१९७॥

जिमि घन हटे दिवाकर भासत। चित अभाव तिमि सोइ प्रकासत।
धिक् तेहि जे न चित्त बस कीन्हा। गर्दभ रूप जन्म सोइ लीन्हा।
मन निज बस करि राखइ जोई। आपन मित्र आप सोइ होई।
बसीकरन मन इहै उपाऊ। दृस्य ओर न होइ चित चाऊ।
आतम चिन्तना करि चित मारहु। इच्छा तजि उपसम करि डारहु।
तब गुरु सास्त्र अपेक्षा नाहीं। पार भये नौका केहि चाही।
मन कल्पेउ निस्चय करि देहा। मूरंख सोइ जो लावइ नेहा।
चिदाकास सुचि चित्त लगावहु। आत्मा हित मन बेग जगावहु।
अस दृढ़ भये तात अभ्यासा। चेतन मात्र रही तव पासा।
रहइ नाहिं जब जगत भावना। तत्व बोध कर होत पावना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—चित ते चित्तहिं ग्रास करि पुरुषारथहिं जगाइ ।
अचित होत अद्वैत पद तात मिलिहि तोहिं आइ ॥१९८॥ क
दृश्य ओर ते निबृत करि निज संबेद प्रवाह ।
आतमा माहिं लगाउ सोइ आन नाहि कोउ राह ॥१९८॥ ख

नासत छोभ होइ कल्याना । बिजय त्रिलोकी त्रिनहिं समाना ॥
निज चित जोइ उलटि नहिं पावा । सोइ नर येहि जग अभय कहावा ॥
जन्म मृत्यु अनुभवहिं जे प्रानी । जीव रूप आपुहिं मन मानी ॥
तिन्हहिं प्रमादहिं ते सोइ भासत । असत रूप होइ सत्य प्रकासत ॥
राम मनुज मन रूप सरीरा । मोक्ष भये बिनु फिरत अधीरा ॥
तात चित्त जउ स्थिर होई । तुमहिं मृत्यु कर भय नहिं कोई ॥
रहित बिकार बुद्ध सुचि रूपा । भ्रम प्रभाव भटकत परि कूपा ॥
तात बंधु सुत सेवक जोई । नेह केन्द्र जानहु सब होई ॥
इन्हहिं दुःखी लखि क्लेस जो होई । तात चित गति जानहु सोई ॥
बार बार मैं स्वयं बिचारा । उपसम छाड़ि न दूसर चारा ॥

दो०—सास्त्र सन्त सब कहत हैं कोटि करहु किन कोइ ।
जब लगि दृस्य लखाइ चित तब लगि सान्ति न होइ ॥१९९॥ क
नित्य सुद्ध सर्वात्मा प्रति हिय चैत्याकास ।
परम सान्त चैतन्य होइ करइ दुःख कर नास ॥१९९॥ ख

चेतन चक्र ब्रह्म आकारा । बृत्ति दृस्य आकास पसारा ॥
जब संबेग मनहिं कर होई । तात कहाँ दुःख ठहरइ कोई ॥
मन कर मनन भाव सोइ नासत । भोग जबहि रमणीय न भासत ॥
तब जानहु तेहि के अँग टूटे । लागहि तबहि भोग सब झूठे ॥
मैं तुम आदि भावना जोई । मनोमात्र जानहु प्रिय सोई ॥
दृढ़ बिचार ते मिटइ बासना । परम तत्व कर होत पावना ॥
मनहि जीव कर सत्रु कहाई । इच्छा करि संकल्प दृढ़ाई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जब इच्छा जागइ नहिं कोई । जानहु आप निबृत तब होई ॥
इंधन बिना अग्नि नहिं ठहरइ । इच्छा बिनु यह मन नहिं लहरइ ॥
त्यागहु निज संकल्प कल्पना । तब आपहिं नासइ मन अपना ॥
चित बिस्तार अनर्थ करावै । राखइ बाँधि सान्ति सोइ पावै ॥
बालक जानि तोहि समुझावौं । तात मुक्ति कर राह बतावौं ॥
मन अरि दीन्ह तोहिं भय भारी । कल्प कल्पना आपद सारी ॥

दो०—मृगतृष्णा के बारि सम आपद सबहि लखात ।
मन के स्थिर भये ते क्षोभ स्वयं मिटि जात ॥२००॥

राम प्रलय कर पवन चलाई । सप्त सिंधु मरजाद मिटाई ॥
द्वादस सूर्य अग्नि बरसावै । मन बिहीन को बिघ्न न आवै ॥
मन कर बीज जगत तरु जागा । सातहु लोक पात सम लागा ॥
सुख दुःख जेहिकर फल सम भाई । मन संकल्प रहित बिनसाई ॥
तात जबहिं संकल बढ़ाई । अनरथ कर कारण होइ जाई ॥
जिमि संकल्प रहित नृप भावा । जेहि ते सोइ परम पद पावा ॥
मन के छीन भये यह जीवा । परमानँद पावै नहिं सींवा ॥
सन्तोषहिं ते मन बस होई । मिलि है तोहि परम पद सोई ॥

दो०—नित्य निरीह उदोत सम पावत परम अनन्त ।
निर्मल कोउ विकार नहिं रहित बिकल्प भनन्त ॥२०१॥
तीव्र होत संबेग जेहि मन देखत प्रिय ताहि ।
पर अज्ञान के दृस्य ते जन्म मरण दरसाहि ॥२०२॥

मन निस्चय जोइ अनुभव करई । जइसे फुरन रूप सोइ धरई ।
हिम कर सीतल उज्वल रूपा । काजल धारत कृष्ण सरूपा ।
राम कहेउ बरनहु गुरु सोई । चंचल मन निबृत किमि होई ।
अस सुनि कहेउ बसिष्ठ बुझाई । कथन तुम्हार साँच यह भाई ।
मन कर चंचल होत स्वभावा । चंचलता बिनु मृतक कहावा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तप अरु सास्त्र बतावत सोई । मन मृत रूप मोक्ष पद होई ॥
मन के नसे सकल दुःख नासत । बिनु बिचार चंचलता भासत ॥
किन्तु बिचार ते सोइ नसाई । परम सार आपहिं मिलि जाई ॥
सकल अविद्या त्यागहु भाई । सत्य असत्य ज्ञान चित लाई ॥
असतहिं ते प्रमाद जड़ होई । सत्य बिचार सक्ति नहिं गोई ॥

दो०—जेहि हित करइ प्रयास मन सोइ पद पावै तात ।
चित्तहि चित ते थिर भये पद असोक दरसात ॥१०२॥

भाव अभाव रूप संसारा । मन कर उतपति जानहु सारा ॥
मन उपसम हित करहु प्रयासा । येहि तजि आन नाहि कोउ आसा ॥
प्रथमहिं तात बतावा जोई । मन ते मन कर निग्रह होई ॥
जन भव सागर परा अपारा । तृष्णा रूप सेवार पसारा ॥
येहि ते अधः जात चलि सोई । राग द्वेष भँवर जँह होई ॥
होइ सवार सुद्ध मन नावा । विनु अस भये पार नहिं पावा ॥
आपन मन बन्धन कर कारन । छेदन करि सोइ करहु निवारन ॥
दृस्य त्याग बैराग्य प्रयासा । होइ अविद्या कर तब नासा ॥
त्यागत भोग बासना भाई । जगत बासना आप नसाई ॥
भाव अभाव जगत बिनु त्यागे । निर्विकल्प सुख रूप न जागे ॥
बिनसै दृस्य वस्तु कर भावा । भाउक मन सहजहिं बिनसावा ॥

दो०—जोइ संबेदन फुरइ सुत सोइ जगत कहि जात ।
येहि कर होइ बिनास जब तब निर्वाण सुहात ॥१०३॥

होत दुःख कारन संवेदन । राम करहु येहि कर तुम छेदन ॥
राग द्वेष जो कछु प्रगटाई । मन कर सोइ अबोधता भाई ॥
जदपि सबहि मृगतृष्णा रूपा । त्याग करहु इन्हकर सुत भूपा ॥
सबहि अवस्तु रूप तुम मानहु । नित्य तृप्त आपुहि को जानहु ॥
अस कहि गुरु रामहिं समुझावा । भ्रान्ति रूप बासना जगावा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज्ञानिहि कबहु अवस्तु न भासत । आतमतत्व तेहि सतत प्रकासत ॥
जो अद्वैत सुद्ध सम सास्वत । तात तुम्हार तुमहि होइ राजत ॥
कर्त्ता अउर अकर्ता भेदा । ग्रहन त्याग उपजत सुख खेदा ॥
त्यागि विकल्प राम तुम दोऊ । आत्म स्वरूपहिं स्थित होऊ ॥
जोइ आवइ कछु क्रिया अचारा । तिन्हकर सतत करहु निस्तारा ॥
कर्ता भोक्ता आप न मानहु । मिथ्या मायावत सब जानहु ॥
असत माहिं प्रिय का अनुरागा । झूठइ दोउ भोग अरु त्यागा ॥

दो०—बीज सकल संसार कर तात अविद्या होइ ।
देखहु मात्र प्रमाद बस लागत साँचहि सोइ ॥१०४॥

फुरइ वासना चित मह जोई । सोइ मोह कर कारन होई ॥
माटी चाक चढ़ाइ कुम्हारा । भांति भांति विरचत आकारा ॥
चित्तउ कर गति तइसइ होई । विविध जगत उपजावत जोई ॥
देखत सुघर लगइ संसारा । बाँस सदृस जँह पोल अपारा ॥
जइसे जाइ सरित जल धारा । तइसइ यह संसार अपारा ॥
गहइ जो चलइ अविद्या कोई । पचि पचि मरइ गहन नहिं होई ॥
भासत मंजु किन्तु अति खीना । प्रकट लखाइ तदपि मृग तिसुना ॥
माया जेहि ते जग यह होई । कतहुँ विकार दीर्घ कहुँ गोई ॥
जड़ स्वरूप चेतन होइ भासत । असत तदपि होइ सत्य प्रकासत ॥
विस्मृत छन भ्रम प्रकटत भारी । आत्म प्रकास घिरत अँधियारी ॥
जिमि उलूक रवि में तम देखत । तिमि मूरख न आतमहिं पेखत ॥
असत रूप देखइ संसारा । मृगतृष्णा कर सरि विस्तारा ॥

दो०—बिबिध रंग सूछम बिसम तात अविद्या जोइ ।
कठिन मंजु चंचल तिय छोभ सर्पिणी होइ ॥
तृष्णा जिह्वा ते हरत सोइ सबहि कर प्रान ।
दीप सिखा सम जरत है नेह नसे निर्वान ॥१०५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सवैया

मेघ के गाँउ बसै बिजुरी तस मूरख छाँह अविद्या के बासा ।
भोग में प्रीति तृषा न जगै तब होत है याकर आपहिं नासा ।
भारी प्रयास ते भोग मिलै दुख बाढ़त होत अनर्थ प्रकासा ।
राम बिसारहु याते इन्हैं धिक् ताहि करै जोइ भोग प्रयासा ।।

सुधि आये अनिष्ट कोउ सपना । दुःख कर गेह बनइ चित अपना ।।
रचइ त्रिलोक मनहि मँह जोई । तात अविद्या अइसइ होई ।।
कल्प निसा विरही हित होई । सुखी हेतु छन बीतइ सोई ।।
कोउ पदार्थ अस नहिं जग माहीं । जेहि कर होत विपर्यय नाहीं ।।
निर्विकार सुचि नहिं आकारा । तत्व अद्वैत अव्यक्त अपारा ।।
कर्ता भोक्ता भाव जगाये । तेहि मँह स्पन्द तात फुरि आये ।।
मात्र अविद्या कारण होई । जगत सकल दरसत यह जोई ।।

दो०—जइसे दीपक जोति ते नैनन दरसत रूप ।
राम अविद्या ते तिमिहि प्रकटत जगत सरूप ।।१०६।।

मनोराज सम झूठइ सोई । स्वप्न सृष्टि सम भासत जोई ।।
सपना जगत कोउ सच नाहीं । कँह जल मृग मरीचिका माहीं ।।
मृग समान धावत जग प्रानी । झूठ पदार्थ झूठ जिमि पानी ।।
तिसुना सान्त कहाँ तब होई । सत्य पदार्थ नाहि जब कोई ।।
तात अविद्या जड़वत जोई । जगदाकार प्रगट भइ सोई ।।
सोइ आतमा ते प्रकटाई । तेहि सत्ता ते जगत रचाई ।।
हि जग जीव यंत्र सम भाई । त्रिगुण बासना बन्हि भटकाई ।।
घृत इंधन ते बाढ़त आगी । तिसना बिषय पाइ यह जागी ।।
अग्नि अविद्या नासइ तबहीं । परइ बिवेक बारि प्रिय जबहीं ।।
इ तुषार सदृस यह भाई । गहन चढ़इ कछु नाश न आई ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—लघु दीपक के जरत जिमि तम आपहिं बिनसाइ ।
जागइ राम बिचार जब भ्रान्ति नाहिं रहि जाइ ॥१०७॥

सीप रजत रबि तेजहिं पानी । असत अविद्या मति भरमानी ॥
दीर्घकाल सपना संसारा । मूरख भटकि परत येहि कारा ॥
गगन बिचरि खग भूपर आवै । दाना चुंगत जाल परि जावै ॥
तिसना भोग जीव भरमाई । लागइ सुखद अन्त दुःखदाई ॥
जोत लोभ परि जरइ पतंगा । तइसइ होत अविद्या संगा ॥
दृस्यमान जगकर यह हाला । जीव जहाँ परि होत बेहाला ॥
मिथ्या भाव जगत भरमाना । बिस्मृत भयउ सत्य कर ज्ञाना ॥
चिदानन्द अनुभवहिं प्रकासत । तबहिं अविद्या कर तम नासत ॥
धीरवान धर्मात्मा जोई । सोउ अविद्या के बस होई ॥
तेउ नहिं तजि पावत अबिचारा । जेहि ते परि भोगत दुःख कारा ॥

दो०—स्वप्न सदृस जानहु येहि निराकार है जोइ ।
राम स्वरूप प्रमाद कर नाउँ अविद्या होइ ॥१०८॥ क

कहेउ राम गुरुदेव जौं जगत अविद्या होइ ।
निबृति येहि ते होइ किमि नाथ बतावो सोइ ॥१०८॥ ख

कहेउ बसिष्ठ तात सुनु सोई । रबि ते हिम बिनास जिमि होई ॥
आत्म प्रकास बिनासइ ताही । तब भ्रम रूप नाहि दरसाहीं ॥
जब लगि आत्म दरस नहिं होई । नाना भ्रम दरसावइ सोई ॥
घाम ते छीन होत जिमि छाया । ज्ञान ते नसइ अविद्या माया ॥
दृस्य चाह प्रिय होइ अविद्या । नास भावना जानहु विद्या ॥
विद्या नाम मोक्ष कहि जाई । रबि सम आत्म प्रकास जगाई ॥
पूछेउ राम दृस्य यह जोई । प्रगट अविद्या ते सब होई ॥
आत्म भाव ते पावत नासा । आत्मा कस प्रभु करहु प्रकासा ॥
गुरु बोले हे राम सुजाना । सुनहु ध्यान धरि करौं बखाना ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चैत्योन्मुखता रहित जो होई । होत समान सर्वगत जोई ॥
अनुभव रूप असब्द चेतना । परमेस्वर सोइ होइ आतमा ॥

दो०—ब्रह्मा ते तृण लगि जगत सबहि आतमा होइ ।
होत अविद्या मात्र भ्रम येहि ते नहिं कछु सोइ ॥१०९॥

प्रति सरीर अबिनासी राजत । मनोकल्पना तेहि मँह छाजत ॥
आत्म तत्व ते भिन्न न सोई । जनमत मरत नाहिं कहुँ कोई ॥
नहि बिकार नहि कलमष कोई । आत्मतत्व दुति राजत जोई ॥
अबिनासी अद्वैत सुचि भाई । आपहि में सोइ सदा रहाई ॥
सुद्ध सर्वंगत चिन्मय जोई । सान्त अनित्य द्वैत नहिं कोई ॥
निरुपद्रव नित एक समाना । ताहि तात आत्माकरि जाना ॥
कलना सक्ति जगत तेहि माहीं । नाम ताहिकर मन कहि जाही ॥
द्रवता सिंधु लहर जिमि भाई । आत्म चैत्यता मन प्रकटाई ॥

दो०—सोइ संकल्पहि कल्पना दृश्य रूप दरसाइ ।
ताहि अविद्या कहत हैं भये सँकल्प नसाइ ॥११०॥

दृस्य ओर चितबृति जब जाई । बेलि अविद्या तब पनपाई ॥
जब सोइ बृत्ति स्वरूप जगाई । तबहिं अविद्या आप नसाई ॥
होइ सँकल्प ब्रह्म मैं नाहीं । मन दृढ़ बन्धन माहिं बँधाई ॥
सबहि ब्रह्म संकल्प दृढ़ाई । सहजहिं जीव मुक्ति तब पाई ॥
बन्धन हेतु दृस्य संकल्पा । सर्व ब्रह्म सोइ मुक्ति बिकल्पा ॥
सास्त्र सन्त अस जुगुति बतावें । करौ सोइ तुम जोइ मन भावै ॥
आपुहि भव ते पृथक् जो मानत । हाड़ मांस बपु आपन जानत ॥
नाहि जो दुःखी होइ नहिं खीना । ताहि मुक्त तुम जानु प्रवीना ॥
रबि मनि माहि तमस नहिं कोई । तइसइ तात आतमा होई ॥

दो०—धरती पं राह पुरुष के नभ नीलिमा लखात ।
तात अविद्या आतमहिं मूरख तिमि कलपात ॥१११॥ क

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूछेउ राम महामुनि मोहिं कहउ समुझाइ।
केहि कर छाया परत नभ जोइ नीलिमा लखाइ ॥१११॥ ख

गुरु बोले नहि छाया कोई। नभ मँह कोउ तमस नहिं होई ॥
पोल मात्र यह सून अकासा। तेज रूप ब्रह्मण्ड प्रकासा ॥
होत प्रकास सरूपहिं जोई। तात अन्हार कहाँ तब होई ॥
दृढ़ बासना नीलिमा जोई। येहि ते भिन्न नाहि कछु कोई ॥
मन्द दृष्टि नीलिमा लखाई। दिब्य दृष्टि सोइ पोल जनाई ॥
सत्ता ब्रह्म लखहिं तिमि ज्ञानी। लगत अविद्या सोइ अज्ञानी ॥
आत्म दृष्टि जेहिकर क्षय होई। सत्ता लखत अविद्या सोई ॥
नसत अविद्या अचल भये चित। यह भ्रम जगत साँच मूरखहित ॥
फुरन रहित जब मन यह होई। लागत जगत भावना सोई ॥
सोइ भावना अविद्या जानहु। ताहि मोहकर कारन मानहु ॥
आतमा ओर भावना जाई। तबहिं अविद्या तात नसाई ॥
बार बार चिन्तन जब होई। कहत भावना है प्रिय सोई ॥

दो०—सेवक सचिवादिक जिमि नृप सेवा हित होइं।
मन सम्मुख इन्द्रिय बिनत काज करत तिमि सोइ ॥११२॥

त्यागहु बिषम पदार्थ भावना। करहु आतमपद हेतु चिन्तना ॥
निर्विकार प्रिय तोर स्वरूपा। ब्रह्मतत्व सास्वत सुत भूपा ॥
तुम जनि सोक राम मन लावहु। पौरुष ते बासना नसावहु ॥
करहु आतमपद कर अभ्यासा। मिटइ दृस्यभ्रम केर तमासा ॥
जग बासना मोह उपजावत। संसृति चक्र माहिं भरमावत ॥
जागत जबहिं स्वरूप प्रमादा। घेरत बन्धन बिबिध बिषादा ॥
पावत बृद्धि बासना भारी। नाना बिधि संबंध बिचारी ॥
कुल परिवार तात सुत दारा। धन वैभव संसार अपारा ॥
जेहि तन अस जल्पना जगाई। सून्य रूप तेहि जानहु भाई ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिमि तृन उड़इ पवन संग पाई । तिमि बासना सरीर उड़ाई ॥
मैं तुम आदि मूढ़ मन भासत । ज्ञानवान चित ब्रह्म प्रकासत ॥
आत्म भावना करु मन माहीं । येहि ते जग भ्रम आप नसाहीं ॥
उभय बिकल्प रज्जु महँ होई । ज्ञानिहिं कबहुँ न भासत कोई ॥
मूरख रज्जु सर्प करि मानत । ज्ञानवान सब ब्रह्महि जानत ॥
तुमहूँ राम ज्ञान चित धारहु । जगत बासना सकल निवारहु ॥
तात बासना फांसत तबही । मन अभिमान बिराजत जबहीं ॥

दो०—होइ न तोहिं अभिमान कछु देह मूक जड़ रूप ।
हाड़ मांस के पिंजरहिं नहिं कछु होत अनूप ॥११३॥

जब लगि होत देह अभिमाना । दुःख सुख कर तब बनत बिधाना ॥
घट बिनसे न अकास नसाई । देह नसे आतमा नहिं जाई ॥
सुख दुःख मात्र अज्ञान कल्पना । तजि येहि तुम स्वभाव गहु अपना ॥
राम देखु अचरज यह भारी । ब्रह्म तत्व जग सुरति बिसारी ॥
भरमउ नाहिं अविद्या माहीं । जेहि ते सब अनरथ प्रकटाहीं ॥
मन के फुरे चन्द्र बिष बरसत । हरित भूमि मरुथल होइ दरसत ॥
स्वप्न माहिं जिमि सुख दुःख होई । चित्त बासना जग भ्रम सोई ॥
जाग्रत स्वप्न जीव दोउ रूपा । मन फुरि देखत दृस्य अनूपा ॥
अज्ञानी मन भ्रम उपजावत । येहि ते जीव सतत दुःख पावत ॥
लवण नृपति कर बरनेउँ हाला । भ्रम परि भये स्वपच चण्डाला ॥

दो०—येहि ते त्यागहु राम तुम जग बासना असार ।
बन्धन कर कारण जोइ होत दुःख आगार ॥११४॥

जिमि मनि फटिक बिंब सब गहई । पर नहिं काहुक रंग उभरई ॥
तुमहुँ करहु सब द्वेष न धारहु । होइ निर्बन्ध स्व कर्म सम्हारहु ॥
अस जन हित उपदेस न चाही । सोइ सदा निज रूप रहाहीं ॥
लेन देन बोलन अरु चालन । होइ हृदय अभिमान न धारन ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वश्रेष्ठ जानहु यह ज्ञाना। बाधक होत महा अभिमाना॥
बाल्मीकि तब कहेउ बहोरी। सुनत राम मति भइ अति भोरी॥
गुरुहिं बिलोकि हृदय हरषाई। आगे पुनि अस बात चलाई॥
तात अविद्या जग बस कीन्हा। मोहिं उपदेस त्याग हित दीन्हा॥
झूठइ जगत सत्य होइ भासत। माया नटी सबहि अस फांसत॥
जादूगर सोइ कँह चलि गयऊ। जेहि ते नृपहिं महा दुःख भयऊ॥

दो०—गुरुवर देही देह कर का सम्बन्ध कहाइ।
भोग सुभासुभ होत का सबहि कहउ समुझाइ॥११५॥

गुरु बसिष्ठ तब कहेउ बुझाई। देह काठ-माटी सम भाई॥
स्वप्प सदृस चित कल्पित जोई। चैत्य प्रभाउ जीव पद सोई॥
चित सत्ता सोभित येहि जानहु। चित्त फुरन प्रिय जग सब मानहु॥
कपि बालक सम चंचल भारी। फुरन रूप नाना तन धारी॥
अहंकार मन जीवहु सोई। सुख दुःख दूनउँ भोगत जोई॥
जे प्रबोध चित सान्त स्वरूपा। रहत सदा सम ते सुत भूपा॥
जगभ्रम होत अविद्या कारन। बोध भये सोइ होत निवारन॥
परि अबिवेक तात येहि देहा। भोगत भोग कर्मगत नेहा॥
अचल देह मन चंचल करई। डोलत बृक्ष पवन संचरई॥
सुख दुःख कर कलना करि सोई। भोगत इमि मन मानव होई॥

दो०—राम सुनहु नृप लवण कर तोहि बतावौं हाल।
मन के बिभ्रम ते भये जोइ स्वपच चण्डाल॥११६॥

एक दिवस विचरत बन बागा। नृप के मन बिचार अस जागा॥
नृप हरिचन्द जन्म कुल लीन्हा। नाना यज्ञ बार बहु कीन्हा॥
राजसूय मख हित चित जागा। मानस रूप करन सोइ लागा॥
पूजे मनहिं अग्नि ऋषि देवा। पवन आदि कर कीन्ही सेवा॥
यज्ञ कर्म बिधिवत सब कीन्हा। मानस रूप दान बहु दीन्हा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सवा वर्ष लगि यज्ञ रचावा । मन ही ते तेहिकर फल पावा ।।
येहि ते तोहि बतावौं रामा । मन ही ते सब पूरत कामा ।।
भोगत फल मन ही सब भाई । जस चित तइसइ पुरुष सुहाई ।।
पूरित आत्म तत्व ते जोई । तेहि कर कारज पूरित होई ।।
जे जानत आपहिं को देहा । दुःख पावत सोइ नहिं सन्देहा ।।

दो०–प्रिय बिवेक रवि के उये सुख सरसिज बिकसाहिं ।
आत्मतत्व के ज्ञान ते दुःख न होत कोउ ताहि ।।२१९।।

अस कहि गुरु बोले मृदु बानी । साम्बरीक कर सुनहु कहानी ।।
मैं तहँ रहेउँ सभा जब आवा । तिन्हहिं प्रथम अस कहि समुझावा ।।
राजसूय जे यज्ञ रचावत । द्वादस वर्ष आपदा पावत ।।
येहि ते संकट परे नृपाला । सक्र दूत आवा तेहि काला ।।
मन ते जिमि सोइ यज्ञ रचावा । तिमि संकटउ मनहिं ते पावा ।।
दूत रूप जादूगर जोई । राम न रहा अपर कोउ सोई ।।
संकट रोपि स्वर्ग सोइ गयऊ । तात कहउं सोइ जो कछु भयऊ ।।
भोगत करत मनहिं सब भाई । जस संकल्प फुरत तस आई ।।
जीकर वाढ़त कंटक बढ़ई । मन के फुरे बिपति घन चढ़ई ।।

दो०–राम चित्त हिम गलइ तब होत बिवेक प्रताप ।
नहिं संसय तब मिलत है परम सार सोइ आप ।।२२०।।

जग आडंबर कारन जोई । तात अविद्या जानहु सोई ।।
वृक्ष बिटप तरु एकहि जइसे । जीव अविद्या बुधि सब तइसे ।।
तीन बिना बिवेक नहिं होई । जस सँकल्क लखत तिमि सोई ।।
करइ प्रयास मिलइ तब सोई । हठ से तात डिगइ नहिं जोई ।।
हिम जल परे जलइ होइ जाई । आत्मबोध तिमि सबहि मिलाई ।।
राम बीच जब बात चलाई । चपल बृत्ति कइसे थिर पाई ।।
गुरु बसिष्ठ तब कहि समुझावा । मन उपसम हित जुगुति बतावा ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

घोटक होत सवार अधीना। मन करि निज बस राखु प्रवीना॥
ब्रह्म ते सबहि भूत उपजाहीं। सात्विक राजस तमस कहाहीं॥
ब्रह्मा रूप जानु मन भाई। जस संकल्पइ तस दरसाई॥

दो०—भव आडंबर जन्म अरु मरन सुखादिक जोइ।
सबहि संसरन तात येहि मन के कल्पे होइ॥२२१॥ क

कोटि कोटि ब्रह्मण्ड इमि उपजि उपजि भये लीन।
वर्तमान केतिक अबहिं होइहैं बहुत प्रवीन॥२२१॥ ख

अब जेहि भांति मुक्त सब होहीं। सुनहु राम समुझावौं तोहीं॥
सुद्ध ब्रह्म मन सत्ता जागी। नभ पुनि पवन प्रगट भइ आगी॥
जल पुनि धरा भई दृढ़ पाये। पंचभूत चित सक्ति जगाये॥
भूमि तेज अरु पवन मिलाई। धान्य रूप होइ तब प्रकटाई॥
बीज रुधिर तेहि खाये होई। मनुज जन्म कर कारन जोई॥
बेद पढ़त गुरु ते गहि ज्ञाना। सुभ अरु असुभ बिचार जगाना॥
निर्मल उर होइ राजत जोई। सप्त भूमिका जगमग होई॥
सप्त भूमिका का यह होई। कहेउ राम गुरु बरनउ सोई॥
गुरु बोले प्रिय जानउ सोई। ज्ञान अज्ञान दोउ मँह होई॥
तिन्ह मँह विपुल अवस्था राजत। गनि नहिं जाहिं असंख्य बिराजत॥
आतम तरु पुरुषार्थ बसन्ता। जेहि मँह उभय बेलि प्रगटन्ता॥
सुभ अरु असुभ कहावत सोई। पुरुषारथ रस ते फल होई॥

दो०—राम सुद्ध चिन्मात्र मँह चैत्य दृस्य जो होइ।
फुरन न जाकर होत है ज्ञान कहावत सोइ॥२२२॥

जगत पदारथ मगन जे होई। तात होत अज्ञानी सोई॥
जाग्रत त्यागि सुषुप्ति मिलाई। दोउ मध्य सुचि सत्ता छाई॥
सोइ स्वरूप कर दसा बखानी। तात सिला सम स्थित प्रानी॥
मैं तुम आदि फुरन नहिं होई। भेद बिकार न जड़ता कोई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सोइ अद्वैत्य चिन्मात्र सुहावा । आतम स्वरूप दिव्य सोइ भावा ।।
जाग्रत बीज सो जाग्रत होई । महाजाग्रत स्वप्न समोई ।।
जाग्रत स्वप्न स्वप्न मँह जाग्रत । प्रिय सुषुप्त स्थिति ये सातक ।।
इन मँह अपर अवस्था होई । तउ जोइ प्रमुख कहा मैं सोई ।।
आदि जो सुद्ध असब्द चेतना । अहं भविष्यत् जीव सो बना ।।
बीज रूप सबकर वह होई । बीज जाग्रत जानहु सोई ।।
तेहि मँह अहं प्रतीति दृढ़ाई । जन्म जन्म भासत जोइ आई ।।
जाग्रत नाम ताहि कर जानहु । याहि द्वितीय अवस्था मानहु ।।

दो०—मैं अपरादिक सब्द गहि जन्मान्तर फुरि जाइ ।
मनोराज दृढ़ भासई जाग्रत स्वप्न कहाइ ।।२२२।।

मन कर फुरन नीद मँह होई । स्वप्न भूमिका बरनत सोई ।।
स्वप्न काल दृढ़ होइ प्रतीती । दीर्घ काल मानो गये बीती ।।
महाजाग्रत बरनत सोई । षष्ठी दसा राम यह होई ।।
येहि सब कर जब होइ अभावा । तात सुषुप्ति ताहि बतरावा ।।
गहन घास बृक्ष जग जोई । याहि अवस्था राजत सोई ।।
जिन्हहिं मोह कर घनता जानहु । जीव भ्रमत जिन्हमँह परि मानहु ।।
कीचहि जाइ सतत जल जइसे । जीव मोह बस भरमत तइसे ।।
मुक्त होउ येहि ते तुम ताता । जाते तोर बनइ सब बाता ।।
आत्मबिचार बिमल मन होई । बोध होत भ्रम नासत सोई ।।

दो०—गुरु बोले अब राम सुनु सप्त भूमिका ज्ञान ।
चित्त अवस्था होत जोइ करत सदा कल्यान ।।२२४।।

जेहिकर ज्ञान प्राप्त जेहि होई । मोह कीच पुनि परइ न सोई ।।
नाना मत नाना बिधि जानत । भाँति भाँति कहि लोग बखानत ।।
आपन अभिमत कहौं बुझाई । सुगम बोध मारग यह भाई ।।
ज्ञान स्वरूप जागरण नामा । सप्त भूमिका हेतु बखाना ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

येहि ते परे मुक्त जे होहीं। तिन्हकर भेद बतावौं तोहीं॥
आपहि मूढ़ बिचारत जोई। सन्त सास्त्र मँह रुचि जौ होई॥
प्रथम मुक्त ते जानहु प्रानी। याहि सुभेच्छा कहत बखानी॥
सत संगति मन बिषय बिरागा। गहइ सत्य करि असतहिं त्यागा॥
सोइ बिचारना रूप सुहाई। कोटि द्वितीय जानु येहि भाई॥
कहत तृतीय भूमिका सोई। तत्वाभ्यास करइ जउ कोई॥

दो०—तनुमासा तेहि कहत हैं जागइ बिषय बिराग।
इच्छा अउर बिचार मँह सुद्ध भाव जब जाग॥२२३॥

होइ उक्त तीनिहुँ कर साधन। श्रवन मनन साधइ निदिध्यासन॥
बिषय जगत ते होत बिरागा। सत्वात्पत्ति चतुर्थ विभागा॥
चारिउ उक्त भूमिका कर फल। सुद्ध विभूति होत जोइ अविचल॥
तेहि मँह असंसक्त रहाई। पंचम असंसक्ति कहि जाई॥
छठईं होत भूमिका सोई। दृस्य बिस्मरण जब प्रिय होई॥
सबहि पदार्थ तुच्छ होइ भासइ। नाम वस्तु भावनी प्रकासइ॥
राम होत येहिकर अभ्यासा। कलना भेद अभाव बिकासा॥
दृढ़ परिणाम स्वरूपहिं होई। सप्तम कहत तुरीया सोई॥
षट भूमिका एकता पाई। नाम तुरीया सोइ कहि जाई॥
राम तुरीय कहत पद जोई। जानु बिदेह मुक्त तुम सोई॥

दो०—तीनि भूमिका जाग्रतहि चौथी तत्वहिं ज्ञान।
जीवन मुक्ती पंच षट सन्त तुरीय निदान॥२२४॥

बड़े भाग सप्तम पद पावत। सान्त रूप निर्बन्ध कहावत॥
ताहि न क्रिया बोध कछु होई। होइ सुषुप्त वत बिचरत जोई॥
आत्मज्ञान जेहि के उर जागा। मृगतृष्णा सम जग तेहि लागा॥
होइ बिरक्त जे येहि पथ आवा। मोह समुद्र लांघि नहि पावा॥
पावा नाहि पूर्ण पद जोई। तदपि साधना में रत होई॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोउ भूमिका मँह जे लीना । मिलिहि आतमपद तिन्हहिं प्रवीना ।।
धन्य सो पुरुष सूरमा सोई । इन्द्रिय सत्रु पछारा जोई ।।
कोउ एक जितेउ भूमिका जोई । बन्दनीय प्रिय जानहु सोई ।।
भव बिभूति तृणवत तेहि लागत । साधक जोइ परम पद राजत ।।
अस कहि गुरु आगे समुझावा । अहंकार कर प्रस्न उठावा ।।

दो०–भूषण फुरि जिमि स्वर्ण ते स्वर्ण भाव बिसराइ ।
आपुहिं को भूषण कहै अहं रहै तिमि छाइ ।।२२५।। क
चित्त संवेदन रूप फूरि अहंकार बस होइ ।
अहं अस्मि अस मानि के जग में बिचरत सोइ ।।२२५।। ख

राम कहेउ गुरु समुझि न आवा । कहु कस होत अहं कर भावा ।।
तब बसिष्ठ बोले समुझाई । अहं असत्य अन्हार दृढ़ाई ।।
चमत्कार आतमा कर ताता । नाहिं द्वैत कर कवनिउ बाता ।।
अधः ऊर्ध्व सागर जिमि पानी । परम तत्व नहिं अउर कहानी ।।
आतमरूप जानहु जग जोई । भ्रम नानात्व प्रकासत सोई ।।
आतम पूर्ण आप मँह राजत । जिमि अकास मँह गगन बिराजत ।।
ब्रह्म माहिं तिमि ब्रह्म रहाई । तइसइ सत् मँह साँचहु भाई ।।
जिमि प्रतिबिम्ब मुकुर मँह होई । आतम माहिं जगत यह जोई ।।

दो०–अग्नि बिचार जगाइ प्रिय जारहु भ्रम अभिमान ।
तबहिं सान्त पद होइ तोहिं प्रगटइ ज्ञान बिहान ।।२२६।।

कथा लवण कर जोइ सुनावा । एक दिवस तेहि के मन आवा ।।
भ्रम स्वरूप मोहिं भासेउ जोई । सत्य रूप मैं देखेउँ सोई ।।
लखौं फेरि अस इच्छा आई । सेन संग लेइ कीन्ह चढ़ाई ।।
लाँघि विन्ध्य गिरि सागर तीरा । सोइ सब देखत भयउ अधीरा ।।
लखेउ भ्रमहिं सोइ प्रकट लखाई । अस अचरज नृप मति चकराई ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आगे जाइ दग्ध तरु पावा। झुलसी धरा अकाल प्रभावा॥
बान्धव कुल कर सुनी कहानी। जेहि बिधि भई उहाँ सब हानी॥
कछुक दूरि आगे पुनि जाई। रोवत परी सासु निज पाई॥
हा सुत पौत्र हाय जामाता। काह कीन्ह तुम हाय बिधाता॥
कन्या सुघर सूखि भई काँटा। भयउ मोर घर बारह बाटा॥

दो०—लवण नृपति अति निकट होइ पूछेउ धीर धराइ।
केहि के हित बिलपत तुम नैनन नीर बहाइ॥२२७॥ क
चाण्डाली बोली नृपति का बरनउँ निज हाल।
परि अकाल कुल बन्धु जन गये काल के गाल॥२२७॥ ख

पुत्र पौत्र भर्त्ता जामाता। बान्धव तोरि गये सब नाता॥
जल बिनु मीन नदी बिनु बारी। तइसइ गति नृप भई हमारी॥
सून लगै प्रभु जीवन सारा। गिरा सीस पर टूटि पहारा॥
नृपति चकित सुनि ताकर बानी। रोइ रोइ सोइ बिपति बखानी॥
यथा जोग नृप धन तेहि दीन्हा। निज मन्दिर पयान तब कीन्हा॥
बीती राति सभा जब आवा। तब मोहिं ते अस प्रश्न चलावा॥
अस सपना प्रत्यक्ष किमि देखा। अचरज कर करि जात न लेखा॥
तब मैं कहेउँ ताहि समुझाई। तात अविद्या मति भरमाई॥
स्वप्न माहि परगट दरसाई। घट ते पट पट घट होइ जाई॥
स्वप्न मृत्यु जब मूर्च्छा आये। बुद्धि विपर्यय तब होइ जाये॥

दो०—चित्त बासना होत जोइ फुरत संवेदन सोइ।
पतन स्वरूपहि के भये भांति भांति भ्रम होइ॥२२८॥

गुरु बसिष्ठ तब कहेउ प्रचारी। राम नाहि अचरज यह भारी।
एक अपर नृप कर अस हाला। फुरी लवण के चित तेहि काला॥
तब सोइ जानेउ आपनि करनी। जेहि कर कथा पूर्व मैं बरनी॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एकइ भ्रम बहुतन के होई। रज्जु सर्प करि जानहिं जोई ।।
जस जस जहँ संकल्प दृढ़ाई। तइसइ रूप होइ दरसाई ।।
सब पदार्थ संवेदन रूपा। तीनहु काल सहित सुत भूपा ।।
रेत माहिं जइसे प्रिय तेला। आतम माहिं अविद्या खेला ।।
देह अविद्या रूप सुहाई। कबहुँ न ज्ञानवान भरमाई ।।
तम प्रकास नहिं संग रहाहीं। आतमा देह संग तिमि नाहीं ।।
जानत जग जे ब्रह्म स्वरूपा। परत नाहिं सपनेहुँ भव कूपा ।।

दो०–तुमहू राम सचेत होइ निर्मल करहु बिचार।
जल ते अग्नि न होत है नहिं पाहन जलधार ।।२२९।।

चेतन सत्ता जे विचराई। हरष विषाद तिन्हहि नहिं भाई ।।
जिमि पथ महँ बहु दृष्य लखाई। पथिक नाहि तिन्ह महँ भरमाई ।।
राग द्वेष तेहि कछु नहिं होई। आपन लक्ष्य न भूलत सोई ।।
त्यागहु चित्त फुरन नहिं होई। असत रूप दरसत जग जोई ।।
मनन भाव मूरख मन जागत। धिक् जेहि गगन माहिं वन भासत ।।
प्रिय भूमिका प्राप्त जो होई। सुनहु ध्यान धरि बरनउँ सोई ।।
का ग्रहणीय त्याग हित काही। सन्त शास्त्र मत प्रकटत जाही ।।
अस कर्त्तव्य बुद्धि जब आवै। तात सुभेच्छा सोइ कहावै।
असुभ त्यागि सुभ हित रुचि होई। शास्त्र विचार कहत हैं सोई ।।
लागइ मिथ्या जगत बासना। सत्य माहिं स्थित चित अपना।
तनुमानसा बखानत ताही। कहत तृतीय भूमिका जाही ।।
जग बासना छीन होइ भासत। दृढ़ अभ्यास विराग प्रकासत ।।
सम्यक ज्ञान जगइ मन माहीं। आतमा प्रकट रूप दरसाहीं ।।
सत्वापत्ति कहत हैं सोई। पंचम सुनहु तात जिमि होई ।।
रहत स्वरूप माहिं नित तत्पर। मोह न रंचक होइ सिद्धि कर ।।
कर्म फलहिं जे नाहिं बन्हाई। असंसक्त जानु तेहि भाई ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दोहा–कर्म करत प्रारब्ध कहि चित्त फुरन नहिं होइ ।
अर्द्ध सुषुप्त रहत सोइ वस्तु अभावनि जोइ ॥ २३० ॥ क
स्वाभाविक कछु काल जउ रमइ चित्त येहि रूप ।
होत पदार्थ अभाव दृढ़ सोइ तुरीय सुत भूप ॥ २३० ॥ ख

अस अभ्यास प्रताप न गोई । जीवन्मुक्त कहावत सोई ॥
इष्ट पाइ नहिं हर्षित होई । नहि अनिष्ट परि दुःख तेहि कोई ॥
गत सन्देह उच्च पद पावत । साधक सोई सफल कहावत ॥
ज्ञात ज्ञेय राम तुम होऊ । ज्ञान जोग तुम जानेउ सोऊ ॥
तनुता लही पदार्थ भावना । भई निरामय तोर आतमा ॥
भये विदेह सोक नहिं होई । आत्म तत्व तुम स्थित सोई ॥
सुद्ध सुधा कर होत न नासा । फूटे घट न नसै घटकासा ॥
सब्द परस रस पंचक जोई । तुम्ह ते भिन्न नाहिं कछु कोई ॥
तात सबहि यह रूप तुम्हारा । भ्रम तजि दृढ़ होइ करउ विचारा ॥

दोहा–भासत जोइ जग द्वैत होइ प्रगटेउ चित्त दृढ़ाइ ।
सात्विक राजस तमस होइ तीनि रूप दरसाइ ॥
तीनहु के उपसम भये बिनु न होइ कल्यान ।
नष्ट बासना भये बिनु नाहिं कर्म अवसान ॥ २३१ ॥

चित्त संसरन कहत बासना । माया रूप करम जग अपना ॥
तेहि के नसे सान्त सब होई । घटी यंत्र सम भरमत जोई ॥
राम विचार सास्त्र तुम धारहु । विघ्न बासना काटि निवारहु ॥
जीव अविद्या जानत जोई । परत नाहिं भ्रम फन्दहिं सोई ॥
उपजि भोगि सोइ महँ मिलिजाई । अस असार संसार कहाई ॥
सिव अनन्त अप्रमेय सुखाकर । भूत तत्व सब उतपति ताकर ॥
जल ते लहर अग्नि ते तापा । ब्रह्म ते दरसत जगत प्रतापा ॥
तेहि महँ स्थित सब सोइ रूपा । आत्मा सबहि ब्रह्म सुत भूपा ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेहि जाने जग जानत भाई। जग जाने सोइ नाहिं जनाई ।।

दोहा-सोइ अव्यक्त अनामय सोइ रूप निर्वान।
ब्रह्म आतमा सास्त्र कहि तेहि कर करत बखान ।। २३२ ।।

तात न तेहि कर संज्ञा कोई। मिलन वियोग द्वेष नहिं होई ।।
चेतन सुद्ध एक अबिनासी। संवित अभिनव रूप प्रकासी ।।
जग इमि तेहि महँ राजत भाई। जिमि प्रतिबिंब मुकुर दरसाई ।।
अन्तर्बाह्य रूप होइ राजत। द्वैत भाव नहि कछु तहँ भासत ।।
निर्विकल्प वपु रहित अकारा। ताहि न लज्जा मोह बिकारा ।।
मूरख परत मोह के जाला। तुम चेतन अखण्ड प्रतिपाला ।।
चित्त संवेदन सत्ता जोई। रबि पथ रोकि सकत नहिं कोई ।।
सोइ पुरुष नहिं पुरुष सरीरा। जानहु तथ्य इहइ मतिधीरा ।।

दोहा-तात अग्यानी सोइ जो करइ देह अभिमान।
प्रबुध न परत बिकार महँ सुख-दुःख दोउ नहिं जान ।। २३३ ।।

देह नसे आतमा न नासत। कमल नसे नहिं भ्रमर बिनासत ।।
वृथा सोक तुम्हरे मन होई। जगत असत्य रूप यह जोई ।।
अनइच्छित छबि मुकुर लखाई। तिमि आतमा माहिं जग भाई ।।
प्रथम आतमा ते मन होई। तात जगत सब बिरचत सोई ।।
सत्ता आतम बिराजत सोई। सून गगन जिमि सूनहि होई ।।
सून्याकास जगत जिमि भासत। तिमि अकास नीलिमा प्रकासत ।।
येहि ते सूनहि जानहु दोऊ। सब संकल्प साँच नहिं कोऊ ।।
चित्त नसत संकल्प नसाये। जग कुहास आपहिं मिटि जाये ।।
निर्मल सदा आतमा भासत। चेतन सत्ता आप प्रकासत ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दोहा–तेहि असपन्द फुरन भये ब्रह्मा प्रगटे आइ।
सोइ बिरचेउ संसार यह मूढ़हि साँच जनाइ ॥ २३४ ॥

जिमि तरंग उठि सिन्धु ते सिन्धु माँहि मिलि जाइ।
तिमि आत्मा महँ उपजि जग ताही माँहि समाइ॥

सतत मनन साधन निरत जे येहि ग्रन्थ विचार।
सहज होत 'जगदीश' ते अगम सिन्धु भव पार॥

-卐-

वसिष्ठरामसंवाद योगोरामायणात्मकः।
भाषया जगदीशस्य भूतलेभातुसर्वदा॥

–प्रो. रामाधीन चतुर्वेदी

(तृतीय प्रकरण समाप्त)

[प्रथम भाग पूर्ण]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2.

RajGuruMath, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon